चन्द्रकान्ता सन्तति

हैं या इसके पहले इन लोगो मे क्या-क्या बातें हो चुकी हैं, मगर इस समय तो ये सब लोग कई ऐसे मामलो पर बातचीत कर रहे हैं जिनका पूरा होना बहुत जरूरी समझा जाता है।

बात-करते-करते एक दफे कुछ रुक कर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने जीतसिंह से कहा, "इस राय मे गोपालसिंह का भी शरीक होना उचित जान पडता है, किसी को भेजकर उन्हे बुलाना चाहिए।"

"जो आज्ञा" कहकर जीतसिंह उठे और कमरे के बाहर जाकर राजा गोपालसिंह को बुलाने के लिए चोबदार को हुक्म देने के बाद पुन अपने ठिकाने बैठ कर बातचीत करने लगे।

जीतसिंह—इसमे तो कोई शक नही कि भूतनाथ आदमी चालाक और पूरे दर्जे का ऐयार है मगर उसके दुश्मन लोग उस पर बेतरह टूट पडे है और चाहते हैं कि जिस तरह बने उसे बर्बाद कर दें और इसीलिए उसके पुराने ऐबो को उधेड कर तरह-तरह की तकलीफ दे रहे है।

सुरेन्द्रसिंह—ठीक है, मगर हमारे साथ भूतनाथ ने सिवाय एक दफे चोरी करने के और कौन-सी बुराई की है जिसके लिए उसे हम सजा दे या बुरा कहे?

जीतसिंह—कुछ भी नही, और वह चोरी भी उसने किसी बुरी नीयत से नही की थी। इस विषय मे नानक ने जो कुछ कहा था, महाराज सुन ही चुके है।

सुरेन्द्रसिंह—हाँ मुझे याद है, और उसने हम लोगो पर अहसान भी बहुत किये हैं बल्कि यों कहना चाहिए कि उसी की बदौलत कमलिनी, किशोरी, लक्ष्मीदेवी और इन्दिरा वगैरह की जानें बची और गोपालसिंह को भी उसकी मदद से बहुत फायदा पहुँचा है। इन्ही सब बातो को सोच के तो देवीसिंह ने उसे अपना दोस्त बना लिया है, मगर साथ ही इसके इस बात को भी समझ रखना चाहिए कि जब तक भूतनाथ का मामला तय नही हो जायगा तब तक लोग उसके ऐबो को खोद-खोद कर निकाला ही करेंगे और तरह-तरह की बातें गढते रहेंगे।

एक नकाबपोश—सो तो ठीक ही है, मगर सच पूछिए तो भूतनाथ का मुकदमा ही कैसा और मामला ही क्या? मुकदमा तो असल मे नकली बलभद्रसिंह का है जिसने इतना बडा कसूर करने पर भी भूतनाथ पर इल्जाम लगाया है। उस पीतल वाली सन्दूकडी से तो हम लोगो को कोई मतलब ही नही, हाँ, बाकी रह गया चिट्ठियो वाला मुट्ठा जिसके पढने से भूतनाथ लक्ष्मीदेवी का कसूरवार मालूम होता है, सो उसका जवाब भूतनाथ काफी तौर पर दे देगा और साबित कर देगा कि वे चिट्ठियाँ उसके हाथ की लिखी हुई होने पर भी वह कसूरवार नहीं है और वास्तव मे वह बलभद्रसिंह का दोस्त है, दुश्मन नही।

सुरेन्द्रसिंह—(लम्बी साँस लेकर) ओफ-ओह, इस थोडे से जमाने मे कैसे-कैसे उलटफेर हो गए! बेचारे गोपालसिंह के साथ कैसी-कैसी धोखेबाजी की गई! इन बातो पर जब हमारा ध्यान जाता है तो मारे क्रोध के बुरा हाल हो जाता है।

जीतसिंह—ठीक है, मगर खैर अब इन बातो पर क्रोध करने की जगह नही रही

मिलाने की जरूरत नही रही। आप हर तरह का बन्दोवस्त शुरू कर दें और जहाँ-जहाँ न्यौता भेजना हो भिजवा दें।

जीतसिंह—जो आज्ञा। अच्छा, अब भूतनाथ के विषय मे कुछ तय हो जाना चाहिए।

गोपालसिंह—हम लोगो मे से कौन सा आदमी ऐसा है जो भूतनाथ के अहसानो के बोझ से दबा हुआ न हो? वाकी रही यह वात कि जयपाल ने भूतनाथ के हाथ की चिट्ठियाँ कमलिनी और लक्ष्मीदेवी को दिखाकर भूतनाथ को दोपी ठहराया है, सो वास्तव मे भूतनाथ दोपी नही है और इस वात का सबूत भी वह दे देगा।

सुरेन्द्रसिंह—हाँ, तुमको तो इन सब वातो का सच्चा हाल जरूर ही मालूम होगा क्योकि तुम्ही ने कृष्ण जिन्न वनकर उसकी सहायता की थी। अगर वास्तव मे वह दोपी होता तो तुम ऐसा करते ही क्यो?

गोपालसिंह—वेशक यही वात है। इन्दिरा का किस्सा आपको मालूम ही है क्यो कि मैंने आपको लिख भेजा था और आशा है कि आपको वे वाते याद होगी?

सुरेन्द्रसिंह—हाँ मुझे वखूवी याद है, वेशक उस जमाने मे भूतनाथ ने तुम लोगो की वडी सहायता की थी वल्कि इसी सवव से उसमे और दरोगा मे दुश्मनी हो गई थी, अत कब हो सकता है कि भूतनाथ लक्ष्मीदेवी के साथ दगा करता जो कि दरोगा से दोस्ती और वलभद्रसिंह से दुश्मनी किए विना हो ही नही सकता था। लेकिन आखिर यह वात क्या है, वे चिट्ठियाँ भूतनाथ की लिखी है या नही? फिर, इस जगह एक वात का और भी खयाल होता है वह यह कि उस मुट्ठे मे दोनो तरफ की चिट्ठियाँ मिली हुई हैं अर्थात् जो रघुवरसिंह ने भेजी वे भी है और जो रघुवर के नाम आई थी वे भी हैं।

गोपालसिंह—जी हाँ और यह वात भी बहुत से शको को दूर करती है। असल यह है कि वे सब चिट्ठियाँ भूतनाथ के हाथ की नकल की हुई हैं। वह रघुवरसिंह, जो दारोगा का दोस्त था और जमानिया मे रहता था, उसी की यह सब कार्रवाई है और यह सब विप उसी के वोये हुए है। वह वहुत जगह इशारे के तौर पर अपना नाम भूतनाथ लिखा करता था। आपने इन्दिरा के हाल मे पढा होगा कि भूतनाथ वेनीसिंह वनकर वहुत दिनो तक रघुवरसिंह के यहाँ रह चुका है और उन दिनो यही भूतनाथ हेलासिंह के यहाँ रघुवरसिंह का खत लेकर आया-जाया करता था।

सुरेन्द्रसिंह—ठीक है, मुझे याद है।

गोपालसिंह—वस ये सब चिट्ठियाँ उन्ही चिट्ठियो की नकलें हैं। भूतनाथ ने मौके पर दुश्मनो को कायल करने के लिए उन चिट्ठियो की नकल कर ली थी और कुछ उनके घर से भी चुराई थी। वस, भूतनाथ की गलती या वेईमानी जो कुछ समझिए यही हुई कि उस समय कुछ नगदी फायदे के लिए उसने इस मामले को दवाये रक्खा और उसी वक्त मुझ पर प्रकट न कर दिया। रिश्वत लेकर दारोगा को छोड देना और कलमदान के भेद को छिपा रखना भी भूतनाथ के ऊपर धब्बा लगाता है क्योंकि अगर ऐसा न होता तो मुझे यह वुरा दिन देखना नसीव न होता और इन्ही भूलों पर आज भूतनाथ पछताता और अफसोस करता है। मगर आखिर मे भूतनाथ ने इन वातो का वदला भी ऐसा अदा

मे जाकर डेरा डाला,[1] और छिपे-छिपे कमला और कामिनी की मदद करने लगा तो उन्ही दिनो उस तिलिस्मी तहखाने मे जाकर भूतनाथ ने शेरसिंह से एक तौर पर (बहुत दिनो तक गायव रहने के बाद) नई मुलाकात की, मगर धर्मात्मा शेरसिंह को यह बात बहुत बुरी मालूम हुई···

गोपालसिंह इतना कह ही रहे थे कि भूतनाथ और इन्द्रदेव कमरे के अन्दर आ पहुँचे और सलाम करके आज्ञानुसार जीतसिंह के पास बैठ गये।

जीतसिंह—(भूतनाथ और इन्द्रदेव से) आप लोग बहुत जल्द आ गये।

इन्द्रदेव—हम दोनो इसी जगह बरामदे के नीचे बाग मे टहल रहे थे, इसलिए चोवदार नीचे उतरने के साथ ही हम लोगो से जा मिला।

जीतसिंह—खैर, (गोपालसिंह से) हाँ तब ?

गोपालसिंह—अपनी नेकनामी में धब्बा लगने और बदनाम होने के डर से भूतनाथ की सूरत देखना भी शेरसिंह पसन्द नही करता था, बल्कि उसका तो यही बयान है कि 'मुझे भूतनाथ से मिलने की आशा ही न थी और मैं समझे हुए था कि अपने दोषो से लज्जित होकर भूतनाथ ने जान दे दी।' मगर जिस दिन उसने उस तहखाने मे भूतनाथ की सूरत देखी तो काँप उठा। उसने भूतनाथ की बहुत लानत-मलामत करने के बाद कहा कि "अब तुम हम लोगो को अपना मुँह मत दिखाओ और हमारी जान और आबरू पर दया करके किसी दूसरे देश मे चले जाओ।" मगर भूतनाथ ने इस बात को मंजूर न किया और यह कहकर अपने भाई से विदा हुआ कि चुपचाप बैठे देखते रहो कि मैं किस तरह अपने पुराने परिचितो मे प्रकट होकर खास राजा वीरेन्द्रसिंह का ऐयार बनता हूँ। बस इसके बाद भूतनाथ कमलिनी से जा मिला और जी-जान से उसकी मदद करने लगा। मगर शेरसिंह को यह बात पसन्द न आई। यद्यपि कुछ दिनो तक शेरसिंह ने कमलिनी तथा हम लोगो का साथ दिया, मगर डरते-डरते। आखिर एक दिन शेरसिंह ने एकान्त मे मुझसे मुलाकात की और अपने दिल का हाल तथा मेरे विषय मे जो कुछ जानता था, कहने के बाद बोला, "यह सब हाल कुछ तो मुझे अपने भाई भूतनाथ की जुबानी मालूम हुआ और कुछ रोहतासगढ को इस्तीफा देने के बाद तहकीकात करने से मालूम हुआ, मगर इस बात की खबर हम दोनो भाइयो मे से किसी को भी न थी कि आपको मायारानी ने कैद कर रक्खा है। खैर, अब ईश्वर की कृपा से आप छूट गये है इसलिए आपके सम्बन्ध मे जो कुछ मुझे मालूम है आपसे कह दिया, जिसमे आप दुश्मनो से अच्छी तरह बदला ले सकें। अब मैं आगे अपना मुँह किसी को दिखाना नही चाहता क्योकि मेरा भाई भूतनाथ जिसे मैं मरा हुआ समझता था प्रकट हो गया और न मालूम क्या-क्या किया चाहता है। कही ऐसा न हो कि गेहूँ के साथ घुन भी पिस जाय, अत अब मैं जहाँ भागते बनेगा भाग जाऊँगा। हाँ, अगर भूतनाथ जो कि बडा जिद्दी और उत्साही है किसी तरह नेकनामी के साथ राजा वीरेन्द्रसिंह का ऐयार बन गया तो पुन प्रकट हो जाऊँगा।" इतना कहकर शेरसिंह न मालूम कहाँ चला गया। मैंने बहुत

1. देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, तीसरा भाग, तेरहवाँ बयान।

मैंने जयपाल को इस वात की कसम भी खिला दी थी कि अब वह लक्ष्मीदेवी और वलभद्रसिंह से किसी तरह की बुराई न करेगा। मगर अफसोस, उसने (जयपाल ने) मेरे साथ दगा करके मुझे धोखे मे डाल दिया और वह काम कर गुजरा जो किया चाहता था। इसी तरह मुझे वलभद्रसिंह के बारे मे भी धोखा हुआ। दुश्मनो ने उन्हे कैद कर लिया और मुझे हर तरह से विश्वास दिला दिया कि वलभद्रसिंह मर गए। लक्ष्मीदेवी के बारे में जो कुछ चालाकी दारोगा ने की, उसका भी मुझे कुछ पता न लगा और न मैं कई वर्षों तक लक्ष्मीदेवी की सूरत ही देख सका कि पहचान लेता। बहुत दिनो के वाद जव मैंने नकली लक्ष्मीदेवी को देखा भी तो मुझे किसी भी तरह का शक न हुआ, क्योंकि लडकपन की सूरत और अधेडपन की सूरत मे वहुत वडा फर्क पड जाता है। इसके अतिरिक्त जिन दिनो मैंने नकली लक्ष्मीदेवी को देखा था, उस समय उनकी दोनो वहिनें अर्थात् श्यामा (कमलिनी) और लाडिली भी उसके साथ ही रहती थी, जव वे ही दोनो उसकी वहन होकर धोखें मे पड गईं तो मेरी कौन गिनती है ?

बहुत दिनो के वाद जव यह कागज का मुट्ठा मेरे यहाँ से चोरी हो गया, तव मैं घवराया और डरा कि समय पर चोरी गया हुआ वह मुट्ठा मुझको मुजरिम बना देगा, और आखिर ऐसा ही हुआ। दुष्टो ने वही कागजो का मुट्ठा कैदखाने मे वलभद्रसिंह को दिखाकर मेरी-तरफ से उनका दिल फेर दिया और तमाम दोष मेरे ही सिर पर थोपा। इसके वाद और भी कई वर्ष बीत जाने पर जव राजा गोपालसिंह के मरने की खवर उडी और इस वात मे किसी को किसी तरह का शक न रहा, तव धीरे-धीरे मुझे दारोगा और जयपाल की शैतानी का कुछ पता लगा, मगर फिर मैंने जान-बूझकर तरह दे दिया और सोचा कि अव उन वातो को खोदने से फायदा ही क्या, जव कि खुद राजा गोपालसिंह ही इस दुनिया मे उठ गये तो मैं किसके लिए इन वखेडो को उठाऊँ ? (हाथ जोडकर) वेशक यही मेरा कसूर है और इसीलिए मेरा भाई भी रज है। हाँ इधर जब कि मैंने देखा कि अव श्रीमान् राजा वीरेन्द्रसिंह का दौरा-दौरा है और कमलिनी भी उस घर से निकल खडी हुई तब मैंने भी सिर उठाया और अवकी दफे नेकनामी के साथ नाम पैदा करने का इरादा कर लिया। इस वीच मे मुझ पर वडी आफतें आईं, मेरे मालिक रणधीरसिंह भी मुझसे विगड गये और मैं अपना काला मुँह लेकर दुनिया से किनारे हो वैठा तथा अपने को मरा हुआ मशहूर कर दिया अव कहाँ तक वयान करूँ, वात तो यह है कि मैं सिर से पैर तक अपने को कसूरवार समझकर ही महाराजा की शरण मे आया हूँ।

जीतसिंह—तुम्हारी पिछली कार्रवाई का वहुत-सा हाल महाराज को मालूम हो चुका है, उस जमाने मे इन्दिरा को वचाने के लिए जो कार्रवाइयाँ तुमने की थी उनसे महाराज प्रसन्न है, खास करके इसलिए कि तुम्हारे हरएक काम मे दवगता का हिस्सा ज्यादा था और तुम सच्चे दिल मे इन्द्रदेव के साथ दोस्ती का हक अदा कर रहे थे, मगर इस जगह एक वात का वडा ताज्जुव है।

भूतनाथ—वह क्या ?

जीतसिंह—इन्दिरा के वारे मे जो-जो काम तुमने किये थे वे इन्द्रदेव से तो तुमने

जरूर ही रहे होंगे ?

भूतनाथ —बेशक जो कुछ काम मैं करता था वह हमेशा ही इन्द्रदेव से पूरा-पूरा कह देता था ।

जीतसिंह—तो फिर इन्द्रदेव ने दारोगा को क्यो छोड दिया ? सजा देना तो दूर रहा, इन्होंने गुरुभाई का नाता तक नही तोडा ।

भूतनाथ—(एक लम्बी साँस लेकर और उँगली से इन्द्रदेव की तरफ इशारा करके) इनके ऐसा भी बहादुर और मुरौवत का आदमी मैंने दुनिया मे नही देखा । इनके साथ जो कुछ [illegible] मैंने किया था उसका बदला भी अपने एक ही काम से इन्होंने ऐसा अदा किया कि जो इनके सिवाय दूसरा कर ही नही सकता था और जिससे मैं जन्म भर इनके सामने सिर उठाने लायक न रहा, अर्थात् जब मैंने रिश्वत लेकर दारोगा को छोड देने और जानमदान दे देने का हाल इनसे कहा, तो सुनते ही इनकी आँखो मे आँसू भर आये और एक लम्बी साँस लेकर इन्होंने मुझसे कहा, "भूतनाथ, तुमने यह काम बहुत ही बुरा किया । किसी दिन इसका नतीजा बहुत ही खराब निकलेगा ! खैर, अब तो जो कुछ होना था हो गया, तुम मेरे दोस्त हो अत जो कुछ तुम कर आये, उसे मैं भी मजूर करता हूँ और दारोगा को एक दम भूल जाता हूँ । अब मेरी लडकी और स्त्री पर चाहे जैसी आफत क्यो न आवे और मुझे भी चाहे कितना ही कष्ट क्यो न भोगना पडे, मगर आज से दारोगा का नाम भी न लूँगा और न अपनी स्त्री के विषय मे ही किसी से कुछ जिक्र करूँगा, हा कुछ तुम्हें करना हो करो और उस कम्बख्त दारोगा से भले ही कह दो कि '[illegible] इन्द्रदेव को नही दी गई ।' मैं भी अपने को ऐसा ही बनाऊँगा कि दारोगा को किसी तरह का खुटका न होगा और वह मुझे निरा उल्लू ही समझता रहेगा ।" इनकी यह बात मेरे कलेजे मे तीर की तरह लगी और मैं यह कहकर उठ खडा हुआ कि 'दोस्त, मुझे माफ करो, बेशक मुझसे बडी भूल हुई है । अब मैं दारोगा को जीता न छोडूँगा और जो कुछ उससे लिया है उसे वापस कर दूँगा ।" मगर इतना [illegible] इन्होंने मेरी कलाई पकड ली और जोर के साथ मुझे बैठाकर कहा, "भूतनाथ, [illegible] इस पर नही [illegible] है कि मुझसे साथ ही तुम उठ खडे हुए । [illegible] कभी न होने पावेगा, हमने और तुमने जो कुछ किया और [illegible], अब इसके सिवाय हम दोनो मे से कोई भी न जानेगा ।"

जीतसिंह—शाबाश !

[illegible] मुहब्बत की निगाह से इन्द्रदेव की तरफ देखा और [illegible]—

[illegible] मगर इन्द्रदेव [illegible] और [illegible] बात का नतीजा [illegible] लिखा कि उसी [illegible] । [illegible] कुछ [illegible] । [illegible] दारोगा इन्द्रदेव [illegible] ।

सुरेन्द्रसिंह—बेशक इन्द्रदेव ने यह बडे हौसले और सब्र का काम किया।

गोपालसिंह—दोस्ती का हक अदा करना इसे कहते हैं, जितने अहसान भूतनाथ ने इन पर किये थे, सभी का बदला एक ही बात से चुका दिया।

भूतनाथ—(गोपालसिंह की तरफ देख के) कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह से इन्दिरा ने अपना हाल किस तरह पर बयान किया था सो मुझे मालूम न हुआ। अगर यह मालूम हो जाता तो अच्छा होता कि इन्दिरा ने जो कुछ बयान किया था वह ठीक है अथवा उसने जो कुछ सुना था वह सच था?

गोपालसिंह—जहाँ तक मेरा खयाल है, मैं कह सकता हूँ कि इन्दिरा ने अपने विषय मे कोई बात ज्यादा नही कही, बल्कि ताज्जुब नही कि वह कई बातें मालूम न होने के कारण छोड गई हो। मैंने उसका पूरा-पूरा किस्सा महाराज को लिख भेजा था। (जीतसिंह की तरफ देखकर) अगर मेरी वह चिट्ठी यहाँ मौजूद हो, तो भूतनाथ को दे दीजिये, उसमे से इन्दिरा का किस्सा पढकर ये अपना शक मिटा लें।

"हाँ वह चिट्ठी मौजूद है" इतना कह कर जीतसिंह उठे और आलमारी से वह किताबनुमा चिट्ठी निकाल कर और इन्दिरा का किस्सा बता कर भूतनाथ को दे दी। भूतनाथ उसे तेजी के साथ पढ गया और अन्त मे बोला, "हाँ ठीक है, करीब-करीब सभी बातें उसे मालूम हो गई थी और आज मुझे भी एक बात नई मालूम हुई अर्थात् आखिरी मर्तबे जब मैं इन्दिरा को दारोगा के कब्जे से निकालकर ले गया था और अपने एक अड्डे पर हिफाजत के साथ रख गया था तो वहाँ से एकाएक उसका गायब हो जाना मुझे बडा ही दु खदायी हुआ। मैं ताज्जुब करता था कि इन्दिरा वहाँ से क्योकर चली गई। जब मैंने अपने आदमियो से पूछा तो उन्होने कहा कि 'हम लोगो को कुछ भी नही मालूम कि वह कब निकल कर भाग गई, क्योकि हम लोग कैदियो की तरह उस पर निगाह नही रखते थे बल्कि घर का आदमी समझ कर कुछ बेफिक्र थे।' परन्तु मुझे अपने आदमियो की बात पसन्द न आई और मैंने उन लोगो को सख्त सजा दी। आज मालूम हुआ कि वह काँटा मायाप्रसाद का बोया हुआ था। मैं उसे अपना दोस्त समझता था मगर अफसोस, उसने मेरे साथ बडी दगा की।"

गोपालसिंह—इन्दिरा की जुबानी यह किस्सा सुन कर मुझे भी निश्चय हो गया कि मायाप्रसाद दारोगा का हितू है अत मैंने उसे तिलिस्म मे कैद कर दिया है। अच्छा, यह तो बताओ कि उस समय जब तुम आखिरी मर्तबे इन्दिरा को दारोगा के यहाँ से निकाल कर अपने अड्डे पर रख आये और लौट कर पुन जमानिया गये, तो फिर क्या हुआ, दारोगा से कैसे निपटे, और सरयू का पता क्यो न लगा सके?

भूतनाथ—इन्दिरा को उस ठिकाने रख कर जब मैं लौटा तो पुन जमानिया गया परन्तु अपनी हिफाजत के लिए पाँच आदमिमो को अपने साथ लेता गया और उन्हे (अपने आदमियो को) कब क्या करना चाहिए इस बात को भी अच्छी तरह समझा दिया क्योकि वे पाँचो आदमी मेरे शागिर्द थे और कुछ ऐयारी भी जानते थे। मुझे सरयू के लिए दारोगा से फिर मुलाकात करने की जरूरत थी मगर उसके घर मे जाकर मुलाकात करने का इरादा न था क्योकि मैं खूब समझता था कि वह 'दूध का जला छाछ फूंक के

[illegible]ता होगा और मेरे लिए अपने घर मे कुछ-न-कुछ बन्दोबस्त जरूर कर रखा होगा। अगर अबकी दिलेरी के साथ उसके घर मे जाऊँगा तो बेशक फँस जाऊँगा, इसलिए बाहर ही उससे मुलाकात करने का बन्दोबस्त करने लगा। खैर, इसी फेर मे दस-बारह दिन बीत गए और इस बीच मे मुलाकात करने का कोई अच्छा मौका न मिला। पता लगाने से मालूम हुआ कि वह बीमार है और घर से बाहर नही निकलता। यह बात मुझे मायाप्रसाद ने कही थी मगर मैंने मायाप्रसाद से इन्दिरा के बारे मे कुछ भी नही कहा और न राजा साहब (गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) ही से कुछ कहा, क्योकि दारोगा को बेदाग छोड देने के लिए मेरे दोस्त इन्द्रदेव ने पहले ही से तय कर लिया था, अब अगर राजा साहब से मैं कुछ कहता तो दारोगा जरूर सजा पा जाता। लेकिन मैं यह नही [illegible] जानता कि मायाप्रसाद और दारोगा को इस बात का पता क्योकर लग गया कि इन्दिरा यहाँ आई है। खैर, मुख्तसिर यह है कि एक दिन स्वय मायाप्रसाद ने मुझसे कहा—"गदाधरसिंह, मैं तुम्हे इसकी इत्तिला देता हूँ कि सरयू नि सन्देह दारोगा की कैद मे है मगर बीमार है, अगर तुम किसी तरह दारोगा के मकान मे चले जाओ तो उसे जरूर अपनी आँखो से देख सकोगे। मेरी इस बात मे तुम किसी तरह का शक न करो, मैं [illegible] तुमसे कह रहा हूँ।" मायाप्रसाद की बात सुनकर मुझे एक दफे [illegible] आया और मैं दारोगा के मकान मे जाने के लिए तैयार भी हो गया। मैं क्या जानता था कि मायाप्रसाद दारोगा से मिला हुआ है। खैर, मैं अपनी हिफाजत के लिए [illegible] बन्दोबस्त करके आधी रात के समय कमन्द के जरिये दारोगा के लम्बे-चौडे [illegible] वाले मकान मे घुस गया और चोरो की तरह टोह [illegible] उस कमरे मे जा पहुँचा जिसमे दारोगा एक गद्दी के ऊपर उदास बैठा हुआ [illegible]। उस समय उसके बदन पर कई जगह पट्टी बँधी हुई थी जिससे वह [illegible] मालूम [illegible] था और उसके सिर का भी यही हाल था। दारोगा मुझे देखते ही [illegible] और [illegible] चार होते ही मैंने उससे कहा, "दारोगा साहब, मैं आपके [illegible] नही आया हूँ बल्कि सरयू को देखने के लिए आया हूँ जिसे [illegible] है। अब [illegible] समय मुझसे किसी तरह की [illegible] क्योकि मैं अगर आधे घंटे के अन्दर इस मकान से बाहर [illegible] जाऊँगा तो [illegible] हो जायगा कि गदाधर-[illegible] बचा [illegible] जाँयगे, [illegible] कि मैं [illegible] हूँ।"

[illegible] जवाब दिया, "मेरे [illegible] आदमी [illegible] कि किसी [illegible] कि अब आप मेरा [illegible] दूर कीजिए, [illegible] हूँ।"

[illegible]

हर्ज नही है मगर आइन्दा के लिए कसूर न करने का वादा करके भी आपने मेरे सा
दगा की, इसका मुझे जरूर वडा रज है ।

दारोगा—(हाथ जोडकर) खैर, जो हो गया सो हो गया, अव अगर फिर को कसूर मुझसे हो तो जो चाहे सजा दीजियेगा, मैं उफ भी न करूँगा।

मैं—खैर, एक दफा और सही, मगर इस कसूर के लिए आपको कुछ जुर्मान जरूर देना पडेगा।

दारोगा—यद्यपि आप मुझे पहले ही पूरी तरह कगाल कर चुके हैं मगर फिर भी मै आपकी आज्ञा-पालन के लिए हाजिर हूँ।

मैं—दो हजार अशर्फी।

दारोगा—(आलमारी मे से एक थैली निकाल कर और मेरे सामने रखकर) वस, एक हजार अशर्फी को कवूल कीजिए और''

मैं—(मुस्कुराकर) मैं कवूल करता हूँ और अपनी तरफ से यह थैली आपको देकर इसके वदले मे सरयू को माँगता हूँ जो इस समय आपके घर मे है।

दारोगा—वेशक सरयू मेरे घर में है और मैं उसे अभी आपके हवाले करूँगा मगर इस थैली को आप कवूल कर लीजिए, नही तो मैं समझूँगा कि आपने मेरा कसूर माफ नही किया।

मैं—नही-नही, मैं कसम खाकर कहता हूँ कि मैने आपका कसूर माफ कर दिया और खुशी से यह थैली आपको वापस करता हूँ, अव मुझे सिवाय सरयू के और कुछ नही चाहिए।

हम दोनो मे देर तक इसी तरह की वातें हुईं और और उसके वाद मेरी आखिरी वात सुनकर दारोगा उठ खडा हुआ और मेरा हाथ पकड दूसरे कमरे की तरफ यह कहता हुआ ले चला कि "आओ मैं तुमको सरयू के पास ले चलूँ, मगर अफसोस की वात है कि इस समय वह हद दर्जे की वीमार हो रही है।" खैर, वह मुझे घुमाता-फिराता एक दूसरे कमरे में ले गया और वहाँ मैंने एक पलग पर सरयू को वीमार पडे देखा। एक मामूली चिराग उससे थोडी ही दूर पर जल रहा था। (लम्वी साँस लेकर) अफसोस, मैंने देखा कि वीमारी ने उसे आखिरी मजिल के करीव पहुँचा दिया है और वह इतनी कमजोर हो रही है कि वात करना भी उसके लिए कठिन हो रहा है। मुझे देखते ही उसकी आँखें डवडवा आईं और मुझे भी रुलाई आने लगी। उस समय मैं उसके पास वैठ गया और अफसोस के साथ उसका मुँह देखने लगा। उस वक्त दो लौंडियाँ उसकी खिदमत के लिए हाजिर थी जिनमें से एक ने आगे वढकर रूमाल से उसके आँसू पोंछे और पीछे हट गई। मैंने अफसोस के साथ पूछा—"सरयू, यह तेरा क्या हाल है?"

इसके जवाव मे सरयू ने वहुत वारीक आवाज मे रुककर कहा, "भैया, (क्योंकि वह प्राय मुझे भैया कह कर ही पुकारा करती थी) मेरी वुरी अवस्था हो रही है। अव मेरे वचने की आशा न करनी चाहिए। यद्यपि दारोगा साहव ने मुझे कैद किया था मगर मैं इनका अहसान मानती हूँ कि इन्होंने मुझे किसी तरह की तकलीफ नही दी वल्कि इस वीमारी में मेरी वडी हिफाजत की, दवा इत्यादि का भी पूरा प्रवन्ध रखा, मगर यह न

बनाया कि मुझे कैद क्यो किया था। खैर, जो भी हो, इस समय तो मैं आखिरी दम का इन्तजार कर रही हूँ और सब तरफ से मोह-माया को छोड ईश्वर से लौ लगाने का उद्योग कर रही हूँ। मैं समझ गई हूँ कि तुम मुझे लेने के लिए आये हो। मगर दया करके मुझे इसी जगह रहने दो और इधर-उधर कही मत ले जाओ, क्योकि इस समय मैं किसी अपने को देख मायामोह मे आत्मा को फंसाना नही चाहती और न गगाजी का सम्बन्ध छोड कर दूसरी किसी जगह मरना ही पसन्द करती हूं, यहाँ यो भी अगर गगाजी मे फेंक दी जाऊँगी, तो मेरी सद्गति हो जायगी, बस यही आखिरी प्रार्थना है। एक बात और भी है कि मेरे लिए दारोगा साहब को किसी तरह की तकलीफ न देना और ऐसा करना जिसमें इनकी जरा बेइज्जती न हो, यह मेरी वसीयत है और यही मेरी आरजू है। अब श्रीगगाजी को छुडाकर मुझे नरक मे मत डालो।" इतना कह सरयू कुछ देर को चुप हो गई और मुझे उसकी अवस्था पर रुलाई आने लगी। मैं और भी कुछ देर तक उसके पास बैठा रहा और धीरे-धीरे बातें भी होती रही। मगर जो कुछ उसने कहा उसका तत्त्व यही था कि मुझे यहाँ से मत हटाओ और दारोगा को कुछ तकलीफ मत दो। उस समय मेरे दिल मे यही बात आई कि इन्द्रदेव को इस बात की इत्तिला दे देनी चाहिए। वह जैसी आज्ञा देगे किया जायगा। मगर अपना यह विचार मैंने दारोगा से नही कहा क्योकि उसे मैं इन्द्रदेव की तरफ से बेफिक्र कर चुका था और कह चुका था कि सरयू और इन्दिरा के साथ जो कुछ बर्ताव तुमने किया है, उसकी इत्तिला मैं इन्द्रदेव को न दूंगा, दूसरे को [illegible] तुम्हारा नाम बचा जाऊँगा। अत मैं सरयू से दूसरे दिन मिलने का वादा करके वहाँ से उठा और अपने डेरे पर चला आया। यद्यपि रात बहुत कम बाकी रह गई थी, परन्तु मैंने उसी समय अपने एक खास आदमी को पत्र देकर इन्द्रदेव के पास रवाना कर दिया और ताकीद कर दी कि एक घोड़ा किराये का लेकर दौड़ा-दौड़ चला [illegible] पत्र का जवाब लेकर जल्द ही लौट आवे। दूसरे दिन आधी रात [illegible] वह आदमी लौट आया और उसने इन्द्रदेव का पत्र मेरे हाथ मे दिया, [illegible] पढ़ा। उसमे यह लिखा हुआ था—

"तुम्हारा पत्र पढ़ने से कलेजा छिद गया। सच तो यह है कि दुनिया मे मुझ-सा बदकिस्मत भी कोई न होगा। खैर, परमेश्वर की मर्जी ही ऐसी है तो मैं क्या कर सकता हूँ। दारोगा के बारे में जो प्रतिज्ञा तुमने की है, उसे झूठ न होने दूंगा। मैं अपने [illegible] मगर [illegible] बेचारी सरयू को अपना [illegible] और न [illegible] उसके दिल में किसी तरह का [illegible] आने दूंगा। [illegible] इस बीमारी से बच जाय तो उसे [illegible] और अगर वह मर जाय तो उसी जगह [illegible] मेरे पास लाना। [illegible] कुछ नहीं कहना चाहता। हाँ, [illegible] आगे जो ईश्वर की मर्जी!

तुम्हारा सखा—इन्द्रदेव।"

इस चिट्ठी को पढकर मैं बहुत देर तक रोता और अफसोस करता रहा। इसके बाद उठकर दारोगा के मकान की तरफ रवाना हुआ। मगर आज भी अपने बचाव का पूरा-पूरा इन्तजाम करता गया। मुलाकात होने पर दारोगा ने कल से ज्यादा खातिरदारी के साथ मुझे बैठाया और देर तक बातचीत करता रहा। मगर जब मैं सरयू के पास गया तो उसकी हालत कल से ज्यादा खराब देखने मे आई, अर्थात् आज उसमें बोलने की भी ताकत न थी। मुख्तसिर यह है कि तीसरे दिन बेहोश और चौथे दिन आधी रात के समय मैंने सरयू को मुर्दा पाया। उस समय मेरी क्या हालत थी, सो मैं बयान नही कर सकता। अस्तु, उस समय जो कुछ करना उचित था और मैं कर सकता था, उसे सवेरा होने के पहले ही करके छुट्टी किया, अपने खयाल से सरयू के शरीर की दाह-क्रिया इत्यादि करके पचतत्व मे मिला दिया और इस बात की इत्तिला इन्द्रदेव को दे दी। इसके बाद इन्दिरा के लिए अपने अड्डे पर गया और वहाँ उसे न पाकर बडा ताज्जुब हुआ। पूछने पर मेरे आदमियो ने जवाब दिया कि "हम लोगो को कुछ भी खबर नही कि वह कब और कहाँ भाग गई।" इस बात से मुझे सन्तोष न हुआ। मैंने अपने आदमियो को सख्त सजा दी और बराबर इन्दिरा का पता लगाता रहा। अब सरयू के मिल जाने से मालूम हुआ कि उस दिन मेरी कम्बख्त आँखो ने मेरे साथ दगा की और दारोगा के मकान मे बीमार सरयू को मैं पहचान न सका। मेरी आँखो के सामने सरयू मर चुकी थी और मैंने खुद अपने हाथ से इन्द्रदेव को यह समाचार लिखा था, इसलिए उन्हे किसी तरह का शक न हुआ और सरयू तथा इन्दिरा के गम मे ये दीवाने से हो गये, हर तरह के चैन और आराम को इन्होंने इस्तीफा दे दिया और उदासीन हो एक प्रकार से साधू ही बन बैठे। मुझसे भी मुहब्बत कम कर दी और शहर का रहना छोड अपने तिलिस्म के अन्दर चले गये और उसी मे रहने लगे, मगर न मालूम क्या सोचकर इन्होंने मुझे वहाँ का रास्ता न बताया। मुझ पर भी इस मामले का बडा असर पडा क्योकि ये सब बातें मेरी ही नालायकी के सबब से हुई थी। अतएव मैंने उदासीन हो रणधीरसिहजी की नौकरी छोड दी और अपने बाल-बच्चो तथा स्त्री को भी उन्ही के यहाँ छोड, बिना किसी को कुछ कहे जंगल और पहाड़ का रास्ता लिया। उधर एक और स्त्री से मैंने शादी कर ली थी जिससे नानक पैदा हुआ है। उधर भी कई ऐसे मामले हो गये जिनसे मैं बहुत उदास और परेशान हो रहा था, उसका हाल नानक की जुबानी तेजसिह को मालूम ही हो चुका है। बल्कि आप लोगो ने भी तो सुना ही होगा। अस्तु, हर तरह से अपने को नालायक समझकर मैं निकल भागा और फिर मुद्दत तक अपना मुँह किसी को न दिखाया। इधर जब जमाने ने पलटा खाया तब मैं कमलिनीजी से जा मिला। उन दिनो मेरे दिल में विश्वास हो गया था कि इन्द्रदेव मुझसे रज है। अत मैंने इनसे भी मिलना-जुलना छोड दिया, बल्कि यो कहना चाहिए कि हमारी इतनी पुरानी दोस्ती का उन दिनो अन्त हो गया था।

इन्द्रदेव—बेशक, यही बात थी। स्त्री के मरने की खबर सुन कर मुझे बडा ही रज हुआ। मुझे कुछ तो भूतनाथ की जुबानी और कुछ तहकीकात करने पर मालूम ही हो चुका था कि मेरी लडकी और स्त्री इसी की बदौलत जहन्नुम चली गई। अस्तु,

मैंने भूतनाथ की दोस्ती को तिलांजलि दे दी और मिलना-जुलना बिल्कुल बन्द कर दिया मगर इससे कहा कुछ भी नहीं क्योंकि मैं अपनी जुबान से दारोगा को माफ कर चुका था। इसके अतिरिक्त इसने मुझ पर कुछ अहसान भी जरूर ही किये थे, उनका भी मुझे खयाल था। अस्तु मैंने कुछ कहा तो नहीं, मगर इसकी तरफ से दिल हटा लिया और फिर अपना कोई भेद भी इसको नहीं बताया। कभी-कभी इसके साथ इधर-उधर की मुलाकात हो जाती थी, क्योंकि इसे मैंने अपने मकान का तिलिस्मी रास्ता नहीं दिखाया था। अगर यह कभी मेरे मकान पर आया भी तो अपनी आंखों पर पट्टी बांध कर। यही सबब था कि इसे लक्ष्मीदेवी का हाल मालूम न हुआ। लक्ष्मीदेवी के बारे में भी मैं इसे कसूरवार समझता था और मुझे यह भी विश्वास था कि यह अपना बहुत-सा भेद मुझसे छिपाता है और वास्तव में छिपाता भी था।

भूतनाथ—(इन्द्रदेव से) नहीं, सो बात तो नहीं है, मेरे कृपालु मित्र!

इन्द्रजीतसिंह—अगर यह बात नहीं है तो कलमदान, जिसे तुम आखिरी मर्तबे इन्दिरा के साथ दारोगा के यहां से उठा लाये और मुझे दे गये थे, मेरे यहां से कैसे गायब हो गया?

भूतनाथ—(मुस्कुरा कर) आपके किस मकान में से यह कलमदान गायब हो गया था?

इन्द्रजीतसिंह—नानीजी वाले मकान में से। उसी दिन तुम मुझसे मिलने के लिए वहां आए थे और उसी दिन वह कलमदान गायब हो गया।

भूतनाथ—ठीक है, तो उस कलमदान को चुराने वाला मैं नहीं हूं, बल्कि मेरा [illegible] है। मैं तो यों भी अगर जरूरत होती तो आपसे वह कलमदान मांग सकता था। दारोगा की आज्ञानुसार लाडिली ने रामभोली बनकर नानक को धोखा दिया और [illegible] से कलमदान चुरवा मंगवाया।[1]

गोपालसिंह—हां ठीक है, इस बात को तो मैं भी [illegible] क्योंकि मुझे इसका [illegible] मालूम है। बेशक इसी ढंग से यह कलमदान वहां पहुंचा था और अन्त में [illegible] उस [illegible], जब मैं [illegible] रोहतासगढ़ पहुंचा था। [illegible] है कि लाडिली ने रामभोली बनकर उसे धोखा दिया था, मगर [illegible] ऐसा नहीं हुआ। [illegible] जो रामभोली बनी थी, [illegible] था।

[illegible]—(राजा गोपालसिंह से) वह कलमदान आपको कहां से मिल गया? [illegible]

[illegible]

[1] [illegible]

दारोगा को वहाँ का मालिक बना दिया था। जब भूतनाथ ने उसकी ताली मुझे ला दी, तब मुझे भी वहाँ का पूरा-पूरा हाल मालूम हुआ।

जीतसिंह—(भूतनाथ से) खैर, यह बताओ कि मनोरमा और नागर का तुमसे क्या सम्बन्ध था?

यह सवाल सुनकर भूतनाथ सन्न हो गया और सिर झुकाकर कुछ सोचने लगा। उस समय गोपालसिंह ने उसकी मदद की और जीतसिंह की तरफ देख कर कहा, "इस सवाल को छोड दीजिए, क्योंकि वह जमाना भूतनाथ का बहुत ही बुरा तथा ऐयाशी का था। इसके अतिरिक्त जिस तरह राजा वीरेन्द्रसिंहजी ने रोहतासगढ के तहखाने मे भूतनाथ का कसूर माफ किया था, उसी तरह कमलिनी ने भी इसका वह कसूर कसम खिलाकर माफ किया और साथ ही उन ऐबो को छिपाने का बन्दोबस्त कर दिया है।"

इसके जवाब मे जीतसिंह ने कहा, "खैर, जाने दो, देखा जायेगा।"

गोपालसिंह—जब से भूतनाथ ने कमलिनी का साथ किया है, तब से इसने (भूतनाथ ने) जो-जो काम किये है, उन पर ध्यान देने से आश्चर्य होता है। वास्तव मे इसने ऐसे काम किये हैं, जिनकी ऐसे समय हमे सख्त जरूरत थी। मगर इसका लडका नानक तो बिल्कुल ही बोदा और खुदगर्ज निकला। न तो कमलिनी के साथ मिल कर उसने कोई तारीफ का काम किया और न अपने बाप ही को किसी तरह की मदद दी।

भूतनाथ—बेशक ऐसा ही है, मैंने कई दफा उसे समझाया, मगर· ·

सुरेन्द्रसिंह—(गोपाल से) अच्छा, अजायबघर मे क्या बात हैं जिससे ऐसा अनूठा नाम उसका रखा गया? अब तो तुम्हे उसका पूरा-पूरा हाल मालूम हो ही गया होगा।

गोपालसिंह—जी हाँ। एक किताब है जिसे 'ताली' के नाम से सम्बोधित करते है। उसके पढने से वहाँ का कुल हाल मालूम होता है। वह बडी हिफाजत और तमाशे की जगह थी और कुछ है भी, क्योकि अब उसका काफी हिस्सा मायारानी की बदौलत बर्बाद हो गया।

जीतसिंह—उस किताब (ताली) की बदौलत मायारानी को भी वहाँ का हाल मालूम हो गया होगा?

गोपालसिंह—कुछ-कुछ, क्योकि उस किताब की भाषा वह अच्छी तरह समझ नही सकती थी। इसके अतिरिक्त उस अजायबघर का जमानिया के तिलिस्म से भी सम्बन्ध है। इसलिए कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को वहाँ का हाल मुझसे भी ज्यादा मालूम हुआ होगा।

जीतसिंह—ठीक है, (सुरेन्द्रसिंह की तरफ देख कर) आज यद्यपि बहुत-सी नई बातें मालूम हुई है। परन्तु फिर भी जब तक दोनो कुमार यहाँ न आ जायेंगे तब तक बहुत-सी बातो का पता न लगेगा।

सुरेन्द्रसिंह—सो तो होगा ही, परन्तु इस समय हम केवल भूतनाथ के मामले को तय करना चाहते हैं। जहाँ तक मालूम हुआ है भूतनाथ ने हम लोगो के साथ सिवाय भलाई के बुराई कुछ भी नही की। अगर उसने बुराई की तो इन्द्रदेव के साथ या कुछ गोपालसिंह के साथ, सो भी उस जमाने मे जब इनसे और हमसे कुछ सम्बन्ध नही था।

आज ईश्वर की कृपा से ये लोग हमारे साथ हैं, बल्कि हमारे अंग हैं। इससे कहा भी जा सकता है कि भूतनाथ हमारा ही कसूरवार है। मगर फिर भी हम इसके कसूरों की माफी का अख्तियार इन्हीं दोनों अर्थात् गोपालसिंह और इन्द्रदेव को देते हैं। ये दोनों अगर भूतनाथ का कसूर माफ कर दें तो हम इस बात को खुशी से मंजूर कर लेंगे। हाँ, लोग यह कह सकते हैं कि इस माफी देने में बलभद्रसिंह को भी शरीक करना चाहिए था। मगर हम इस बात को जरूरी नहीं समझते, क्योंकि इस समय बलभद्रसिंह को कैद से छुड़ा कर भूतनाथ ने उन पर बल्कि सच तो ये है कि हम लोगों पर भी बहुत बड़ा अहसान किया है, इसलिए अगर बलभद्रसिंह को इससे कुछ रंज हो तो भी माफी देने में वे कुछ उज्र नहीं कर सकते।

गोपालसिंह—इसी तरह हम दोनों को भी माफी देने में किसी तरह का उज्र न होना चाहिए। उस समय भूतनाथ ने मेरी बहुत बड़ी मदद की है और मेरे साथ मिल कर ऐसे अनूठे काम किये हैं कि जिनकी तारीफ सहज में नहीं हो सकती। इस हमदर्दी और मदद के सामने उन कसूरों की कुछ भी हकीकत नहीं, अतः मैं इससे बहुत प्रसन्न हूँ और सच्चे दिल से इसे माफी देता हूँ।

इन्द्रदेव—माफी देनी ही चाहिए। जब आप माफी दे चुके तो मैं भी दे चुका। ईश्वर भूतनाथ पर कृपा करें, जिसमें अपनी नेकनामी बढ़ाने का शौक इसके दिल में दिन-दिन तरक्की करता रहे। सच बात तो यह है कि कमलिनी की बदौलत इस समय हम लोगों को यह शुभ दिन देखने में आया और जब कमलिनी ने इससे प्रसन्न हो इसके कसूर माफ कर दिए तो हम लोगों को बाल-बराबर भी उज्र नहीं हो सकता।

जीतसिंह—बेशक, बेशक!

सुरेन्द्रसिंह—इसमें कुछ भी शक नहीं! (भूतनाथ की तरफ देख कर) अच्छा, भूतनाथ, तुम्हारा सब कसूर माफ किया जाता है। इन दिनों हम लोगों के साथ तुमने जो-जो नेकियाँ की हैं उनके बदले में हम तुम पर भरोसा करके तुम्हें अपना ऐयार बनाते हैं।

इतना कह कर सुरेन्द्रसिंह उठ बैठे और अपने सिरहाने के नीचे से अपना खास बेशकीमत खंजर निकाल कर भूतनाथ की तरफ बढ़ाया। भूतनाथ खड़ा हो गया और झुक कर सलाम करने के बाद खंजर ले लिया और इसके बाद जीतसिंह, गोपालसिंह और इन्द्रदेव को भी सलाम किया। जीतसिंह ने अपना खास ऐयारी का बटुआ भूतनाथ को दिया। गोपालसिंह ने [illegible] जिसमें [illegible] ने नाम [illegible] भूतनाथ [illegible] और [illegible] कि '[illegible] से पास [illegible] से [illegible]।'

[illegible] भूतनाथ [illegible] दुनिया में [illegible]

वहुत किया और विगाडा भी वहुत, परन्तु सच्चा सुख नाम मात्र के लिए एक दिन भी न मिला और न किसी को मुँह दिखाने की अभिलाषा ही रह गई। अन्त मे न मालूम किस जन्म का पुण्य सहायक हुआ जिसने मेरे रास्ते को वदल दिया और जिसकी वदौलत आज मैं इस दर्जे को पहुँचा। अव मुझे किसी वात की परवाह न रही। आज तक जो मुझसे दुश्मनी रखते थे, कल से वे मेरी खुशामद करेंगे, क्योंकि दुनिया का कायदा ही ऐसा है। महाराज इस वात का भी निश्चय रखे कि उस पीतल की सन्दूकडी से महाराज या महाराज के पक्षपातियो का कुछ भी सम्वन्ध नही है, जो नकली वलभद्रसिंह की गठरी मे से निकली है और जिसके वयान ही से मेरे रोगटे खडे होते हैं। मै उस भेद को भी महाराज से छिपाना नही चाहता, हाँ, यह अच्छा है कि सर्वसाधारण मे वह भेद न फैलने पाये। मैंने उसका कुछ हाल देवीसिंह से कह दिया है, आशा है कि वे महाराज से जरूर अर्ज करेंगे।

जीतसिंह—खैर, उसके लिए तुम चिन्ता न करो, जैसा होगा देखा जायेगा। अव अपने डेरे पर जाकर आराम करो, महाराज भी आज रात भर जागते ही रहे है।

गोपालसिंह—जी हाँ, अव तो नाममात्र को रात वच गई होगी।

इतना कहकर राजा गोपालसिंह उठ खडे हुए और सवको साथ लिए हुए कमरे के वाहर चले गये।

3

इस समय रात वहुत कम वाकी थी और सुवह की सफेदी आसमान पर फैलना ही चाहती थी। और लोग तो अपने-अपने ठिकाने चले गए और दोनो नकावपोशो ने भी अपने घर का रास्ता लिया, मगर भूतनाथ सीधे देवीसिंह के डेरे पर चला गया। दरवाजे पर ही पहरेवाले की जुबानी मालूम हुआ कि वे सोये हैं परन्तु देवीसिंह को न मालूम किस तरह भूतनाथ के आने की आहट मिल गई (शायद जागते हो)अत वे तुरन्त वाहर निकल आए और भूतनाथ का हाथ पकडकर कमरे के अन्दर ले गए। इस समय वहाँ केवल एक शमादान की मद्धिम रोशनी हो रही थी, दोनो आदमी फर्श पर वैठ गए और यो वातचीत होने लगी—

देवीसिंह—कहो, इस समय तुम्हारा आना कैसे हुआ ? क्या कोई नई वात हुई ?

भूतनाथ—वेशक नई वात हुई और वह इतनी खुशी की हुई है जिसके योग्य मैं नही था।

देवीसिंह—(ताज्जुव से) वह क्या ?

भूतनाथ—आज महाराज ने मुझे अपना ऐयार वना लिया और इस इज्जत के लिए मुझ अपना खजर भी वख्शा है।

इतना कहकर भूतनाथ ने महाराज का दिया हुआ खंजर और जीतसिंह तथा गोपालसिंह का दिया हुआ वटुआ और तमचा देवीसिंह को दिखाया और कहा, "इसी

बात की मुबारकबाद देने के लिए मैं आया हूँ कि तुम्हारा एक नालायक दोस्त उस दर्जे को पहुँच गया।"

देवीसिंह—(प्रसन्न होकर और भूतनाथ को गले से लगाकर) बेशक यह बड़ी खुशी की बात है, ऐसी अवस्था में तुम्हें अपने पुराने मालिक रणधीरसिंह को भी सलाम करने के लिए जाना चाहिए।

भूतनाथ—जरूर जाऊँगा।

देवीसिंह—यह कार्रवाई कब हुई ?

भूतनाथ—अभी थोड़ी ही देर पहले हुई। मैं इस समय महाराज के पास से ही चला आ रहा हूँ।

इतना कहकर भूतनाथ ने आज की रात का कुल हाल देवीसिंह से बयान किया। इसके बाद भूतनाथ और देवीसिंह में देर तक बातचीत होती रही, और जब दिन अच्छी तरह निकल आया, तब दोनों ऐयार वहाँ से उठे और स्नान-संध्या की फिक्र में लगे।

जरूरी कामों से निश्चिन्ती पा और स्नान-पूजा से निवृत्त होकर भूतनाथ अपने पुराने मालिक रणधीरसिंह के पास चला गया। बेशक उसके दिल में इस बात का खुटका लगा हुआ था कि उसका पुराना मालिक उसे देखकर प्रसन्न न होगा, बल्कि सामना होने पर भी कुछ देर तक उसके दिल में इस बात का गुमान बना रहा, मगर जिस समय भूतनाथ ने अपना खुलासा हाल बयान किया, उस समय बहुत परेशान रणधीरसिंह को और प्रसन्न पाया। रणधीरसिंह ने उसको खिलअत और इनाम भी दिया और बहुत देर तक उससे तरह-तरह की बातें करते रहे।

4

यह बात तो सब को मालूम थी कि सब कामों के पहले कुंअर इन्द्रजीतसिंह और [illegible] शादी हो जानी चाहिए, [illegible] ख्याल से [illegible] शादी के इन्तजाम [illegible] और [illegible] प्रसन्न हो रहे हैं कि [illegible] शीघ्र ही [illegible] शादी भी हो जायगी। महाराज [illegible] [illegible] हो गये। साथ ही [illegible] कि [illegible] और [illegible] [illegible]

आज कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के आने की उम्मीद मे लोग खुशी-खुशी तरह-तरह के चर्चे कर रहे हैं। आज ही के दिन आने के लिए दोनो कुमारो ने चिट्ठी लिखी थी, इसलिए आज उनके दादा-दादी, माँ-बाप, दोस्तो और प्रेमियो को भी उम्मीद हो रही है कि उनकी तरसती हुई आँखें ठण्डी होगी, और जुदाई के सदमो से मुरझाया हुआ दिल हरा होगा। अहलकार और खैरख्वाह लोग जरूरी कामो को भी छोडकर तिलिस्मी इमारत मे इकट्ठे हो रहे हैं। इसी तरह हर एक अदना और आला दोनो कुमारो के आने की उम्मीद मे खुश हो रहा है। गरीबो और मोहताजो की खुशी का तो कोई ठिकाना ही नही, उन्हें इस बात का पूरा विश्वास हो रहा है कि अब उनका दारिद्र्य दूर हो जायगा।

दो पहर दिन ढलने के बाद दोनो नकाबपोश भी आकर हाजिर हो गए हैं, केवल वे ही नही, बल्कि उनके साथ और भी कई नकाबपोश हैं, जिनके बारे मे लोग तरह-तरह के चर्चे कर रहे हैं और साथ ही यह भी कह रहे हैं कि "जिस समय ये नकाबपोश लोग अपने चेहरो से नकाबें हटायेंगे, उस समय जरूर कोई-न-कोई अनूठी घटना देखने-सुनने मे आयेगी।"

नकाबपोशो की जुबानी यह तो मालूम हो ही चुका था कि दोनो कुमार उसी पत्थर वाले तिलिस्मी चबूतरे के अन्दर से प्रकट होंगे जिस पर पत्थर का आदमी सोया हुआ है, इसलिए इस समय महाराज, राजासाहब और सलाहकार लोग उसी दालान मे इकट्ठे हो रहे हैं, और वह दालान भी सज-सजाकर लोगो के बैठने के लायक बना दिया गया है।

तीन पहर दिन बीत जाने पर तिलिस्मी चबूतरे के अन्दर से कुछ विचित्र ही ढग के बाजे की आवाज आने लगी जोकि भारी मगर सुरीली थी और जिसके सबब से लोगो का ध्यान उसकी तरफ खिचा। महाराज सुरेन्द्रसिंह, बीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह और गोपालसिंह तथा दोनो नकाबपोश उठकर उस चबूतरे के पास गये। ये लोग बडे गौर से उस चबूतरे की अवस्था पर ध्यान देते रहे, क्योकि इस बात का पूरा गुमान था कि पहले की तरह आज भी उस चबूतरे का अगला हिस्सा किवाड के पल्ले की तरह खुलकर जमीन के साथ लग जायेगा। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् जिस तरह बलभद्रसिंह के आने और जाने के वक्त उस चबूतरे का अगला हिस्सा खुल गया था, उसी तरह इस समय भी वह किवाड के पल्ले की तरह धीरे-धीरे खुलकर जमीन के साथ लग गया और उसके अन्दर मे कुँअर इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह बाहर निकलकर महाराज सुरेन्द्रसिंह के पैरो पर गिर पडे। उन्होंने बडे प्रेम से उठाकर छाती से लगा लिया। इसके बाद दोनो कुमारो ने अपने पिता के चरण छूए, फिर जीतसिहजी और तेजसिंह को प्रणाम करने के बाद राजा गोपालसिंह से मिले। इसके बाद नकाबपोशो, ऐयारो व दोस्तो से भी मुलाकात की।

बन्दोबस्त पहले से हो चुका था और इशारा भी बँधा हुआ था, अतएव जिस समय दोनों कुमार महाराज के चरणो पर गिरे उसी समय फाटक पर से बाजो की आवाज आने लगी जिससे बाहर वालो को भी मालूम हो गया कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह आ गये।

इस समय की खुशी का हाल लिखना हमारी ताकतसे बाहर है। हाँ, इसका

अन्दाज पाठक स्वयं कर सकते हैं कि जब दोनो कुमार मिलने के लिए महल के अन्दर गए तो औरतो मे खुशी का दरिया कितने जोश के साथ उमडा होगा। महल के अन्दर दोनो कुमारो का इन्तजार बनिस्वत बाहर से ज्यादा होगा, यह सोचकर ही महाराज ने दोनो कुमारो को ज्यादा देर तक बाहर रोकना मुनासिब न समझकर शीघ्र ही महल मे जाने की आज्ञा दी, और दोनों कुमार भी खुशी-खुशी महल के अन्दर जाकर सबसे मिले। उनकी मां और दादी की बढती हुई खुशी का तो आज अन्दाज करना ही कठिन है, जिन्होने लडको की जुदाई तथा रंज और नाउम्मीदी के साथ-ही-साथ तरह-तरह की खबरो से पहुँची हुई चोटो को अपने नाजुक कलेजो पर झेलकर और देवताओ की मिन्नतें मान-मानकर आज का दिन देखने के लिए अपनी नन्ही-सी जान को बचाकर रखा था। अगर उन्हे समय और नीति पर विशेष ध्यान न रहता तो आज घण्टो तक अपने बच्चो को कलेजे से अलग करके बातचीत करने और महल के बाहर जाने का मौका न देती।

दोनो कुमार खुशी-खुशी सबसे मिले। एक-एक करके सबसे कुशल-मगल पूछा, कमलिनी और लाडिली से भी चार आँखें हुई, मगर वहाँ किशोरी और कामिनी की सूरत दिखाई न पडी, जिनके बारे मे सुन चुके थे कि महल के अन्दर पहुँच चुकी हैं। इस सबब से इनके दिल को जो कुछ तकलीफ हुई उसका अन्दाज औरो को तो नही, मगर कुछ-कुछ कमलिनी और लाडिली को मिल गया और उन्होंने बात-ही-बात मे इस भेद को खुलवाकर कुमारो की तसल्ली करवा दी।

थोडी देर तक दोनो भाई महल के अन्दर रहे, और इस बीच मे बाहर से कई दफे तलबी का सन्देश पहुँचा, अतः पुनः मिलने का वादा करके वहाँ से उठकर वह बाहर की तरफ रवाना हुए और उस आलीशान कमरे मे पहुँचे, जिसमे कई खास-खास आदमियो और आराम वालों के साथ महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह उनका इन्तजार कर रहे थे। उस समय इस कमरे मे यद्यपि राजा गोपालसिंह, नकाबपोश लोग, जीतसिंह, तेजसिंह, भूतनाथ और ऐयार लोग भी उपस्थित थे, मगर कोई आदमी ऐसा न था, जिसके सामने भेद की बातें करने मे किसी तरह का सकोच हो। दोनो कुमार इशारा पाकर अपने दादा साहब के बगल मे बैठ गए और धीरे-धीरे बातचीत होने लगी।

सुरेन्द्रसिंह—(दोनो कुमारो की तरफ देखकर) भैरोसिंह और तारासिंह तुम्हारे साथ नहीं थे, उन दोनों को कहाँ छोडा?

इन्द्रजीतसिंह—(हँसते हुए) जी वे दोनों तो हम लोगों के आने से पहले ही से [illegible] हैं।

सुरेन्द्रसिंह—(ताज्जुब से चारों तरफ देखकर) कहाँ?

[illegible]

[illegible]

[illegible]

और उनके वदले मे भैरोसिंह तथा तारासिंह दिखाई देने लगे। इस जादू के से मामले को देखकर सवकी विचित्र अवस्था हो गई और सब ताज्जुव मे आकर एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। भूतनाथ और देवीसिंह की तो और ही अवस्था हो रही थी। वडे जोरो के साथ कलेजा उछलने लगा और वे कुछ वातें उन्हे याद आ गईं जो नकावपोशो के मकान मे जाकर देखी-सुनी थी और वे दोनो ही ताज्जुव के साथ गौर करने लगे।

सुरेन्द्रसिंह—(दोनो कुमारो से) जव भैरोसिंह और तारासिंह तुम्हारे पास नही गये और यहाँ मौजूद थे, तव भी तो रामसिंह और लक्ष्मणसिंह कई दफे आये थे, उस समय इस विचित्र पर्दे (नकाव)के अन्दर कौन छिपा हुआ था ?

इन्द्रजीतसिंह—(और सव नकावपोशो की तरफ बताकर) कई दफे इन लोगो मे से वारी-वारी से समयानुसार और कई दफे स्वय हम दोनो भाई इसी पोशाक और नकाव को पहनकर हाजिर हुए थे।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह की इस वात ने इन लोगो को और भी ताज्जुव मे डाल दिया और सब कोई हैरानी के साथ उनकी तरफ देखने लगे। भूतनाथ और देवीसिंह की तो वात ही निराली थी, इनको तो विश्वास हो गया कि नकावपोशो की टोह मे जिस मकान के अन्दर हम लोग गए थे, उस मालिक ये ही दोनो हैं, इन्ही दोनो की मर्जी से हम लोग गिरफ्तार हुए थे, और इन्ही दोनो के सामने पेश किए गए थे। देवीसिंह यद्यपि अपने दिल को वार-वार समझा-वुझाकर सम्हालते थे, मगर इस वात का खयाल हो ही जाता था कि अपने ही लोगो ने मेरी वेइज्जती की, और मेरे ही लडके ने इस काम मे शरीक होकर मेरे साथ दगा की। मगर देखना चाहिए, इन सव वातो का भेद, सवव और नतीजा क्या खुलता है।

भूतनाथ इस सोच मे घडी-घडी सिर झुका लेता था कि मेरे पुराने ऐव, जिन्हे मैं वडी कोशिश से छिपा रहा था, अव छिपे न रहे, क्योकि इन नकावपोशो को मेरा रत्ती-रत्ती हाल मालूम है, और दोनो कुमार इन सवके मालिक और मुखिया हैं, अत इनसे कोई वात छिपी न रह गई होगी। इसके अतिरिक्त मैं अपनी आँखो से देख चुका हूँ, कि मुझसे वदला लेने की नीयत रखने वाला मेरा दुश्मन उस विचित्र तस्वीर को लिए हुए इनके सामने हाजिर हुआ था और मेरा लडका हरनामसिंह भी वहाँ मौजूद था। यद्यपि इस वात की आशा नही हो सकती कि ये दोनो कुमार मुझे जलील और वे-आवरू करेंगे, मगर फिर भी शर्मिन्दगी मेरा पल्ला नही छोडती। इत्तिफाक की वात है कि जिस तरह मेरी स्त्री और लडके ने इस मामले मे शरीक होकर मुझे छकाया है, उसी तरह देवीसिंह की स्त्री-लडके ने उनके दिल मे भी चुटकी ली है।

देवीसिंह और भूतनाथ की तरह हमारे और ऐयारो के दिलो मे भी करीव-करीव इसी ढग की वातें पैदा हो रही थीं, और इन सव भेदो को जानने के लिए वे वनिस्वत पहले के अव और ज्यादा वेचैन हो रहे थे, तथा यही हाल हमारे महाराज सुरेन्द्रसिंह और गोपालसिंह वगैरह का भी था।

कुछ देर तक ताज्जुव के साथ सन्नाटा रहा, और इसके वाद पुन महाराज ने दोनों कुमारो की तरफ देखकर कहा—

सुरेन्द्रसिंह—ताज्जुब की बात है कि तुम दोनों भाई यहाँ आकर भी अपने को छिपाये रहे।

इन्द्रजीतसिंह—(हाथ जोड़कर) मैं यहाँ हाजिर होकर पहले ही अर्ज कर चुका था कि "हम लोगों का भेद जानने के लिए उद्योग न किया जाये, हम लोग मौका पाकर स्वयं अपने को प्रकट कर देंगे।" इसके अतिरिक्त तिलिस्मी नियमों के अनुसार तब तक हम दोनों भाई प्रकट नहीं हो सकते थे, जब तक कि अपना सारा काम पूरा करके इसी तिलिस्मी चबूतरे की राह से तिलिस्म के बाहर नहीं निकल आते। साथ ही इसके हम लोगों की यह भी इच्छा थी कि जब तक निश्चिन्त होकर खुले तौर पर यहाँ न आ जायें, तब तक कैदियों के मुकदमे का फैसला न होने पाये, क्योंकि इस तिलिस्म के अन्दर जाने के बाद हम लोगों को बहुत से नए-नए भेद मालूम हुए हैं जो (नकाबपोशों की तरफ इशारा करके) इन लोगों से सम्बन्ध रखते हैं, और जिनका आपसे अर्ज करना बहुत जरूरी था।

सुरेन्द्रसिंह—(मुस्कराते हुए और नकाबपोशों की तरफ देखकर) अब तो इन लोगों को भी अपने चेहरों से नकाबें उतार देनी चाहिए। हम समझते हैं इस समय इन लोगों का चेहरा साफ होगा।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह का इशारा पाकर उन नकाबपोशों ने भी अपने-अपने चेहरे से नकाबें हटा दीं, और खड़े होकर अदब के साथ महाराज को सलाम किया। ये नकाबपोश गिनती में पाँच थे और इन्हीं पाँचों में इस समय वे दोनों सूरतें भी दिखाई पड़ीं, जो यहाँ दरबार में पहले दिखाई पड़ चुकी थीं, या जिन्हें देखकर दारोगा और बेगम के होश उड़ गए थे।

अब सभों का ध्यान उन पाँचों नकाबपोशों की तरफ खिंच गया, जिनका असल हाल जानने के लिए लोग पहिले ही से बेचैन हो रहे थे, क्योंकि इन्होंने कैदियों के मामले में कुछ विचित्र ढंग की दिलचस्पी और उलझन पैदा कर दी थी। यद्यपि यह कह सकते हैं कि यहाँ पर इन पाँचों को पहचानने वाला कोई न था, मगर भूतनाथ और राजा गोपालसिंह बड़े गौर से उनकी तरफ देखकर अपनी याददाश्त (स्मरणशक्ति) पर जोर दे रहे थे, और उम्मीद करते थे कि इन्हें हम पहचान लेंगे।

सुरेन्द्रसिंह—(गोपालसिंह की तरफ देखकर) केवल हम लोग नहीं बल्कि हजारों आदमी इनका हाल जानने के लिए बेताब हो रहे हैं, अतः ऐसा करना चाहिए कि एक साथ ही इनका हाल मालूम हो जाय।

गोपालसिंह—मेरी भी यही राय है।

[illegible] [illegible] कि [illegible] लोगों का [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पूरा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] महाराज [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] महाराज की [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] भाई इन [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] किया की

बेचैन हो रहा है, और उनका मालूम होना कैदियो की इच्छा पर निर्भर है।

सुरेन्द्रसिंह—(कुछ सोचकर) खैर, ऐसा ही किया जायेगा।

इसके बाद उन लोगो मे दूसरे तरह की बातचीत होने लगी, जिसके लिखने की कोई आवश्यकता नही जान पडती। इसके घण्टे भर बाद यह दरबार बर्खास्त हुआ और सब कोई अपने-अपने स्थान पर चले गए।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह का दिल किशोरी को देखने के लिए बेताब हो रहा था। उन्हें विश्वास था कि यहाँ पहुँचकर उससे अच्छी तरह मुलाकात होगी और बहुत दिनो का अरमान-भरा दिल उसकी सोहबत मे तल्लीन पाकर पुन उसके कब्जे मे आ जायेगा मगर ऐसा नही हुआ अर्थात् कुमार के आने से पहले ही वह अपने नाना के डेरे मे भेज दी गई, और उनका अरमान-भरा दिल उसी तरह तडपता रह गया। यद्यपि उन्हे इस बात का भी विश्वास था कि अब उनकी शादी किशोरी के साथ बहुत जल्द होने वाली है, मगर फिर भी उनका मनचला दिल जिसे उनके कब्जे के बाहर हुए मुद्दत हो चुकी थी, इन चापलूसियो को कब मानता था। इसी तरह कमलिनी से भी मीठी-मीठी बातें करने के लिए वे कम बेताब न थे, मगर बडो का लिहाज उन्हे इस बात की इजाजत नही देता था कि उससे एकान्त मे मुलाकात करे, यद्यपि वे ऐसा करते तो कोई हर्ज की बात न थी। मगर इसलिए कि उसके साथ भी शादी होने की उम्मीद थी, शर्म और लिहाज के फेर मे पडे हुए थे। परन्तु कमलिनी को इस बात का सोच-विचार कुछ भी न था। हम इसका सबब भी बयान नही कर सकते, हाँ, इतना कहेगे कि जिस कमरे मे कुँअर इन्द्रजीतसिंह का डेरा था उसी के पीछे वाले कमरे मे कमलिनी का डेरा था, और उस कमरे से कुँअर इन्द्रजीतसिंह के कमरे के आने-जाने के लिए एक छोटा-सा दरवाजा भी था जो इस समय भीतर की तरफ से अर्थात् कमलिनी की तरफ से बन्द था और कुमार को इस बात की कुछ भी खबर न थी।

रात पहर भर से ज्यादा जा चुकी थी। कुँअर इन्द्रजीतसिंह अपने पलग पर लेटे हुए किशोरी और कमलिनी के विषय मे तरह-तरह की बातें सोच रहे थे। उनके पास कोई दूसरा आदमी न था और एक तरह पर सन्नाटा छाया हुआ था, यकायक पीछे वाले कमरे का (जिसमे कमलिनी का डेरा था)दरवाजा खुला और अन्दर से एक लौंडी आती हुई दिखाई पडी।

कुमार ने चौंककर उसकी तरफ देखा और उसने हाथ जोडकर अर्ज किया, "कमलिनीजी आपसे मिलना चाहती है, आज्ञा हो तो स्वय यहाँ आवें या आप ही वहाँ तक चले।"

कुमार—वे कहाँ हैं ?

लौंडी—(पिछले कमरे की तरफ बताकर) इसी कमरे मे तो उनका डेरा है।

कुमार—(ताज्जुब से) इसी कमरे मे! मुझे इस बात की कुछ भी खबर न थी। अच्छा मैं स्वय चलता हूँ, तू इस कमरे का दरवाजा बन्द कर दे।

आज्ञा पाते ही लौंडी ने कुमार के कमरे का दरवाजा बन्द कर दिया जिसमे बाहर से कोई यकायक आ न जाय। इसके बाद इशारा पाकर लौंडी कमलिनी के कमरे

की तरफ रवाना हुई और कुमार उसके पीछे-पीछे चले। चौखट के अन्दर पैर रखते ही कुमार की निगाह कमलिनी पर पडी और वे भौचक्के से होकर उसकी सूरत देखने लगे।

इस समय कमलिनी की सुन्दरता बनिस्वत पहले के बहुत ही बढी-चढी देखने मे आई। पहले जिन दिनो कुमार ने कमलिनी की सूरत देखी थी, उन दिनो वह बिलकुल उदासीन और मामूली ढग पर रहा करती थी। मायारानी के झगडे की बदौलत उसकी जान जोखिम मे पडी हुई थी और इस कारण से दिमाग को एक पल के लिए भी छुट्टी नहीं मिलती थी। इन्ही सब कारणो से उसके शरीर और चेहरे की रौनक मे भी बहुत बडा फर्क पड गया था, तिस पर भी वह कुमार की सच्ची निगाह मे एक ही दिखाई देती थी। फिर आज उसकी खुशी और खूबसूरती का क्या कहना है जब कि ईश्वर की कृपा से वह अपने तमाम दुश्मनो पर फतह पा चुकी है, तरद्दुदो के बोझ से हलकी हो चुकी है और मनमानी उम्मीदों के साथ अपने को बनाने-सँवारने का भी मुनासिब मौका उसे मिल गया है। यही सबब है कि इस समय वह रानियो की सी पोशाक और सजावट मे दिखाई देती है।

कमलिनी की इस समय की खूबसूरती ने कुमार पर बहुत बडा असर किया और बनिस्बत पहले के इस समय बहुत ज्यादा कुमार के दिल पर अपना अधिकार जमा लिया, कुमार को देखते ही कमलिनी ने हाथ जोडकर प्रणाम किया और कुमार ने आगे बढकर बडे प्रेम से उसका हाथ पकडकर पूछा, "कहो, अच्छी तो हो?"

"अब भी अच्छी न होऊँगी!" कहकर मुस्कुराती हुई कमलिनी ने कुमार को ले जाकर एक ऊँची गद्दी पर बैठाया और आप भी उनके पास बैठकर यो बातचीत करने लगी।

कमलिनी—कहिये, तिलिस्म के अन्दर आपको किसी तरह की तकलीफ तो नही हुई?

इन्द्रजीतसिंह—ईश्वर की कृपा से हम लोग कुशलपूर्वक यहाँ तक चले आए और अब तुम्हें मददगार देखते हैं क्योंकि यह सब बातें हमें तुम्हारी ही बदौलत नसीब हुई हैं। अगर तुम मदद न करती तो न मालूम हम लोगो की क्या दशा होती! हमारे साथ तुमने जो कुछ उपकार किया है उसका बदला चुकाना मेरी सामर्थ्य के बाहर है, सिवाय इसके मैं क्या कह सकता हूँ कि मेरा (अपनी छाती पर हाथ रख के) यह जान और शरीर तुम्हारा है।

कमलिनी—(मुस्कुरा कर) अब कृपा कर इन बातों को तो रहने दीजिए, [illegible]

[illegible]

[illegible]

इन्द्रजीतसिंह—आखिर बात क्या थी जो उस दिन मैं तुमसे हार गया था ?

कमलिनी—आपको उस बेहोशी की दवा ने कमजोर और खराब कर दिया था जो एक अनाडी ऐयार की बनाई हुई थी। उस समय केवल आपको चैतन्य करने के लिए मै लड पडी थी, नही तो कहाँ मैं और कहाँ आप !

इन्द्रजीतसिंह—खैर, ऐसा ही होगा। मगर इसमे तो कोई शक नही कि तुमने मेरी जान बचाई, केवल उसी दफे नही बल्कि उसके बाद भी कई दफे।

कमलिनी—छोडिए भी, अब इन सब बातो को जाने दीजिये, मै ऐसी बातें नही सुनना चाहती। हाँ, यह बतलाइये कि तिलिम्म के अन्दर आपने क्या-क्या देखा, और क्या-क्या किया ?

इन्द्रजीतसिंह—मैं सब हाल तुमसे कहूँगा, बल्कि उन नकाबपोशो की कैफियत भी तुमसे बयान करूँगा जो मुझे तिलिस्म के अन्दर कैद मिले और जिनका हाल अभी तक मैंने किसी से बयान नही किया। मगर तुम यह सब हाल अपनी जुबान से किसी से न कहना।

कमलिनी—बहुत खूब।

इसके बाद कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने अपना कुल हाल कमलिनी से बयान किया और कमलिनी ने भी अपना पिछला किस्सा और उसी के साथ-साथ भूतनाथ, नानक तथा तारा वगैरह का हाल बयान किया जो कुमार को मालूम न था। इसके बाद पुन उन दोनो मे यो बातचीत होने लगी—

इन्द्रजीतसिंह—आज तुम्हारी जुबानी बहुत-सी ऐसी बाते मालूम हुई है जिनके विषय मे मैं कुछ भी नही जानता था।

कमलिनी—इसी तरह आपकी जुबानी उन नकाबपोशो का हाल सुनकर मेरी अजीब हालत हो रही है, क्या करूँ, आपने मना कर दिया है कि किसी से इस बात का जिक्र न करना, नही तो अपने सुयोग्य पति से उनके विषय मे

इन्द्रजीतसिंह—(चौंककर) हैं ! क्या तुम्हारी शादी हो गई ?

कमलिनी—(कुमार के चेहरे का रग उडा हुआ देख मुस्कुराकर) मैं अपने उस तालाब वाले मकान मे अर्ज कर चुकी थी कि मेरी शादी बहुत जल्द होने वाली है।

इन्द्रजीतसिंह—(लम्बी साँस लेकर) हाँ, मुझे याद है, मगर यह उम्मीद न थी कि वह इतनी जल्दी हो जायगी।

कमलिनी—तो क्या आप मुझे हमेशा कुंआरी ही देखना पसन्द करते थे ?

इन्द्रजीतसिंह—नही, ऐसा तो नही है, मगर

कमलिनी—मगर क्या ? कहिए-कहिए, रुके क्यो ?

इन्द्रजीतसिंह—यही कि मुझसे पूछ तो लिया होता।

कमलिनी—क्या खूब ! आपने क्या मुझसे पूछकर इन्द्रानी के साथ शादी की थी जो मैं आपसे पूछ लेती।

इतना कहकर कमलिनी हँस पडी और कुमार ने शरमाकर सिर झुका लिया। मगर इस समय कुमार के चेहरे से भी मालूम होता था कि उन्हे हद दर्जे का रज है और

कलेजे में बेहिसाब तकलीफ हो रही है।

कुमार—(कमलिनी के पास से कुछ खिसककर) मुझे विश्वास था कि जन्म-भर तुमसे हँसने-बोलने का मौका मिलेगा।

कमलिनी—मेरे दिल में भी यही बात बैठी हुई थी और यही तय करके मैंने शादी की है कि आपसे कभी अलग होने की नौबत न आवे। मगर आप हट क्यों गये? आइये-आइये, जिस जगह बैठे थे, वहीं बैठिए।

कुमार—नहीं-नहीं, पराई स्त्री के साथ एकान्त में बैठना ही धर्म के विरुद्ध है न कि साथ सटना, मगर आश्चर्य है कि तुम्हें इस बात का कुछ भी खयाल नहीं है! मुझे विश्वास था कि तुमसे कभी कोई काम धर्म के विरुद्ध न हो सकेगा।

कमलिनी—मुझमें आपने कौन-सी बात धर्म-विरुद्ध पाई?

कुमार—यही कि तुम इस तरह एकान्त में बैठकर मुझसे बातें कर रही हो! इससे भी बढ़कर वह बात जो अभी तुमने अपनी जुबान से कबूल की है कि 'तुमसे कभी अलग न होऊँगी'। क्या यह धर्म-विरुद्ध नहीं है? क्या तुम्हारा पति इस बात को जानकर भी तुम्हें पतिव्रता कहेगा?

कमलिनी—कहेगा, और जरूर कहेगा। अगर न कहे तो इसमें उसकी भूल है। मुझे निश्चय है और आप सच समझिये कि कमलिनी प्राण दे देना स्वीकार करेगी, परन्तु धर्म-विरुद्ध पथ पर चलना कदापि नहीं। आपको मेरी नीयत पर ध्यान देना चाहिए। कि [illegible] बातों पर नहीं, क्योंकि मैं ऐयार भी हूँ। यदि मेरा पति इस समय यहाँ आ जाय तो [illegible] मालूम हो जाय कि मुझ पर वह जरा भी शक नहीं करता और मेरा इस तरह बैठना उसे कुछ भी नहीं अखरता।

कुमार—(कुछ सोचकर) ताज्जुब है!

कमलिनी—अभी क्या, आगे आपको और भी ताज्जुब होगा।

इतना कहकर कमलिनी ने कुमार की कलाई पकड़ ली और अपनी तरफ खींचकर कहा, "पहिले आप अपनी जगह पर आकर बैठ जाइये तब मुझसे बात कीजिए।"

कुमार—नहीं-नहीं कमलिनी, तुम्हें ऐसा उचित नहीं है। दुनिया में धर्म से बढ़कर और कोई पदार्थ नहीं है। अतएव तुम्हें भी धर्म पर ध्यान रखना चाहिए। अब तुम [illegible]

कमलिनी—यह सच है, परन्तु मैं आपसे पूछती हूँ कि यदि मेरी शादी आपके [illegible] कभी [illegible] न [illegible]?

[illegible]

[illegible]

[illegible]

हूँ अतएव आप मेरे बहनोई हुए, कहिए कि हाँ।

कुमार—यह कोई बात नही है, क्योकि अभी किशोरी की शादी मेरे साथ नही हुई है।

कमलिनी—खैर, जाने दीजिये। मैं दूसरा और तीसरा नाता बताती हूँ। जिनके साथ मेरी शादी हुई है, वे राजा गोपालसिंह के भाई हैं। इसके अतिरिक्त लक्ष्मीदेवी की मैं छोटी बहिन हूँ अतएव आपकी साली भी हुई।

कुमार—(कुछ सोचकर) हाँ, इस बात से तो मैं कायल हुआ। मगर तुम्हारी नीयत मे किसी तरह फर्क न आना चाहिए।

कमलिनी—इससे आप बेफिक्र रहिये। मैं अपना धर्म किसी तरह नही बिगाड सकती और न दुनिया मे कोई ऐसा पैदा हुआ है जो मेरी नीयत बिगाड सके, आइए अब तो अपने ठिकाने पर बैठ जाइए।

लाचार कुँअर इन्द्रजीतसिंह अपने ठिकाने आ बैठे और पुन बातचीत करने लगे, मगर उदास बहुत थे और यह बात उनके चेहरे से जाहिर हो रही थी।

यकायक कमलिनी ने मसखरेपन के साथ हँस दिया जिससे कुमार को खयाल हो गया कि इसने जो कुछ कहा सब झूठ और केवल दिल्लगी के लिए था। मगर साथ ही इसके उनके दिल का खुटका साफ नही हुआ।

कमलिनी—अच्छा आप यह बताइए कि तिलिस्म की कैफियत देखने के लिए राजा साहब तिलिस्म के अन्दर जायेंगे या नही ?

कुमार—जरूर जायेंगे।

कमलिनी—कब ?

कुमार—सो मैं ठीक नही कह सकता, शायद कल या परसो ही जाये। कहते थे कि तिलिस्म के अन्दर चलकर उसे देखने का इरादा है। इसके जवाब मे भाई गोपालसिंह ने कहा कि कि जरूर और जल्द चलकर देखना चाहिए।

कमलिनी—तो क्या हम लोगो को साथ ले जायेंगे ?

कुमार—सो मैं कैसे कहूँ ? तुम गोपाल भाई से कहो, वह इसका बन्दोबस्त जरूर कर देंगे, मुझे तो कुछ शर्म मालूम होगी।

कमलिनी—सो तो ठीक है, अच्छा, मैं कल उनसे कहूँगी।

कुमार—मगर तुम लोगो के साथ किशोरी भी अगर तिलिस्म के अन्दर जाकर वहाँ की कैफियत न देखेगी तो मुझे इस बात का रज जरूर होगा।

कमलिनी—बात तो वाजिब है, मगर वह इस मकान मे तभी आवेंगी जब उनकी शादी आपके साथ हो जायगी और इसीलिए वह अपने नाना के डेरे मे भेज दी गई हैं। खैर, तो आप इस मामले को तब तक के लिए टाल दीजिए जब तक आपकी शादी न हो जाय।

कुमार—मैं भी यही उचित समझता हूँ, अगर महाराज मान जाये तो।

कमलिनी—या आप हम लोगो को फिर दूसरी दफे ले जाइयेगा।

कुमार—हाँ, यह भी हो सकता है। अबकी दफे का वहाँ जाना महाराज की

इच्छा पर ही छोड़ देना चाहिए, वे जिसे चाहें ले जायें।

कमलिनी—बेशक, ऐसा ही ठीक होगा। अब तिलिस्म के अन्दर जाने में आपत्ति तो काहे की है, जब और जितनी दफे आप चाहेंगे हम लोगों को ले जायेंगे।

कुमार—नहीं, सो बात ठीक नहीं। बहुत सी जगहें ऐसी हैं जहाँ सैकड़ों दफे जाने में भी कोई हर्ज नहीं है, मगर बहुत-सी जगहें तिलिस्म टूट जाने पर भी नाजुक हालत में बनी हुई हैं और जहाँ बार-बार जाना कठिन है, तथापि मैं तुम लोगों को वहाँ की सैर जरूर कराऊँगा।

कमलिनी—मैं समझती हूँ कि मेरे उस तालाब वाले तिलिस्मी मकान के नीचे भी कोई तिलिस्म जरूर है। उन खून से लिखी हुई तिलिस्मी किताब का मजमून पूरी तरह से मेरी समझ में नहीं आता था, तथापि इस ढंग की बातों पर कुछ शक जरूर होता था।

कुमार—तुम्हारा खयाल बहुत ठीक है, हम दोनों भाइयों को खून से लिखी उस तिलिस्मी किताब के पढ़ने से बहुत ज्यादा हाल मालूम हुआ है, इसके अतिरिक्त मुझे तुम्हारा वह स्थान भी ज्यादा पसन्द है और पहले भी मैं (जब तुम्हारे पास वहाँ था) यह विचार कर चुका था कि 'सब कामों से निश्चिन्त होकर कुछ दिनों के लिए जरूर वहाँ डेरा जमाऊँगा, परन्तु अब मेरा वह विचार कुछ काम नहीं दे सकता।

कमलिनी—सो क्यों?

कुमार—इसलिए कि अगर तुम्हारी बातें ठीक हैं, तो अब वह स्थान तुम्हारे पति के अधिकार में होगा।

कमलिनी—(मुस्कुराकर) तो क्या हर्ज है, मैं उनसे कहकर आपको दिला दूँगी।

कुमार—मैं किसी से भीख माँगना पसन्द नहीं करता और न उनसे लड़कर वह स्थान छीनने में ही मुझे मंजूर होगा। कमलिनी, सच तो यह है कि तुमने मुझे धोखा दिया और बहुत बड़ा धोखा दिया! मुझे तुमसे यह उम्मीद न थी। (कुछ सोचकर) एक दफे तुम मुझसे फिर कह दो कि सचमुच शादी हो गई।

इसके जवाब में कमलिनी खिलखिलाकर हँस पड़ी और बोली, "हाँ, हो गई।"

कुमार ने सिर पर हाथ रखकर लम्बी साँस ली।

कमलिनी—(कुमार के पैरों पर हाथ रखकर) आपके [illegible] कसम खाकर कहती हूँ कि मेरी शादी हो गई।

[illegible] नहीं कह सकते कि उस समय कुमार के दिल की कैसी बुरी हालत थी, रंज और अफसोस के [illegible] आता था और कमलिनी [illegible] चुटकियाँ लेती थी। [illegible] कुमार [illegible] गए और अपने [illegible] बैठे और फिर [illegible] लम्बी [illegible] नींद न आई।

5

महाराज की आज्ञानुसार कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के विवाह की तैयारी बडी धूमधाम से हो रही है। यहाँ से चुनार तक की सडकें दोनो तरफ जाफरी वाली टट्टियो से सजाई हैं, जिन पर रोशनी की जायेगी और जिनके बीच मे थोडी-थोडी दूर पर बडे फाटक बने हुए है और उन पर नौबतखाने का इन्तजाम किया गया है। टट्टियो के दोनो तरफ बाजार बसाया जायेगा, जिसकी तैयारी कारिन्दे लोग बडी खूबी और मुस्तैदी के साथ कर रहे है। इसी तरह और भी तरह-तरह के तमाशो का इन्तजाम बीच-बीच मे हो रहा है, जिसके सबब से बहुत ज्यादा भीड-भाड होने की उम्मीद है और अभी से तमाशबीनो का जमावडा भी हो रहा है। रोशनी के साथ-साथ आतिशबाजी के इन्तजाम मे भी बडी सरगर्मी दिखाई जा रही है, कोशिश हो रही है कि उम्दा से उम्दा तथा अनूठी आतिशबाजी का तमाशा लोगो को दिखाया जाये। इसी तरह और भी कई तरह के खेल-तमाशे और नाच इत्यादि का बन्दोबस्त हो रहा है, मगर इस समय हमे इन सब बातो से कोई मतलब नही है क्योकि हम अपने पाठको को उस तिलिस्मी मकान की तरफ ले चलना चाहते है, जहाँ भूतनाथ और देवीसिंह ने नकाबपोशो के फेर मे पड़कर शर्मिन्दगी उठाई थी और जहाँ इस समय दोनो कुमार अपने दादा, पिता तथा और सब आपस वालो को तिलिस्मी तमाशा दिखाने के लिए ले जा रहे हैं।

सुबह का सुहावना समय है और ठडी हवा चल रही है। जगली फूलो की खुशबू से मस्त सुन्दर-सुन्दर रग-बिरगी खूबसूरत चिडियाएँ हमारे सर्वगुण-सम्पन्न मुसाफिरो को मुबारकबाद दे रही हैं, जो तिलिस्म की सैर करने की नीयत से मीठी-मीठी बाते करते हुए जा रहे है।

घोडे पर सवार महाराज सुरेन्द्रसिंह, राजा वीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, गोपालसिंह, इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह तथा पैदल तेजसिंह, देवीसिंह, भूतनाथ, पडित बद्रीनाथ, रामनारायण, पन्नालाल वगैरह अपने ऐयार लोग जा रहे थे। तिलिस्म के अन्दर मिले हुए कैदी अर्थात् नकाबपोश लोग तथा भैरोसिंह और तारासिंह इस समय साथ न थे। इस समय देवीसिंह से ज्यादा भूतनाथ का कलेजा उछल रहा था और वह अपनी स्त्री का असली भेद जानने के लिए बेताब हो रहा है। जब से उसे इस बात का पता लगा कि वे दोनो सरदार नकाबपोश यही दोनो कुमार हैं तथा उस विचित्र मकान के मालिक भी यही हैं, तब से उसके दिल का खुटका कुछ कम तो हो गया, मगर खुलासा हाल जानने और पूछने का मौका न मिलने के सबब उसकी बेचैनी दूर नही हुई थी। वह यह भी जानना चाहता था कि अब उसकी स्त्री तथा लड़का हरनामसिंह किस फिक्र मे हैं। इस समय जब वह फिर उसी ठिकाने जा रहा था, जहाँ अपनी स्त्री की बदौलत गिरफ्तार होकर अपने लडके का विचित्र हाल देखा था, तब उसका दिल और बेचैन हो उठा था मगर साथ ही इसके उसे इस बात की भी उम्मीद हो रही थी कि अब उसे उसकी स्त्री का हाल मालूम हो जायेगा या कुछ पूछने का मौका ही मिलेगा।

ये लोग धीरे-धीरे बातचीत करते हुए उसी खोह या सुरंग की तरफ जा रहे थे। दिन पहर भर से ज्यादा न चढ़ा होगा, जब ये लोग उस ठिकाने पहुँच गए। महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह वगैरह घोड़ों पर से नीचे उतर पड़े, साईसों ने घोड़े थाम लिए और इसके बाद उन सभी ने सुरंग के अन्दर पैर रखा। इस सुरंग वाले रास्ते का कुछ खुलासा हाल हम इस सन्तति के उन्नीसवें भाग में लिख आये हैं, जब भूतनाथ यहाँ आया था, अब उसे पुनः दोहराने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती। हाँ, इतना लिख देना जरूरी जान पड़ता है कि दोनों कुमारों ने सभी को यह बात समझा दी कि यह रास्ता बन्द क्योंकर हो सकता है। बन्द होने का स्थान वही चबूतरा था जो सुरंग के बीच में पड़ता था।

जिस समय ये लोग सुरंग तय करके मैदान में पहुँचे, सामने वही छोटा बँगला दिखाई दिया, जिसका हाल हम पहले लिख चुके हैं। इस समय उस बँगले के आगे वाले दालान में दो नकाबपोश औरतें हाथ में तीर-कमान लिए टहलती पहरा दे रही थीं जिन्हें देखते ही खास करके भूतनाथ और देवीसिंह को बड़ा ताज्जुब हुआ और उनके दिल में तरह तरह की बातें पैदा होने लगीं। भूतनाथ का इशारा पाकर देवीसिंह ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह से पूछा, "ये दोनों नकाबपोश औरतें कौन हैं जो पहरा दे रही हैं?" इसके जवाब में कुमार तो चुप रह गए, मगर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने कहा, "इसके जानने की तुम लोगों को क्या जल्दी पड़ी हुई है? जो कोई होगी, सब मालूम ही हो जायेगा।"

इस जवाब ने देवीसिंह और भूतनाथ को देर तक के लिए चुप कर दिया और विश्वास दिला दिया कि महाराज को इनका हाल जरूर मालूम है।

जब उन औरतों ने इन सभी को पहचाना और अपनी तरफ आते देखा, तो बँगले के अन्दर घुसकर गायब हो गईं, तब तक ये लोग भी उस दालान में जा पहुँचे। इस समय भी यह बँगला उसी हालत में था जैसा कि भूतनाथ और देवीसिंह ने देखा था।

हम पहले लिख चुके हैं और अब भी लिखते हैं कि यह बँगला जैसा बाहर से सादा और साधारण मालूम होता था वैसा अन्दर से न था और यह बात दालान में पहुँचने के साथ ही सभी को मालूम हो गई। दालान की दीवारों में निहायत खूबसूरत और आला दर्जे की कारीगरी का नमूना दिखाने वाली तस्वीरों को देखकर सब कोई दंग हो गए और [illegible] की तारीफ करने लगे। ये तस्वीरें एक निहायत आलीशान इमारत की थीं और उसके ऊपर [illegible] हरफों में यह लिखा हुआ था—

"यह तिलिस्म चुनारगढ़ के पास ही एक निहायत खूबसूरत जंगल में कायम किया गया है जिसे महाराज सुरेन्द्रसिंह के लड़के वीरेन्द्रसिंह तोड़ेंगे।"

इस तस्वीर को देखते ही सभी को विश्वास हो गया कि यह तिलिस्मी चबूतरे [illegible] जिस पर उस समय निहायत आलीशान इमारत बनी हुई [illegible] में था, जिसे जमाने के हेर-फेर ने अच्छी तरह बर्बाद करके [illegible] बना दिया। इमारत की उस बड़ी और पूरी तस्वीर के नीचे उसके [illegible] भी दिखाए गए थे और उस बगुले की तस्वीर भी [illegible] हाथ ने ऊँचा उठा लिया और कहा, 'बेशक अपने

जमाने में वह बहुत अच्छी इमारत थी।"

सुरेन्द्रसिंह—यद्यपि आजकल जो इमारत तिलिस्मी खँडहर पर बनी है और जिसके बनवाने में जीतसिंह ने अपनी तबीयतदारी और कारीगरी का अच्छा नमूना दिखाया है, बुरी नही है, मगर हमे इस पहली इमारत का ढग कुछ अनूठा और सुन्दर मालूम पडता है।

जीतसिंह—बेशक ऐसा ही है। यदि इस तस्वीर को मैं पहले देखे हुए होता तो जरूर इसी ढग की इमारत बनवाता।

वीरेन्द्रसिंह—और ऐसा होने से वह तिलिस्म एक दफे नया मालूम पडता।

इन्द्रजीतसिंह—यह चुनारगढ़ वाला तिलिस्म साधारण नही बल्कि बहुत बडा है। चुनारगढ, विजयगढ और जमानिया तक इसकी शाखा फैली हुई है। इस बँगले को इस बहुत बडे और फैले तिलिस्म का 'केन्द्र' समझना चाहिए, बल्कि ऐसा भी कह सकते है कि यह बँगला तिलिस्म का नमूना है।

थोड़ी देर तक दालान मे खडे इसी किस्म की बातें होती रही और इसके बाद सभी को साथ लिए हुए दोनो कुमार बँगले के अन्दर रवाना हुए।

सदर दरवाजे का पर्दा उठाकर अन्दर जाते ही ये लोग एक गोल कमरे मे पहुँचे, जो भूतनाथ और देवीसिंह का देखा हुआ था। इस गोल और गुम्बददार खूबसूरत कमरे की दीवारो पर जगलो, पहाडो और रोहतासगढ की तस्वीरे बनी हुई थी। घडी-घडी तारीफ न करके एक ही दफे लिख देना ठीक होगा कि इस बँगले मे जितनी तस्वीरें देखने मे आई, सभी आला दर्जे की कारीगरी का नमूना थी और यही मालूम होता था कि आज ही बनकर तैयार हुई हैं। इस रोहतासगढ की तस्वीर को देखकर सब कोई बडे प्रसन्न हुए और राजा वीरेन्द्रसिंह ने तेजसिंह की तरफ देखकर कहा, "रोहतासगढ किले और पहाडी की बहुत ठीक और साफ तस्वीर बनी हुई है।"

तेजसिंह—जगल भी उसी ढग का बना हुआ है, कही-कही से ही फर्क मालूम पडता है, नही तो बाज जगहे तो ऐसी बनी हुई है जैसी मैंने अपनी आँखो से देखी है। (उँगली का इशारा करके) देखिये यह वही कब्रिस्तान है जिस राह से हम लोग रोहतासगढ के तहखाने मे घुसे थे। हाँ, यह देखिए, बारीक हरफो मे लिखा हुआ भी है—"तहखाने मे जाने का बाहरी फाटक।"

इन्द्रजीतसिंह—इस तस्वीर को अगर गौर से देखेंगे तो वहाँ का बहुत ज्यादा हाल मालूम होगा। जिस जमाने मे यह इमारत तैयार हुई थी, उस जमाने मे वहाँ की और उसके चारो तरफ की जैसी अवस्था थी, वैसी ही इस तस्वीर मे दिखाई है, आज चाहे कुछ फर्क पड गया हो।

तेजसिंह—बेशक ऐसा ही है।

इन्द्रजीतसिंह—इसके अतिरिक्त एक और ताज्जुब की बात अर्ज करूँगा।

वीरेन्द्रसिंह—वह क्या?

इन्द्रजीतसिंह—इसी दीवार मे से वहाँ (रोहतासगढ) जाने का रास्ता भी है

सुरेन्द्रसिंह—वाह-वाह! क्या तुम इस रास्ते को खोल भी सकते हो?

इन्द्रजीतसिंह—जी हाँ, हम लोग इसमें बहुत दूर तक जाकर घूम आये हैं।

सुरेन्द्रसिंह—यह भेद तुम्हें क्योंकर मालूम हुआ?

इन्द्रजीतसिंह—उसी 'रिक्तगन्थ' की बदौलत हम दोनों भाइयों को इन सब जगहों का हाल और भेद पूरा-पूरा मालूम हो चुका है। यदि आज्ञा हो तो दरवाजा खोल कर मैं आपको रोहतासगढ़ के तहखाने में ले जा सकता हूँ। वहाँ के तहखाने में भी एक छोटा-सा तिलिस्म है, जो इसी बड़े तिलिस्म से सम्बन्ध रखता है और हम लोग उसे खोल या तोड़ भी सकते हैं परन्तु अभी तक ऐसा करने का इरादा नहीं किया।

सुरेन्द्रसिंह—उस रोहतासगढ़ वाले तिलिस्म के अन्दर क्या चीज है?

इन्द्रजीतसिंह—उसमें केवल अनूठे अद्भुत आश्चर्य गुण वाले हर्बे रखे हुए हैं, इन्हीं हर्बों पर वह तिलिस्म बँधा है। जैसा तिलिस्मी खंजर हम लोगों के पास है या जैसे तिलिस्मी जिरहबख्तर और हर्बों की बदौलत राजा गोपालसिंह ने कृष्ण जिन्न का रूप धरा था, ऐसे हर्बों और असबाबों का तो वहाँ ढेर लगा हुआ है, हाँ, खजाना वहाँ कुछ भी नहीं है।

सुरेन्द्रसिंह—ऐसे अनूठे हर्बे खजाने से क्या कम हैं?

जीतसिंह—बेशक! (इन्द्रजीतसिंह से) जिस हिस्से को तुम दोनों भाइयों ने तोड़ा है, उसमें भी तो ऐसे अनूठे हर्बे होंगे?

इन्द्रजीतसिंह—जी हाँ, मगर बहुत कम हैं।

सुरेन्द्रसिंह—अच्छा यदि ईश्वर की कृपा हुई तो फिर किसी मौके पर इस रास्ते से रोहतासगढ़ जाकर तमाशा देखेंगे। (मकान की सजावट और परदों की तरफ देखकर) क्या यह सब सामान, कन्दील, पर्दे और बिछावन वगैरह तुम लोग तिलिस्म के अन्दर से लाए हो?

इन्द्रजीतसिंह—जी नहीं, जब हम लोग यहाँ आए, तो इस बंगले को इसी तरह सजा-सजाया पाया और कई-एक आदमियों को भी देखा जो इस बंगले की हिफाजत और [illegible] का इन्तजाम करते थे।

सुरेन्द्रसिंह—(ताज्जुब से) वे लोग कौन थे और अब कहाँ हैं?

इन्द्रजीतसिंह—दरियाफ्त करने पर मालूम हुआ कि वे लोग इन्द्रदेव के मुलाजिम थे और [illegible] के पास चले गए हैं। इस तिलिस्म का दारोगा असल में इन्द्रदेव है [illegible] भी इन्हीं के बुजुर्ग लोग दारोगा होते आए हैं।

सुरेन्द्रसिंह—यह तुमने बड़ी खुशी की बात सुनाई, मगर अफसोस यह है कि [illegible] कभी कुछ भी खबर न दी।

[illegible] आपसे छिपाया, तो यह कोई [illegible] ऐसा होना ही वाजिब था।

[illegible] मालूम होता है कि यह सब सामान तुम्हारी खातिर- [illegible] किया है।

[illegible] भी यहाँ आया है।

[illegible] और [illegible]

करते रहे और फिर आगे की तरफ बढे। जब पहले भूतनाथ और देवीसिंह यहाँ आये थे, तब हम लिख चुके हैं कि इस कमरे मे सदर दरवाजे के अतिरिक्त और भी तीन दरवाजे थे—इत्यादि। अत उन दोनो ऐयारो की तरह इस समय भी सभी को साथ लिए हुए दोनो कुमार दाहिनी तरफ वाले दरवाजे के अन्दर गए, और घूमते हुए उसी बहुत बडे और आलीशान कमरे मे पहुँचे, जिसमे पहले भूतनाथ और देवीसिंह ने पहुँच कर आश्चर्य-भरा तमाशा देखा था।

इस आलीशान कमरे की तस्वीरे खूबी और खूबसूरती मे सब तस्वीरो से बढी-चढी थी तथा दीवारो पर जगल, मैदान पहाड, खोह, दर्रे, झरने, शिकारगाह तथा शहरपनाह, किले, मोर्चे और लडाई इत्यादि की बहुत तस्वीरे बनी हुई थी, जिन्हे सब कोई गौर और ताज्जुब के साथ देखने लगे।

सुरेन्द्रसिंह—(किले की तरफ इशारा करके) यह तो चुनारगढ की तस्वीर है।

इन्द्रजीतसिंह—जी हाँ, (उँगली का इशारा करके) और यह जमानिया के किले तथा खास बाग की तस्वीर है। इसी दीवार मे से वहाँ जाने का भी रास्ता है। महाराज सूर्यकान्त के जमाने मे उनके शिकारगाह और जगल की यह सूरत थी।

वीरेन्द्रसिंह—और यह लडाई की तस्वीर कैसी है? इसका क्या मतलब है?

इन्द्रजीतसिंह—इन तस्वीरो मे बडी कारीगरी खर्च की गई है। महाराज सूर्यकान्त ने अपनी फौज को जिस तरह की कवायद और व्यूह-रचना इत्यादि का ढग सिखाया था वे सब बातें इन तस्वीरो मे भरी हुई है। एक तरकीब करने से ये सब तस्वीरे चलती-फिरती और काम करती नजर आएँगी और साथ ही इसके फौजी बाजा भी बजता हुआ सुनाई देगा अर्थात् इन तस्वीरो मे जितने बाजे वाले है वे सब भी अपना-अपना काम करते हुए मालूम पडेगे, परन्तु इस फौजी तमाशे का आनन्द रात को मालूम पडेगा, दिन को नही। इन्ही तस्वीरो के कारण इस कमरे का नाम 'व्यूह-मण्डल' रक्खा गया है, वह देखिए ऊपर की तरफ बडे हरफों मे लिखा हुआ है।

सुरेन्द्रसिंह—यह बहुत अच्छी कारीगरी है। इस तमाशे को हम जरूर देखेंगे बल्कि और भी कई आदमियो को दिखाएँगे।

इन्द्रदेव—बहुत अच्छा, रात हो जाने पर मैं इसका बन्दोबस्त करूँगा, तब तक आप और चीजो को देखें।

ये लोग जिस दरवाजे से इस कमरे मे आये थे, उसके अतिरिक्त एक दरवाजा और भी था जिस राह से सभी को लिए दोनो कुमार दूसरे कमरे मे पहुँचे। इस कमरे की दीवार बिल्कुल साफ थी अर्थात् उस पर किसी तरह की तस्वीर बनी हुई न थी। कमरे के बीचोबीच दो चबूतरे सगमरमर के बने हुए थे जिसमे एक तो खाली था और दूसरे चबूतरे के ऊपर सफेद पत्थर की एक खूबसूरत पुतली बैठी हुई थी। इस जगह पर ठहर कर कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने अपने दादा और पिता की तरफ देखा और कहा, "नकाबपोशो की जुबानी हम लोगो का तिलिस्मी हाल जो कुछ आपने सुना है, वह तो याद ही होगा, अत. हम लोग पहली दफा तिलिस्म से बाहर निकलकर जिस सुहावनी

घाटी में पहुँचे थे वह यही स्थान है।[1] इसी चबूतरे के अन्दर से हम लोग बाहर हुए थे। उस 'रिक्तगंथ' की बदौलत हम दोनों भाई यहाँ तक तो पहुँच गए मगर उसके बाद इस चबूतरे वाले तिलिस्म को खोल न सके, हाँ इतना जरूर है कि उस 'रिक्तगंथ' की बदौलत इस चबूतरे में से (जिस पर एक पुतली बैठी हुई थी उसकी तरफ इशारा करके) एक दूसरी किताब हाथ लगी जिसकी बदौलत हम लोगों ने उस चबूतरे वाले तिलिस्म को खोला और उसी राह से आपकी सेवा में जा पहुँचे।

"आप सुन चुके हैं कि जब हम दोनों भाई राजा गोपालसिंह को मायारानी की कैद से छुड़ा कर जमानिया के खास बाग वाले देवमन्दिर में गये थे तब वहाँ पहले आनन्दसिंह तिलिस्म के फन्दे में फँस गये थे, उन्हें छुड़ाने के लिए जब मैं भी उसी गड़हे या कुएँ में कूद पड़ा तो चलता-चलता एक दूसरे बाग में पहुँचा जिसके बीचोबीच में एक मन्दिर था। उस मन्दिर वाले तिलिस्म को जब मैंने तोड़ा तो वहाँ एक पुतली के अन्दर कोई चमकती हुई चीज मुझे मिली।"[2]

वीरेन्द्रसिंह—हाँ, हमें याद है, उस मूरत को तुमने उखाड़ कर किसी कोठरी के अन्दर फेंक दिया था और वह फट कर चूने की कली की तरह हो गई थी। उसी के पेट में से...

इन्द्रजीतसिंह—जी हाँ।

सुरेन्द्रसिंह—तो वह चमकती हुई चीज क्या थी और वह कहाँ है?

इन्द्रजीतसिंह—वह हीरे की बनी हुई एक चाबी थी जो अभी तक मेरे पास मौजूद है, (जेब में से निकाल कर और महाराज को दिखा कर) देखिये, यही ताली इस पुतली के पेट में लगती है।

सभी ने उस ताली को गौर से देखा और इन्द्रजीतसिंह ने सभी के देखते-देखते उस चबूतरे पर बैठी हुई पुतली की नाभि में वह ताली लगाई। उसका पेट छोटी आलमारी के पल्ले की तरह खुल गया।

इन्द्रजीतसिंह—बस इसी में से वह किताब मेरे हाथ लगी जिसकी बदौलत यह [illegible] तिलिस्म खोला।

सुरेन्द्रसिंह—अब वह किताब कहाँ है?

इन्द्रजीतसिंह—आनन्दसिंह के पास मौजूद है।

इतना कह कर इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह की तरफ देखा और उन्होंने वह [illegible] जिसके अक्षर बहुत बारीक थे, महाराज के हाथ में दे दी। वह किताब [illegible] गौर से देखा और [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

डाल के कोई पेंच घुमाया जिससे चबूतरे के दाहिनी तरफ वाली दीवार किवाड के पल्ले की तरह धीरे-धीरे खुल कर जमीन के साथ सट गई और नीचे उतरने के लिए सीढियाँ दिखाई देने लगी। इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खजर हाथ मे लिया और उसका कब्जा दबा कर रोशनी करते हुए चबूतरे के अन्दर घुसे तथा सभी को अपने पीछे आने के लिए कहा। सभी के पीछे आनन्दसिंह तिलिस्मी खजर की रोशनी करते हुए चबूतरे के अन्दर घुसे। लगभग पन्द्रह-बीस चक्करदार सीढियो के नीचे उतरने के बाद ये लोग एक बहुत बडे कमरे मे पहुँचे जिसमें सोने-चाँदी के सैकडो बडे-बडे हण्डे, अशर्फियो और जवाहिरात से भरे हुए पडे थे जिन्हें सभी ने बडे गौर और ताज्जुब के साथ देखा और महाराज ने कहा, "इस खजाने का अन्दाज करना भी मुश्किल है।"

इन्द्रजीतसिंह—जो कुछ खजाना इस तिलिस्म के अन्दर मैंने देखा और पाया है उसका यह पासगा भी नही है। उसे बहुत जल्द ऐयार लोग आपके पास पहुँचावेंगे। उन्ही के साथ-साथ कई चीजें दिल्लगी की भी हैं जिसमे एक चीज वह भी है जिसकी बदौलत हम लोग एक दफा हँसते-हँसते दीवार के अन्दर कूद पडे थे और मायारानी के हाथ मे गिरफ्तार हो गए थे।

जीतसिंह—(ताज्जुब से) हाँ! अगर वह चीज शीघ्र बाहर निकाल ली जाय तो (सुरेन्द्रसिंह से) कुमारो की शादी मे सर्वसाधारण को भी उसका तमाशा दिखाया जा सकता है।

सुरेन्द्रसिंह—बहुत अच्छी बात है, ऐसा ही होगा।

इन्द्रजीतसिंह—इस तिलिस्म मे घुसने के पहले ही मैंने सभी का साथ छोड दिया अर्थात् नकाबपोशो को (कैदियो को) बाहर ही छोडकर केवल हम दोनो भाई ही इसके अन्दर घुसे और काम करते हुए धीरे-धीरे आपकी सेवा मे जा पहुँचे।

सुरेन्द्रसिंह—तो शायद उसी तरह हम लोग भी यह सब तमाशा देखते हुए उसी चबूतरे की राह बाहर निकलेंगे ?

जीतसिंह—मगर क्या उन चलती-फिरती तस्वीरो का तमाशा न देखिएगा ?

सुरेन्द्रसिंह—हाँ, ठीक है, उस तमाशे को तो जरूर देखेंगे।

इन्द्रजीतसिंह—तो अब यहाँ से लौट चलना चाहिए, क्योकि इस कमरे के आगे बढकर फिर आज ही लौट आना कठिन है, इसके अतिरिक्त अब दिन भी थोडा ही रह गया है, सध्या-वन्दन और भोजन इत्यादि के लिए भी कुछ समय चाहिए और फिर उन तस्वीरो का तमाशा भी कम-से-कम चार-पाँच घण्टे मे पूरा होगा।

सुरेन्द्रसिंह—क्या हर्ज है, लौट चलो।

महाराज की आज्ञानुसार सब कोई वहाँ से लौटे और घूमते हुए बँगले के बाहर निकल आये, देखा तो वास्तव मे दिन बहुत कम रह गया था।

6

रात आधे घण्टे मे कुछ ज्यादा जा चुकी थी जव सव कोई अपने जरूरी कामो से निश्चिन्त हो बँगले के अन्दर घुसे और घूमते-फिरते उसी चलती-फिरती तस्वीरो वाले कमरे मे पहुँचे। उस समय बँगले के अन्दर हर एक कमरे मे रोशनी बखूबी हो रही थी जिसके विषय मे भूतनाथ और देवीसिंह ने ताज्जुब के साथ खयाल किया कि यह काम बेशक उन्ही लोगो का होगा जिन्हे यहाँ पहुँचने के साथ ही हम लोगो ने पहरा देते देखा था या जो हम लोगो को देखते ही बँगले के अन्दर घुसकर गायब हो गए थे। ताज्जुब है कि महाराज को तथा और लोगो को भी उनके विषय मे कुछ खयाल नही है और न कोई पूछता ही है कि वे कौन थे और कहाँ गए, मगर हमारा दिल उनका हाल जाने बिना बेचैन हो रहा है।

चलती-फिरती तस्वीरो वाले कमरे मे फर्श बिछा हुआ था और गद्दी लगी हुई थी जिस पर सब कोई कायदे से अपने-अपने ठिकाने पर बैठ गए और इसके बाद इन्द्रजीतसिंह की आज्ञानुसार रोशनी गुल कर दी गई। कमरे मे बिल्कुल अन्धकार छा गया, यह नही मालूम होता था कि कौन क्या कर रहा है, खास करके इन्द्रजीतसिंह की तरफ लोगो का ध्यान था जो इस तमाशे को दिखाने वाले थे, मगर कोई कह नही सकता था कि वह क्या कर रहे है।

थोडी ही देर बाद चारो तरफ की दीवारे चमकने लगी और उन पर की कुल तस्वीरे बहुत साफ और बनिस्बत पहले के अच्छी तरह पर दिखाई देने लगी। पहले तो वे तस्वीरे केवल तस्वीरे ही मालूम पडती थी परन्तु अब सचमुच की बातें दिखाई देने लगी। मालूम होता था कि जैसे हम बहुत दूर से सच्चे किले, पहाड, जगल, मैदान, आदमी, जानवर और फौज इत्यादि को देख रहे है। सब कोई बडे ताज्जुब के साथ इस तमाशे को देख रहे थे कि यकायक बाजे की आवाज कान मे आई। इस समय सभी का ध्यान तस्वीरो मे किले की तस्वीर पर जा पडा, जिधर से बाजे की आवाज आ रही थी। देखा कि—

[illegible] मैदान मे [illegible] फौज खडी है जिसके आमने-सामने दो हिस्से है [illegible] और सवार दोनो तरह की फौजे [illegible] इत्यादि और [illegible] सब मौजूद है। इन [illegible] और [illegible] बाजे की आवाज [illegible] और [illegible] आ रहे है। [illegible]

आँखो की ओट हो गई। अब यह मैदान ज्यादा खुलासा दिखाई देने लगा। जितनी जगह दोनो फौजो से भरी थी, वह एक फौज के हिस्से मे रह गई। अब दूसरी अर्थात् आसमानी वर्दी वाली फौज मे से बाजे की आवाज आने लगी और सवार तथा पैदल भी चलते हुए दिखाई देने लगे। एक सवार हाथ मे झडा लिए तेजी के साथ घोडा दौडा कर मैदान मे आ खडा हुआ और झडे के इशारे से फौज को कवायद कराने लगा। यह कवायद घण्टे भर तक होती रही और इस बीच मे आला दर्जे की होशियारी, चालाकी, मुस्तैदी, सफाई और बहादुरी दिखाई दी जिससे सब कोई बहुत ही खुश हुए और महाराज बोले, "बेशक फौज को ऐसा ही तैयार करना चाहिए।"

कवायद खतम करने के बाद बाजा बन्द हुआ और वह फौज एक तरफ को रवाना हुई, मगर थोडी ही दूर गई होगी कि उस लाल वर्दी वाली फौज ने यकायक पहाडी के पीछे से निकल कर इस फौज पर धावा मारा। इस कैफियत को देखते ही आसमानी वर्दी वाली फौज के अफसर होशियार हो गए, झडे का इशारा पाते ही बाजा पुन बजने लगा, और फौजी सिपाही लडने के लिए तैयार हो गये। इस बीच मे वह फौज भी आ पहुँची और दोनो मे घमासान लडाई होने लगी।

इस कैफियत को देखकर महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह वगैरह तथा ऐयार लोग हैरान हो गए और हद से ज्यादा ताज्जुब करने लगे। लडाई के फन की ऐसी कोई बात नही बच गई थी जो इसमे न दिखाई पडी हो। कई तरह की घुसबन्दी और किलेबन्दी के साथ ही साथ घुडसवारो की कारीगरी ने सभी को सकते मे डाल दिया और सभी के मुँह से बार-बार 'वाह-वाह' की आवाज निकलती रही। यह तमाशा कई घण्टे मे खत्म हुआ और इसके बाद एकदम से अन्धकार हो गया, उस समय इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खजर की रोशनी की और देवीसिंह ने इशारा पाकर कमरे मे रोशनी कर दी जो पहले बुझा दी गई थी।

इस समय रात थोडी-सी बच गई थी जो सभी ने सोकर बिता दी, मगर स्वप्न मे भी इसी तरह के खेल-तमाशे देखते रहे। जब सब की आँखें खुली तो दिन घण्टे भर से ज्यादा चढ चुका था। घबडा कर सब कोई उठ खडे हुए और कमरे के बाहर निकल कर जरूरी कामो से छुट्टी पाने का बन्दोबस्त करने लगे। इस समय जिन चीजो की सभी को जरूरत पडी वे सब चीजें वहाँ मौजूद पाई गईं, मगर उन दोनो स्त्रियो पर किसी की [illegible] न पडी जिन्हे यहाँ आने के साथ ही सभी ने देखा था।

7

जरूरी कामो से छुट्टी पाकर ऐयारो ने रसोई बनाई, क्योकि इस बँगले मे खाने-पीने की सभी चीजे मौजूद थी और सभी ने खुशी-खुशी भोजन किया। इसके बाद सब कोई उसी कमरे मे आ बैठे जिसमे रात को चलती-फिरती तस्वीरो का तमाशा देखा

था। उस समय भी सभी की निगाहें ताज्जुब के साथ उन्हीं तस्वीरों पर पड़ रही थी।

सुरेन्द्रसिंह—मैं बहुत गौर कर चुका मगर अभी तक समझ में न आया कि इन तस्वीरों में किस तरह की कारीगरी खर्च की गई है जो ऐसा तमाशा दिखाती है। अगर मैं अपनी आंखों से इस तमाशे को देखे हुए न होता और कोई गैर आदमी मेरे सामने ऐसे तमाशे का जिक्र करता तो मैं उसे पागल ही समझता, मगर अब स्वयं देख लेने पर भी विश्वास नहीं होता कि दीवार पर लिखी तस्वीरें इस तरह काम करेंगी।

जीतसिंह—बेशक ऐसी ही बात है। इतना देखकर भी किसी के सामने यह कहने का हौसला न होगा कि मैंने ऐसा तमाशा देखा था और सुनने वाला भी कभी विश्वास न करेगा।

ज्योतिषीजी - आखिर यह एक तिलिस्म ही है, इसमें सभी बातें आश्चर्य की ही दिखायी देती हैं।

जीतसिंह—चाहे यह तिलिस्म हो मगर इसके बनाने वाले तो आदमी ही थे। जो बात मनुष्य के किये नहीं हो सकती वह तिलिस्म में भी नहीं दिखाई दे सकती।

गोपालसिंह—आपका कहना बहुत ठीक है, तिलिस्म की बातें चाहे कैसा ही ताज्जुब पैदा करने वाली क्यों न हों मगर गौर करने से उनकी कारीगरी का पता लग ही जायगा। आपने बहुत ठीक कहा, आखिर तिलिस्म के बनानेवाले भी तो मनुष्य ही थे।

वीरेन्द्रसिंह - जब तक समझ में न आवे तब तक उसे चाहे कोई जादू कहे या करामात कहे मगर हम लोग सिवाय कारीगरी के कुछ भी नहीं कह सकते और पता लग जाने तथा भेद मालूम हो जाने पर यह बात सिद्ध हो ही जाती है। इन चित्रों की कारीगरी पर भी अगर गौर किया जायगा तो कुछ न कुछ पता लग ही जायगा। ताज्जुब नहीं कि इन्द्रजीतसिंह को इसका भेद मालूम हो।

सुरेन्द्रसिंह - बेशक इन्द्रजीत को इसका भेद मालूम होगा ही। (इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखकर) तुमने किस तरकीब से इन तस्वीरों को बनाया था?

इन्द्रजीतसिंह—(मुस्कुराते हुए) मैं आपसे अर्ज करूँगा और यह भी बताऊँगा कि [illegible] मालूम होने पर आप इसे एक साधारण बात ही समझेंगे। पहली दफा जब मैंने इस तमाशे को देखा था तो मुझे भी बड़ा ही ताज्जुब पैदा हुआ था, मगर तिलिस्मी किताब की मदद से जब मैं इस दीवार के अन्दर पहुँचा तो सब भेद खुल गया।

सुरेन्द्रसिंह—(खुश होकर) तब तो हम लोग बेकार ही परेशान हो रहे हैं और [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

से कहा, "देखिये, असल मे इस दीवार पर किसी तरह की चित्रकारी या तस्वीर नही है, दीवार साफ है और वास्तव मे शीशे की है, तस्वीरें जो दिखाई देती हैं वे इसके अन्दर और दीवार से अलग है।"

कुमार की बात सुनकर सभी ने ताज्जुब के साथ उस दीवार पर हाथ फेरा और जीतसिंह ने खुश होकर कहा—"ठीक है, अब हम इस कारीगरी को समझ गए। ये तस्वीरें अलग-अलग किसी धातु के टुकडो पर बनी हुई है और ताज्जुब नही कि तार या कमानी पर जडी हो, किसी तरह की शक्ति पाकर उस तार या कमानी में हरकत होती है और उस समय ये तस्वीरें चलती हुई दिखाई देती हैं।"

इन्द्रजीतसिंह—बेशक यही बात है, देखिये, अब मैं इन्हे फिर चलाकर आपको दिखाता हूँ और इसके बाद दीवार के अन्दर ले चलकर सब भ्रम दूर कर दूंगा।

इस दीवार मे जिस जगह जमानिया के किले की तस्वीर बनी थी, उसी जगह किले के बुर्ज के ठिकाने पर कई सूराख भी दिखाये गये थे जिनमे से एक छेद (सूराख) वास्तव में सच्चा था पर वह केवल इतना ही लम्बा-चौडा था कि एक मामूली खंजर का कुछ हिस्सा उसके अन्दर जा सकता था इन्द्रजीतसिंह ने कमर से तिलिस्मी खंजर निकाल कर उसके अन्दर डाल दिया और महाराज सुरेन्द्रसिंह तथा जीतसिंह की तरफ देखकर कहा, "इस दीवार के अन्दर जो पुर्जे बने हैं, वे बिजली का असर पहुँचने ही से चलने-फिरने या हिलने लगते हैं। इस तिलिस्मी खंजर मे आप जानते ही हैं कि पूरे दर्जे की बिजली भरी हुई है, अस्तु, उन पुर्जो के साथ इसका संयोग होने ही से काम हो जाता है।

इतना कहकर इन्द्रजीतसिंह चुपचाप खडे हो गये और सभी ने बडे गौर से उन तस्वीरो को देखना शुरु किया बल्कि महाराज सुरेन्द्रसिंह, बीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह और राजा गोपालसिंह ने तो कई तस्वीरो के ऊपर हाथ भी रख दिया। इतने ही में दीवार चमकने लगी और इसके बाद तस्वीरो ने वही रंगत पैदा की जो हम ऊपर के बयान मे लिख आये हैं। महाराज और राजा गोपालसिंह वगैरह ने जो अपना हाथ तस्वीरो पर रख दिया था वह ज्यो का त्यो बना रहा और तस्वीरें उनके हाथो के नीचे से निकलकर इधर-उधर आने-जाने लगी जिसका असर उनके हाथो पर कुछ भी नही होता था। इस सबब से सभी को निश्चय हो गया कि उन तस्वीरो का इस दीवार के साथ कोई सम्बन्ध नही। इस बीच मे कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने अपना तिलिस्मी खंजर दीवार के अन्दर से खींच लिया। उसी समय दीवार का चमकना बन्द हो गया और तस्वीरें जहाँ की तहाँ खडी हो गईं अर्थात् जो जितनी चल चुकी थी, उतनी ही चलकर रुक गईं। दीवार पर गौर करने से मालूम होता था कि तस्वीर पहले ढंग की नही बल्कि दूसरे ही ढंग की बनी हुई हैं।

जीतसिंह—यह भी बडे मजे की बात है लोगो को तस्वीरो के विषय मे धोखा देने और ताज्जुब मे डालने के लिए इससे बढकर कोई खेल नही हो सकता।

तेजसिंह—जी हाँ, एक दिन मे पचासो तरह की तस्वीरें इस दीवार पर लोगो को दिखा सकते हैं, पता लगना तो दूर रहा गुमान भी नही हो सकता कि यह क्या मामला है और ऐसी अनूठी तस्वीरें किस तरह बन जाती हैं।

सुरेन्द्रसिंह—बेशक यह खेल मुझे बहुत अच्छा मालूम हुआ। परन्तु अब इन तस्वीरों को ठीक अपने ठिकाने पर पहुँचाकर छोड देना चाहिए।

"बहुत अच्छा" कहकर इन्द्रजीतसिंह आगे बढ गये और पुन तिलिस्मी खजर उसी सुराख मे डाल दिया जिसने उसी तरह दीवार चमकने और तस्वीरें चलने लगी। ताज्जुब के साथ लोग उसका तमाशा देखते रहे। कई घण्टे के बाद जब तस्वीरो की यह लीला समाप्त हुई और एक विचित्र ढग के खटके की आवाज आई, तब इन्द्रजीतसिंह ने दीवार के अन्दर मे तिलिस्मी खजर निकाल लिया और दीवार का चमकना भी बन्द हो गया।

इस तमाशे से छुट्टी पाकर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखा और कहा, "अब हम लोगो को इस दीवार के अन्दर ले चलो।"

इन्द्रजीतसिंह—जो आज्ञा, पहले बाहर से जांच कर आप अन्दाजा कर लें कि यह दीवार कितनी मोटी है।

सुरेन्द्रसिंह—इसका अन्दाज हमे मिल चुका है, दूसरे कमरे मे जाने के लिए इसी दीवार मे जो दरवाजा है उसकी मोटाई से पता लग जाता है जिस पर हमने गौर किया है।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा तो अब एक दफे आप पुन उसी दूसरे कमरे मे चले क्योकि इस दीवार के अन्दर जाने का रास्ता उधर ही मे है।

इन्द्रजीतसिंह की बात सुनकर महाराज सुरेन्द्रसिंह तथा और सब लोग उठ खडे हुए और कुमार के साथ-साथ पुन उसी कमरे मे गए जिसमे दो चबूतरे बने हुए थे।

इस कमरे मे तस्वीर वाले कमरे की तरफ जो दीवार थी, उसमे एक आलमारी का निशान दिखाई दे रहा था और उसके बीचोबीच मे लोहे की एक खूंटी गडी हुई थी जिसे इन्द्रजीतसिंह ने उमेठना शुरू किया। तीस-पैंतीस दफे उमेठ कर अलग हो गए और कुछ सब लोग उस निशान की तरफ देखने लगे। थोडी देर बाद वह आलमारी हिलती हुई मालूम पडी और फिर धीरे-धीरे उसके दोनो पल्ले दरवाजे की तरह खुल गए। साथ ही उसके अन्दर से दो औरतें निकलती हुई दिखाई पडी जिनमे एक तो भूतनाथ की स्त्री थी और दूसरी देवीसिंह की स्त्री चम्पा। दोनो औरतो पर निगाह पडते ही भूतनाथ और देवीसिंह चमक उठे और उनके ताज्जुब की कोई हद न रही, साथ ही इसके दोनो [illegible] को बडा आश्चर्य और सब सरदार आँखें फाड कर उन औरतो की तरफ देखने लगे। [illegible] और [illegible] ताज्जुब [illegible] उन औरतो को देखा।

इस समय उन दोनो औरतो का चेहरा नकाब से खाली था मगर भूतनाथ और देवीसिंह के देखते-देखते ही उन दोनो ने आँचल से अपना चेहरा छिपा लिया और [illegible] आलमारी के अन्दर आ [illegible] गायब हो गई। [illegible] देवीसिंह [illegible] और [illegible] दिया।

8

अब हम पीछे की तरफ लौटते है और पुन. उस दिन का हाल लिखते हैं जिस दिन महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह वगैरह तिलिस्मी तमाशा देखने के लिए रवाना हुए हैं। हम ऊपर के बयान मे लिख आये हैं कि उस समय महाराज और कुमार लोगो के साथ भैरोसिंह और तारासिंह न थे, अर्थात् वे दोनो घर पर ही रह गए थे, अत इस समय उन्ही दोनों का हाल लिखना बहुत जरूरी हो गया है।

महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह वगैरह के चले जाने के बाद भैरोसिंह अपनी माँ से मिलने के लिए तारासिंह को साथ लिए हुए महल में गये। उस समय चपला अपनी प्यारी सखी चम्पा के कमरे मे बैठी हुई धीरे-धीरे कुछ बातें कर रही थी जो भैरोसिंह और तारासिंह को आते देख चुप हो गई और इन दोनो की तरफ देखकर बोली, "क्या महाराज तिलिस्मी तमाशा देखने के लिए गए?"

भैरोसिंह -हाँ, अभी थोडी ही देर हुई है कि वे लोग उसी पहाडी की तरफ रवाना हो गए।

चपला—(चम्पा से) तो अब तुम्हे भी तैयार हो जाना पडेगा।

चम्पा—जरूर, मगर तुम भी क्यो नही चलती?

चपला—जी तो मेरा यही चाहता है मगर मामा साहब की आज्ञा हो तब तो!

चम्पा—जहाँ तक मैं खयाल करती हूँ, वे कभी इनकार न करेंगे। बहिन, जब से मुझे यह मालूम हुआ कि इन्द्रदेव तुम्हारे मामा होते हैं तब से मैं बहुत प्रसन्न हूँ।

चपला—मगर मेरी खुशी का तुम अन्दाजा नही कर सकती, खैर, इस समय असल काम की तरफ ध्यान देना चाहिए। (भैरोसिंह और तारासिंह की तरफ देखकर) कहो, तुम लोग इस समय यहाँ कैसे आये?

तारासिंह—(चपला के हाथ मे एक पुर्जा देकर) जो कुछ है, इसी से मालूम हो जायगा।

चपला ने तारासिंह के हाथ से पुर्जा लेकर पढा और फिर चम्पा के हाथ मे देकर कहा, "अच्छा, जाओ कह दो कि हम लोगो के लिए किसी तरह का तरद्दुद न करें, मैं अभी जाकर कमलिनी और लक्ष्मीदेवी से मुलाकात करके सब बातें तय कर लेती हूँ।"

"बहुत अच्छा" कहकर भैरोसिंह और तारासिंह वहाँ से रवाना हुए और इन्द्रदेव के डेरे की तरफ चले गये।

जिस समय महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह तिलिस्मी कैफियत देखने के लिए रवाना हुए हैं उसके दो या तीन घडी बाद घोडे पर सवार इन्द्रदेव भी अपने चेहरे पर नकाब डाले हुए उसी पहाडी की तरफ रवाना हुए मगर वे अकेले न थे, बल्कि और भी तीन नकाबपोश उनके साथ थे। जब ये चारो आदमी उस पहाडी के पास पहुँच गए तो कुछ देर के लिए रुके और आपस मे यों बातचीत करने लगे—

इन्द्रदेव—ताज्जुब है कि अभी तक हमारे आदमी लोग यहाँ नहीं पहुँचे।

दूसरा—और जब तक वे लोग न आवेंगे तब तक हमें यहाँ अटकना पड़ेगा।

इन्द्रदेव—बेशक!

तीसरा—व्यर्थ यहाँ अटके रहना तो अच्छा न होगा।

इन्द्रदेव—तब क्या किया जाय?

तीसरा—आप लोग जल्दी से वहाँ पहुँचकर अपना काम कीजिये और मुझे अकेले इसी जगह छोड़ दीजिए, मैं आपके आदमियों का इन्तजार करूँगा और जब वे आ जायेंगे तो सब चीजें लिए आपके पास पहुँच जाऊँगा।

इन्द्रदेव—अच्छी बात है, मगर उन सब चीजों को क्या तुम अकेले उठा लोगे?

तीसरा—उन सब चीजों की क्या हकीकत है, कहिए तो आपके आदमियों को भी उन चीजों के साथ पीठ पर लाद कर लेता आऊँ।

इन्द्रदेव—शाबाश! अच्छा रास्ता तो न भूलोगे?

तीसरा—कदापि नहीं, अगर मेरी आँखों पर पट्टी बाँध कर भी आप वहाँ तक ले गये होते तब भी मैं रास्ता न भूलता और टटोलता हुआ वहाँ तक पहुँच ही जाता।

इन्द्रदेव—(हँस कर) बेशक तुम्हारी चालाकी के आगे यह कोई कठिन काम नहीं है। अच्छा हम लोग जाते हैं, तुम सब चीजें लेकर हमारे आदमियों को फौरन वापस कर देना।

इतना कह कर इन्द्रदेव ने उस तीसरे नकाबपोश को उसी जगह छोड़ा और दो नकाबपोशों को साथ लिए हुए आगे की तरफ बढ़े।

जिस सुरंग की राह से राजा वीरेन्द्रसिंह वगैरह उस तिलिस्मी बँगले में गये थे [illegible] लगभग आठ कोस उत्तर की तरफ और भी एक सुरंग का छोटा सा मुहाना था [illegible] जंगली लताओं और बेलों से बहुत ही छिपा हुआ था। इन्द्रदेव दोनों नकाबपोशों को साथ लिए लता पेड़ों की आड़ देकर चलते हुए उसी दूसरी सुरंग के मुहाने पर पहुँचे और जंगली लताओं को हटा कर बड़ी होशियारी से उस सुरंग के अन्दर घुस गये।

9

[illegible]

यह भी नही हो सकता। चम्पा जैसी नेक औरत कसम खाकर मुझसे झूठ भी नही बोल सकती। हाँ, उसने क्या कसम खाई थी? यही कि "मैं आपके चरणो की कसम खाकर कहती हूँ कि मुझे कुछ भी याद नही कि आप कब की बात कर रहे है।" ये ही उसके शब्द है, मगर यह कसम तो ठीक नही। यहाँ आने के बारे मे उसने कसम नही खाई बल्कि अपनी याद के बारे मे कसम खाई है, जिसे ठीक नही भी कह सकते। तो क्या उसने वास्तव मे मुझे भूलभुलैये मे डाल रक्खा है? खैर यदि ऐसा भी हो तो मुझे रज न होना चाहिए क्योंकि वह नेक है। यदि ऐसा किया भी होगा तो किसी अच्छे ही मतलब से किया होगा या फिर कुमारो की आज्ञा से किया होगा।"

ऐसी बातो को सोचकर देवीसिंह ने अपने क्रोध को ठण्डा किया, मगर भूतनाथ की बेचैनी दूर नही हुई।

वे दोनो औरतें जब आलमारी के अन्दर घुसकर गायब हो गईं तब हमारे दोनो कुमार तथा महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह ने भी उसके अन्दर पैर रक्खा। दरवाजे के साथ दाहिनी तरफ एक तहखाने के अन्दर जाने का रास्ता था जिसके बारे मे दरियाफ्त करने पर इन्द्रजीतसिंह ने बयान किया कि "यह जमानिया जाने का रास्ता है, तहखाने मे उतर जाने के बाद एक सुरग मिलेगी जो बराबर जमानिया तक चली गई है।" इन्द्रजीतसिंह की बात सुनकर देवीसिंह और भूतनाथ को विश्वास हो गया कि दोनो औरतें इसी तहखाने मे उतर गई हैं जिससे उन्हें भागने के लिए काफी जगह मिल सकती है। भूतनाथ ने देवीसिंह की तरफ देखकर इशारे से कहा कि "इस तहखाने मे चलना चाहिए।" मगर जवाब मे देवीसिंह ने इशारे से ही इनकार करके अपनी लापरवाही जाहिर कर दी।

उस दीवार के अन्दर इतनी जगह न थी कि सब कोई एक साथ ही जाकर वहाँ की कैफियत देख सकते, अतएव दो-तीन दफे करके सब कोई उसके अन्दर गये और उन सब पुरजों को देखकर बहुत प्रसन्न हुए जिनके सहारे वे तस्वीरें चलती-फिरती और काम करती थी। जब सब लोग उस कैफियत को देख चुके तब उस दीवार का दरवाजा बद कर दिया गया।

इस काम से छुट्टी पाकर सब लोग इन्द्रजीतसिंह की इच्छानुसार उस चबूतरे के पास आए जिस पर सुफेद पत्थर की खूबसूरत पुतली बैठी हुई थी। इन्द्रजीतसिंह ने सुरेन्द्रसिंह की तरफ देखकर कहा, "यदि आज्ञा हो तो मैं इस दरवाजे को खोलूँ और आपको तिलिस्म के अन्दर ले चलूँ।"

सुरेन्द्रसिंह—हम भी यही चाहते हैं कि अब तिलिस्म के अन्दर चलकर वहाँ की कैफियत देखें, मगर यह तो बताओ कि जब इस चबूतरे के अन्दर जाने के बाद हम यह तिलिस्म देखते हुए चुनारगढ वाले तिलिस्म की तरफ रवाना होंगे, तो वहाँ पहुँचने मे कितनी देर लगेगी?

इन्द्रजीतसिंह—कम-से-कम बारह घण्टे। तमाशा देखने के सबब से यदि इससे ज्यादा देर हो जाय तो भी कोई ताज्जुब नही।

सुरेन्द्रसिंह—रात हो जाने के सबब किसी तरह का हर्ज तो न होगा?

इन्द्रजीतसिंह—कुछ भी नहीं। रात-भर बराबर तमाशा देखते हुए हम लोग चले जा सकते हैं।

सुरेन्द्रसिंह—खैर, तब तो कोई हर्ज नहीं।

इन्द्रजीतसिंह ने पुतली वाले चबूतरे का दरवाजा उसी ढंग से खोला जैसे पहले खोल चुके थे और सभी को लिए हुए नीचे वाले तहखाने में पहुँचे, जिसमें बड़े-बड़े हण्डे अशर्फियों और जवाहरात से भरे हुए रखे थे।

इस कमरे में दो दरवाजे भी थे जिनमें से एक तो खुला हुआ था और दूसरा बन्द। खुले हुए दरवाजे के बारे में दरियाफ्त करने पर कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने बयान किया कि यह रास्ता जमानिया को गया है और हम दोनों भाई तिलिस्म तोड़ते हुए इसी राह से आये हैं। यहाँ से बहुत दूर पर एक स्थान है जिसका नाम तिलिस्मी किताब में 'ब्रह्म-मण्डल' लिखा हुआ है, उस जगह से भी मुझे एक छोटी-सी किताब मिली थी जिसमें इस विचित्र बँगले का पूरा हाल लिखा हुआ था कि तिलिस्म (चुनारगढ़ वाला) तोड़ने वाले के लिए क्या-क्या जरूरी है। उस किताब को चुनारगढ़ तिलिस्म की चाबी कहें तो अनुचित न होगा। वह किताब इस समय मौजूद नहीं है क्योंकि पढ़ने के बाद वह तिलिस्म तोड़ने के काम में खर्च कर दी गई। उस स्थान (ब्रह्म-मण्डल) में बहुत सी तस्वीरें देखने योग्य हैं और वहाँ की सैर करके भी आप बहुत प्रसन्न होंगे।"

सुरेन्द्रसिंह—हम जरूर उस स्थान को देखेंगे, मगर अभी नहीं। हाँ, और यह दूसरा दरवाजा जो बन्द है, कहाँ जाने के लिए है?

इन्द्रजीतसिंह—यही चुनारगढ़ वाले तिलिस्म में जाने का रास्ता है। इस समय यही दरवाजा खोला जायगा और हम लोग इसी राह से जायेंगे।

सुरेन्द्रसिंह—खैर, तो अब इसे खोलना चाहिए।

पाठक, आपको इस सन्तति के पढ़ने से मालूम होता ही होगा कि अब यह उपन्यास समाप्ति की तरफ चला जा रहा है। हमारे लिखने के लिए अब सिर्फ दो बातें रह गई हैं, एक तो इस चुनारगढ़ वाले तिलिस्म की कैफियत और दूसरे दुष्ट कैदियों का मुकदमा जिससे [illegible] भेद भी खुल जायेंगे। हमारे पाठकों में से बहुत से ऐसे हैं जिनकी [illegible] तिलिस्मी तमाशे की तरफ [illegible] परन्तु उन पाठकों की संख्या [illegible] ज्यादा है जो तिलिस्म के तमाशे को पसन्द करते हैं और उसकी [illegible] [illegible]

चन्द्रकान्ता उपन्यास मे वादा कर चुके है। अत इस जगह चुनारगढ के चबूतरे वाले तिलिस्म की कैफियत लिखकर इस पक्ष को पूरा करते हैं, तब उसके बाद दोनो कुमारो की शादी और कैदियो के मामले की तरफ ध्यान देकर इस उपन्यास को पूरा करेंगे।

महाराज की आज्ञानुसार इन्द्रजीतसिंह दरवाजा खोलने के लिए तैयार हो गये। इस दरवाजे के ऊपर वाले महराब मे किसी धातु के तीन मोर बने हुए थे जो हरदम हिला ही करते थे। कुमार ने उन तीनो मोरो की गर्दन घुमाकर एक मे मिला दी, उसी समय दरवाजा भी खुल गया और कुमार ने सभी को अन्दर जाने के लिए कहा। जब सब उसके अन्दर चले गये, तब कुमार ने भी उन मोरो को छोड दिया और दरवाजे के अन्दर जाकर महाराज से कहा, "यह दरवाजा इसी ढग से खुलता है, मगर इसके बन्द करने की कोई तरकीब नही है, थोडी देर मे आप से आप बन्द हो जायगा। देखिए, इस तरफ भी दरवाजे के ऊपर वाले महराब मे उसी तरह के मोर बने हुए हैं अतएव इधर से भी दरवाजा खोलने के समय वही तरकीब करनी होगी।"

दरवाजे के अन्दर जाने के बाद तिलिस्मी खजर से रोशनी करने की जरूरत न रही क्योकि यहाँ की छत मे कई सूराख ऐसे बने हुए थे जिनमे से रोशनी बखूबी आ रही थी और आगे की तरफ निगाह दौडाने से यह भी मालूम होता था कि थोडी दूर जाने के बाद हम लोग मैदान मे पहुँच जायेंगे जहाँ से खुला आसमान बखूबी दिखाई देगा, अत तिलिस्मी खजर की रोशनी बन्द कर दी गई और दोनो कुमारो के पीछे-पीछे सब कोई आगे की तरफ बडे। लगभग डेढ सौ कदम तक जाने के बाद एक खुला हुआ दरवाजा मिला जिसमे चौखट या किवाड कुछ भी न था। इस दरवाजे के बाहर होने पर सभी ने अपने को सगमर्मर के छोटे से एक दालान मे पाया और आगे की तरफ छोटा-सा बाग देखा जिसकी रविशें निहायत खूबसूरत स्याह और सुफेद पत्थरो से बनी हुई थी मगर पेडो की किस्म मे से केवल कुछ जगली पौधो और लताओ की हरियाली मात्र ही बाग का नाम चरितार्थ करने के लिए दिखाई दे रही थी। इस बाग के चारो तरफ चार दालान चार ढग के बने हुए थे और बीच मे छोटे-छोटे कई चबूतरे और नहर की तौर पर सुन्दर और पतली नालियाँ बनी हुई थी जिनमे पहाड से गिरते हुए झरने का साफ जल बहकर वहाँ के पेडो को तरी पहुँचा रहा था और देखने मे भी बहुत भला मालूम होता था। मैदान मे से निकलकर और आँख उठाकर देखने पर बाग के चारो तरफ ऊँचे-ऊँचे हरे-भरे पहाड दिखाई दे रहे थे और वे इस बात की गवाही दे रहे थे कि यह बाग पहाडी की तराई अथवा घाटी मे इस ढग से बना हुआ है कि बाहर से किसी आदमी की इसके अन्दर आने की हिम्मत नही हो सकती और न कोई इसके अन्दर से निकलकर बाहर ही जा सकता है।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने महाराज सुरेन्द्रसिंह की तरफ देखकर कहा, "इस चबूतरे वाले तिलिस्म के दो दर्जे है, एक तो यही बाग है और दूसरा उस चबूतरे के पास पहुँचने पर मिलेगा। इस बाग मे आप जितने खूबसूरत चबूतरे देख रहे है सभी के अन्दर बेअन्दाज दौलत भरी पडी है। जिस समय हम दोनो यहाँ आये थे इन चबूतरों का छूना बल्कि इनके पास पहुँचना भी कठिन हो रहा था। (एक चबूतरे के पास ले जाकर)

देखिये, चबूतरे के बगल में नीचे की तरफ कड़ी लगी हुई है और उसके साथ नथी हुई जो बारीक जंजीर है वह (हाथ का इशारा करके) उस तरफ एक कुएँ में गिरी हुई है। इसी तरह हरएक चबूतरे में कड़ी और जंजीर लगी हुई है जो सब उसी कुएँ में जाकर इकट्ठी हुई है। मैं नहीं कह सकता कि उस कुएँ के अन्दर क्या है, मगर उसकी तासीर यह थी कि इन चबूतरों को कोई छू नहीं सकता था। इसके अतिरिक्त आपको यह सुनकर ताज्जुब होगा कि उस चुनार वाले तिलिस्मी चबूतरे में भी जिस पर पत्थर का (असल में किसी धातु का) आदमी सोया हुआ है, एक जंजीर लगी हुई है और वह जंजीर भी भीतर-ही-भीतर यहाँ तक आकर उसी कुएँ में गिरी हुई है जिसमें ये सब जंजीरें इकट्ठी हुई हैं, बस यही और इतना ही यहाँ का तिलिस्म है। इसके अतिरिक्त दरवाजों को छिपाने के सिवाय और कुछ भी नहीं है। हम दोनों भाइयों को तिलिस्मी किताब की बदौलत यह सब हाल मालूम हो चुका था, अतएव जब हम दोनों भाई यहाँ आए थे तो इन चबूतरों से बिल्कुल हटे रहते थे। पहला काम हम लोगों ने जो किया वह यही था कि ये नालियाँ जो पानी से भरी और बहती हुई आप देख रहे हैं जिस पहाड़ी झरने की बदौलत जारी हो रही हैं उसमें से एक नई नाली खोदकर उसका पानी उसी कुएँ में गिरा दिया जिसमें सब जंजीरें इकट्ठी हुई हैं क्योंकि वह चश्मा भी उस कुएँ के पास ही है और अभी तक उसका पानी उस कुएँ में बराबर गिर रहा है। जब उस चश्मे का पानी (कई घण्टे तक) कुएँ के अन्दर गिर चुका तब इन चबूतरों का तिलिस्मी असर जाता रहा और ये छूने लायक हुए मानो उस कुएँ में बिजली की आग भरी हुई थी जो पानी गिरने से ठंडी हो गई। हम दोनों भाइयों ने तिलिस्मी खंजर से सब जंजीरों को काट-काट इन चबूतरों का और उस चुनारगढ़ वाले तिलिस्मी चबूतरे का भी सम्बन्ध उस कुएँ से छुड़ा दिया, इसके बाद इन चबूतरों को खोलकर देखा और मालूम किया कि इनके अन्दर क्या है। अब आपकी आज्ञा होगी तो हम लोग इस दौलत को चुनारगढ़ या जहाँ आप कहेंगे, वहाँ पहुँचा देंगे।"

इसके बाद इन्द्रजीतसिंह ने महाराज की आज्ञानुसार उन चबूतरों का [illegible] जो सन्दूक के पल्ले की तरह खुलता था, खोल-खोलकर दिखाया। महाराज तथा और सब कोई यह देखकर बहुत प्रसन्न हुए कि उनमें बेहिसाब धन-दौलत और जेवरों के अतिरिक्त बहुत-सी अनमोल चीजें भी भरी हुई हैं [illegible] में से दो चीजें महाराज ने बहुत पसन्द कीं। [illegible] और [illegible] विचित्र [illegible] किसी धातु का बना हुआ एक चन्द्रमा था। इस चन्द्रमा [illegible] चन्द्रमा की तरह [illegible] रोशनी पैदा होती थी।

[illegible] तमाम दिन बीत गया। [illegible]

[illegible]

भूतनाथ—क्या आज की रात भूखे-प्यासे ही वितानी पडेगी ?

इन्द्रजीतसिंह—(मुस्कुराते हुए) प्यासे तो नही कह सकते, क्योकि पानी का चश्मा वह रहा है जितना चाहो पी सकते हो, मगर खाने के नाम पर तव तक कुछ नही मिल सकता जव तक कि हम चुनारगढ वाले तिलिस्मी चवूतरे से वाहर न हो जायँ।

जीतसिंह—खैर, कोई चिन्ता नही, ऐयारो के वटुए खाली न होंगे, कुछ-न-कुछ खाने की चीजे उनमे जरूर होगी।

सुरेन्द्रसिंह—अच्छा, अव जरूरी कामो से छुट्टी पाकर किसी दालान मे आराम करने का वन्दोवस्त करना चाहिए।

महाराज की आज्ञानुसार सव कोई जरूरी कामो से निपटने की फिक्र मे लगे और इसके वाद एक दालान मे आराम करने के लिए बैठ गये। खास-खास लोगो के लिए ऐयारो ने अपने सामान मे से विस्तरे का इन्तजाम कर दिया।

10

यह दालान जिसमे इस समय महाराज सुरेंद्रसिंह वगैरह आराम कर रहे है, वनिस्वत उस दालान के, जिसमे ये लोग पहले-पहल पहुँचे थे, वडा और खूवसूरत वना हुआ था। तीन तरफ दीवार थी और वाग की तरफ तेरह खम्भे और महराव लगे हुए थे जिससे इसे वारहदरी भी कह सकते हैं। इसकी कुर्सी लगभग ढाई हाथ के ऊँची थी और इसके ऊपर चढने के लिए पाँच सीढियाँ वनी हुई थी। वारहदरी के आगे की तरफ कुछ सहन छूटा हुआ था जिसकी जमीन (फर्श) सगमर्मर और सगमूसा के चौखूटे पत्थरो से वनी हुई थी। वारहदरी की छत मे मीनाकारी का काम किया हुआ था और तीनो तरफ की दीवारो मे कई आलमारियाँ भी थी।

रात पहर भर से कुछ ज्यादा जा चुकी थी। इस वारहदरी मे, जिसमे सव कोई आराम कर रहे थे, एक आलमारी की कार्निस के ऊपर मोमवत्ती जल रही थी जो देवीसिंह ने अपने ऐयारी के बटुए मे से निकालकर जलाई थी। किसी को नीद नही आयी थी वल्कि सव लग वैठे हुए आपस मे वातें कर रहे थे। महाराज सुरेन्द्रसिंह वाग की तरफ मुँह किए वैठे थे और उन्हे सामने की पहाडी का आधा हिस्सा भी, जिस पर इस समय अन्धकार की वारीक चादर पडी हुई थी, दिखाई दे रहा था। उस पहाड़ी पर यकायक मशाल की रोशनी देखकर महाराज चौंके और सभी को उस तरफ देखने का इशारा किया।

सभी ने उस रोशनी की तरफ ध्यान दिया और दोनो कुमार ताज्जुव के साथ सोचने लगे कि यह क्या मामला है ? इस तिलिस्म मे हमारे सिवाय किसी गैर आदमी का आना कठिन ही नही वल्कि एकदम असम्भव है, तव फिर यह मशाल की रोशनी कैसी। खाली रोशनी ही नही, वल्कि उसके पास चार-पाँच आदमी भी दिखाई देते हैं।

हाँ, यह नहीं जान पड़ता कि वे सब औरत हैं या मर्द।

और लोगों के विचार भी दोनों कुमारों की ही तरह के थे और मशाल के साथ कई आदमियों को देखकर सभी ताज्जुब कर रहे थे। यकायक वह रोशनी गायब हो गई और आदमी दिखाई देने से रह गये, मगर थोड़ी ही देर बाद वह रोशनी फिर दिखाई दी। अबकी दफे रोशनी और भी नीचे की तरफ थी और उसके साथ के आदमी साफ-साफ दिखाई देते थे।

गोपालसिंह—(इन्द्रजीतसिंह से) मैं समझता था कि आप दोनों भाइयों के सिवाय कोई गैर आदमी इस तिलिस्म में नहीं आ सकता।

इन्द्रजीतसिंह—मेरा भी यही खयाल था मगर क्या आप भी यहाँ तक नहीं आ सकते? आप तो तिलिस्म के राजा हैं।

गोपालसिंह—हाँ मैं आ तो सकता हूँ मगर सीधी राह से और अपने को बचाते हुए, वे काम मैं नहीं कर सकता जो आप कर सकते हैं। परन्तु आश्चर्य तो यह है कि वे लोग पहाड़ पर से आते हुए दिखाई दे रहे हैं जहाँ से आने का कोई रास्ता ही नहीं है। तिलिस्म बनाने वालों ने इस बात को जरूर अच्छी तरह विचार लिया होगा।

इन्द्रजीतसिंह—बेशक ऐसा ही है, मगर यहाँ पर क्या समझा जाय? मेरा खयाल है कि थोड़ी ही देर में वे लोग इस बाग में आ पहुँचेंगे।

गोपालसिंह—बेशक ऐसा ही होगा। (रुककर) देखिए, रोशनी फिर गायब हो गई, शायद वे लोग किसी गुफा में घुस गये।

कुछ देर तक सन्नाटा रहा और सब कोई बड़े गौर से उसी तरफ देखते रहे। [illegible] बाद [illegible] पश्चिम तरफ वाले दालान में रोशनी मालूम होने लगी जो उस दालान के ठीक सामने था जिसमें हमारे महाराज तथा [illegible] लोग टिके हुए थे, मगर [illegible] दिखाई देता था कि दालान में कितने आदमी आए हैं और क्या कर रहे हैं।

[illegible] सभी को निश्चय हो गया कि वे लोग धीरे-धीरे [illegible] बाग [illegible] महाराज सुरेन्द्रसिंह ने तेजसिंह को हुक्म दिया [illegible] और पता लगाओ कि वे लोग कौन हैं और वहाँ क्या कर रहे हैं।

गोपालसिंह—(महाराज से) [illegible] यदि आज्ञा हो तो [illegible] इन्द्रजीतसिंह का साथ [illegible] जाऊँ।

[illegible] दोनों [illegible] क्या मामला है।

[illegible] इन्द्रजीतसिंह और राजा गोपालसिंह [illegible] से उठे और धीरे-धीरे [illegible] हुए उस दालान की [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

सभी के चेहरे पर नकाव पडी हुई थी। इन्ही पन्द्रह आदमियो मे से दो आदमी मशालची का काम दे रहे थे। जिस तरह उनकी पोशाक खूबसूरत और वेशकीमत थी, उसी तरह मशाल भी सुनहरी तथा जडाऊ काम की दिखाई दे रही थी और उसके सिरे की तरफ बिजली की तरह रोशनी हो रही थी, इसके अतिरिक्त उनके हाथ मे तेल की कुप्पी न थी और इस वात का कुछ पता नही लगता था कि इस मशाल की रोशनी का सवव क्या है।

राजा गोपालसिंह और इन्द्रजीतसिंह ने देखा कि वे लोग शीघ्रता के साथ उस दालान के सजाने और फर्श वगैरह के ठीक करने का इन्तजाम कर रहे हैं। बारहदरी के दाहिनी तरफ एक खुला हुआ दरवाजा है, जिसके अन्दर वे लोग वार-वार जाते हैं और जिस चीज की जरूरत समझते है, ले आते है। यद्यपि उन सभी की पोशाक एक ही ढग की है और इसलिए बडाई-छुटाई का पता लगाना कठिन है, तथापि उन सभी मे से एक आदमी ऐसा है, जो स्वय कोई काम नही करता और एक किनारे कुर्सी पर बैठा हुआ अपने साथियो से काम ले रहा है। उसके हाथ मे एक विचित्र ढग की छडी दिखाई दे रही है जिसके मुट्ठे पर निहायत खूबसूरत और कुछ बडा हिरन वना हुआ है। देखते-ही-देखते थोडी देर मे बारहदरी सज कर तैयार हो गई और कन्दीलो की रोशनी से जगमगाने लगी। उस समय वह नकाबपोश जो कुर्सी पर बैठा था और जिसे हम उस मण्डली का सरदार भी कह सकते हैं, अपने साथियो से कुछ कह-सुन कर बारहदरी के नीचे उतर आया और धीरे-धीरे उधर रवाना हुआ जिधर महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह टिके हुए थे।

यह कैफियत देख कर राजा गोपालसिंह और इन्द्रजीतसिंह जो छिपे सब तमाशा देख रहे थे वहाँ से लौटे और शीघ्र ही महाराज के पास पहुँच कर जो कुछ देखा था, सक्षेप मे सब वयान किया। उसी समय एक आदमी आता हुआ दिखाई दिया। सभी का ध्यान उसी तरफ चला गया और इन्द्रजीतसिंह तथा राजा गोपालसिंह ने समझा कि यह वही नकाबपोशो का सरदार होगा जिसे अभी हम उस बारहदरी मे देख आये है और जो हमारे देखते-देखते वहाँ से रवाना हो गया था। मगर जब पास आया तो सभी का भ्रम जाता रहा और एकाएक इन्द्रदेव पर निगाह पडते ही सब कोई चौक पडे। राजा गोपालसिंह और इन्द्रजीतसिंह को इस वात का भी शक हुआ कि वह नकावपोशो का सरदार शायद इन्द्रदेव ही हो, मगर यह देख कर उन्हे ताज्जुव मालूम हुआ कि इन्द्रदेव उस (नकाबपोशो की-सी) पोशाक मे न था, जैसा कि उस बारहदरी मे देखा था, बल्कि वह अपनी मामूली दरबारी पोशाक मे था।

इन्द्रदेव ने वहाँ पहुँचकर महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह, राजा गोपालसिंह तथा दोनो कुमारो को अदब के साथ झुक कर सलाम किया और इसके बाद बाकी ऐयारो से भी "जय माया की" कहा।

सुरेन्द्रसिंह—इन्द्रदेव, जब से हमने इन्द्रजीतसिंह की जुबानी यह सुना है कि इस तिलिस्म के दारोगा तुम हो, तब से हम बहुत ही खुश हैं। मगर ताज्जुब होता था कि तुमने इस बात की हमे कुछ भी खबर नही की और न हमारे साथ यहाँ आये हो। अब यकायक इस समय यहाँ पर तुम्हे देख कर हमारी खुशी और भी ज्यादा हो गई। आओ, हमारे पास बैठ जाओ और यह कहो कि हम लोगो के साथ तुम यहाँ क्यो नही आये?

इन्द्रदेव— (बैठ कर) आशा है कि महाराज मेरा यह कसूर माफ करेंगे। मुझे कई जरूरी काम करने थे, जिनके लिए अपने ढंग पर अकेले आना पड़ा। बेशक मैं इस तिलिस्म का दारोगा हूँ और इसीलिए अपने को बड़ा ही खुशकिस्मत समझता हूँ कि ईश्वर ने इस तिलिस्म को आप ऐसे प्रतापी राजा के हाथ मे सौंपा है। यद्यपि आपके फर्माबर्दार और होनहार पोतों ने इस तिलिस्म को फतह किया है और इस सबब से वे इसके मालिक हुए हैं, तथापि इस तिलिस्म का सच्चा आनन्द और तमाशा दिखाना मेरा ही काम है, यह मेरे सिवाय किसी दूसरे के किए नही हो सकता। जो काम कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का था, उसे ये कर चुके अर्थात् तिलिस्म तोड़ चुके और जो कुछ इन्हें मालूम होना था, हो चुका। परन्तु उन बातों, भेदों और स्थानों का पता इन्हें नहीं लग सकता, जो मेरे हाथ मे हैं और जिसके सबब से मैं इस तिलिस्म का दारोगा कहलाता हूँ। तिलिस्म बनाने वालों ने तिलिस्म के सम्बन्ध मे दो किताबें लिखी थी जिनमे से वे एक तो दारोगा के सुपुर्द कर गये और दूसरी तिलिस्म तोड़ने वाले के लिए छिपा कर रख गये जो कि अब दोनों कुमारों के हाथ लगी या कदाचित उनके अतिरिक्त और भी कोई किताब उन्होंने लिखी हो तो उसका हाल मैं नहीं जानता। हाँ, जो किताब दारोगा के सुपुर्द कर गये थे, वह वसीयतनामे के तौर पर पुश्त-दर-पुश्त से हमारे कब्जे मे चली आ रही है और आजकल मेरे पास मौजूद है। यह मैं जरूर कहूँगा कि तिलिस्म मे बहुत से मुकाम ऐसे हैं जहाँ दोनों कुमारों का जाना तो असम्भव ही है, परन्तु तिलिस्म टूटने के पहले मैं भी नहीं जा सकता था। हाँ, अब मैं वहाँ बखूबी जा सकता हूँ। आज मैं इसीलिए इस तिलिस्म के अन्दर-ही-अन्दर आपके पास आया हूँ कि इस तिलिस्म का पूरा-पूरा तमाशा आपको दिखाऊँ। जिसे कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह नहीं दिखा सकते। परन्तु इस तमाशा के पहले मैं महाराज से एक चीज माँगता हूँ जिसके बिना मेरा काम नहीं चल सकता।

महाराज—वह क्या?

इन्द्रदेव—जब तक इस तिलिस्म मे आप लोगों के साथ हूँ, तब तक अदब-लिहाज और कायदे की पाबन्दी से माफ रखा जाऊँ।

महाराज—इन्द्रदेव, हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं। जब तक तिलिस्म मे हम लोगों के साथ हो, अभी तक के लिए नहीं, बल्कि हमेशा के लिए हमारे इन बातों से तुम्हें छुट्टी दी। [illegible] कि हमारे खानदान और [illegible] भी हमारी [illegible]

[illegible] महाराज को सलाम किया और फिर बैठ कर [illegible]

[illegible]

[illegible]

इन्द्रदेव—(मुस्करा कर) मेरे सिवाय कोई गैर यहाँ आ नहीं सकता।

तेजसिंह—तथापि—'चिलेण्डोला'।

इन्द्रदेव—'चक्रधर'।

वीरेन्द्रसिंह—मैं एक बात और पूछना चाहता हूँ।

इन्द्रदेव—आज्ञा!

वीरेन्द्रसिंह—वह स्थान कैसा है, जहाँ तुम रहा करते हो और जहाँ मायारानी अपने दारोगा को लेकर तुम्हारे पास गई थी?

इन्द्रदेव—वह स्थान तिलिस्म से सम्बन्ध रखता है और यहाँ से थोड़ी ही दूर पर है। मैं स्वयं आप लोगों को ले चल कर वहाँ की सैर कराऊँगा। इसके अतिरिक्त अभी मुझे बहुत-सी बातें कहनी हैं, पहले आप लोग भोजन इत्यादि से छुट्टी पा लें।

तेजसिंह—हम लोग अभी मशाल की रोशनी में क्या आप ही लोगों को पहाड़ से उतरते देख रहे थे?

इन्द्रदेव—जी हाँ, मैं एक निराले ही रास्ते से यहाँ आया हूँ। आप लोग बेशक ताज्जुब करते होंगे कि पहाड़ से कौन उतर रहा है। परन्तु मैं अकेला ही नहीं आया हूँ। बल्कि कई तमाशे भी अपने साथ लाया हूँ, मगर उनके जिक्र का अभी मौका नहीं है।

इतना कह कर इन्द्रदेव उठ खड़ा हुआ और देखते-देखते दूसरी तरफ चला गया, मगर अपनी इस बात से कि—"कई तमाशे भी अपने साथ लाया हूँ" कइयों को ताज्जुब और घबराहट में डाल गया।

11

थोड़ी ही देर बाद इन्द्रदेव फिर वहाँ आया। अबकी दफे उसके साथ कई नकाब-पोश भी थे, जो अपने हाथ में तरह-तरह की खाने-पीने की चीजें लिए हुए थे। एक के हाथ में जल था। जल से जमीन धोई गई और खाने-पीने की चीजें वहाँ रख कर वे नकाबपोश लौट गये तथा पुनः कई जरूरी चीजें लेकर आ पहुँचे। इन्तजाम ठीक हो जाने पर इन्द्रदेव ने कायदे के साथ सभी को भोजन कराया और इस काम से छुट्टी मिलने पर उस बारहदरी में चलने के लिए अर्ज किया, जिसे उसने वहाँ पहुँच कर सजाया था और जिसका हाल ऊपर के बयान में लिख चुके हैं।

वास्तव में वह बारहदरी बड़ी खूबी के साथ सजाई गई थी। वहाँ सभी के लिए कायदे के साथ बैठने और आराम करने का सामान मौजूद था। जिसे देख कर महाराज बहुत प्रसन्न हुए और इन्द्रदेव की तरफ देख कर बोले, "क्या यह सब सामान इसी बाग में मौजूद था?"

इन्द्रजीतसिंह—जी हाँ, केवल इतना ही नहीं बल्कि इस बाग में जितनी इमारतें हैं, उन सभी को सजाने और दुरुस्त करने के लिए यहाँ काफी सामान है, इसके अति-

रिक्त यहाँ से मेरा मकान बहुत नजदीक है। इसलिए जिस चीज की भी जरूरत हो, मैं बहुत जल्द ला सकता हूँ। (कुछ देर सोच कर और हाथ जोड कर) मैं एक और भी जरूरी बात अर्ज करना चाहता हूँ।

महाराज—वह क्या ?

इन्द्रजीतसिंह—यह तिलिस्म आप ही के बुजुर्गों की बदौलत बना है और उन्ही की आज्ञानुसार जब से यह तिलिस्म तैयार हुआ है, तभी से मेरे बुजुर्ग लोग इसके दारोगा होते आये हैं। अब मेरे जमाने मे उस तिलिस्म की किस्मत ने पलटा खाया है। यद्यपि कुमार इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने इस तिलिस्म को तोडा या फतह किया है और इसमें की बेहिसाब दौलत के मालिक हुए हैं तथापि यह तिलिस्म अभी दौलत से खाली नहीं हुआ है और न ऐसा खुल ही गया है कि ऐरे-गैरे जिसका जी चाहे इसमे घुस आये। हाँ यदि आज्ञा हो तो दोनो कुमारो के हाथ मे मैं इसके बचे-बचाये हिस्से को भी खुलवा सकता हूँ, क्योकि यह काम इस तिलिस्म के दारोगा का अर्थात् मेरा है, मगर मैं चाहता हूँ कि बडे लोगों की इस कीर्ति को एकदम मे मटियामेट न करके भविष्य के लिए भी कुछ छोड देना चाहिए। आज्ञा पाने पर मैं इस तिलिस्म की पूरी सैर कराऊँगा और तब अर्ज करूँगा कि बुजुर्गो की आज्ञानुसार इस दास ने भी जहाँ तक हो सका इस तिलिस्म की खिदमत की, अब महाराज को अख्तियार है कि मुझसे हिसाब-किताब समझ कर आइन्दा के लिए जिसे चाहें, यहाँ का दारोगा मुकर्रर करें।

महाराज—इन्द्रदेव, मैं तुमसे और तुम्हारे कामो से बहुत ही प्रसन्न हूँ। मगर मैं यह नहीं चाहता कि तुम मुझे बातों के जाल मे फँसा कर बेवकूफ बनाओ और यह कहो कि "भविष्य के लिए किसी दूसरे को यहाँ का दारोगा मुकर्रर कर लो।" जो कुछ तुमने कहा सो बहुत ठीक है अर्थात् इस तिलिस्म के बचे-बचाये स्थानो को छोड देना चाहिए जिसमें कि बडे-बूढ़ों का नाम-निशान बना रहे। मगर यहाँ के दारोगा की पदवी सिवाय तुम्हारे खानदान के कोई दूसरा क्या पा सकता है? इस दशा में इस ढंग की बातें न छेडो और जो कुछ कहना चाहते हो, सो कहो।

इन्द्रदेव—(हाथ जोड़ कर सलाम करके) जो आज्ञा! मैं एक बात और भी निवेदन किया चाहता हूँ।

महाराज—वह क्या ?

इन्द्रदेव—[illegible] आप कृपा करके चलें मेरे स्थान को, जहाँ [illegible]

[illegible]

महाराज—ठीक है, मैं भी इस बात को पसन्द करता हूँ और यह भी चाहता हूँ कि चुनार पहुँचने के पहले ही तुम्हारे विचित्र स्थान की सैर कर लूँ। चीजो की फेहरिस्त और उनका पता इन्द्रजीतसिंह तुमको देंगे।

इतना कह कर महाराज ने इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखा और कुमार ने उन सब चीजो का पता इन्द्रदेव को बताया जिन्हे बाहर निकाल कर घर पहुँचाने की आवश्यकता थी और साथ-ही-साथ अपना तिलिस्मी किस्सा भी जिसके कहने की जरूरत थी, इन्द्रदेव से बयान किया और बाद मे दूसरी बातो का सिलसिला छिडा।

वीरेन्द्रसिंह—(इन्द्रदेव से) आपने कहा था कि "मैं कई तमाशे भी साथ लाया हूँ," तो क्या वे तमाशे ढँके ही रह जायेंगे।

इन्द्रदेव—जी नहीं! आज्ञा हो तो अभी उन्हे पेश करूँ, परन्तु यदि आप मेरे मकान पर चल कर उन तमाशो को देखेंगे तो कुछ विशेष आनन्द मिलेगा।

महाराज—यही सही, हम लोग अभी तुम्हारे मकान पर चलने के लिए तैयार है।

इन्द्रदेव—अब रात बहुत चली गई है, महाराज दो-चार घण्टे आराम कर ले, दिन-भर की हरारत मिट जाय, जब कुछ रात बाकी रह जायेगी, तो मैं जगा दूंगा और अपने मकान की तरफ ले चलूंगा। तब तक मैं अपने साथियो को वहाँ रवाना कर देता हूँ जिसमे आगे चल कर सभी को होशियार कर दें और महाराज के लिए हरएक तरह का सामान दुरुस्त हो जाय।

इन्द्रदेव की बात को महाराज ने पसन्द करके सभी को आराम करने की आज्ञा दी और इन्द्रदेव भी वहाँ से विदा होकर किसी दूसरी जगह चला गया।

इधर-उधर की बातचीत करते-करते महाराज को नीद आ गई। वीरेन्द्रसिंह, दोनो कुमार और राजा गोपालसिंह भी सो गये तथा और ऐयारो ने भी स्वप्न देखना आरम्भ किया। मगर भूतनाथ की आँखो मे नीद का नाम-निशान भी न था और वह तमाम रात जागता ही रह गया।

जब रात घण्टे-भर से ज्यादा बाकी रह गई और सुबह को अठखेलियो के साथ चल कर खुशदिलो तथा नौजवानो के दिलो मे गुदगुदी पैदा करने वाली ठडी-ठडी हवा ने खुशबूदार जगली फूलो और लताओं से हाथापाई करके उनकी सम्पत्ति छीनना और अपने को खुशबूदार बनाना शुरू कर दिया तब इन्द्रदेव भी उस बारहदरी मे आ पहुँचा और सभी को गहरी नीद मे सोते देख जगाने का उद्योग करने लगा। इस बारहदरी के आगे की तरफ एक छोटा-सा सहन था जिसकी जमीन सगमूसा के स्याह और चौखूटे पत्थरो से मढी हुई थी। इस सहन के दाहिने और बाएँ कोनो पर दो-तीन आदमी बखूबी बैठ सकते थे। इन्द्रदेव दाहिने तरफ वाले सिंहासन पर जाकर बैठ गया और उसके पायो को बारी-बारी से किसी हिसाब से घुमाने या उमेठने लगा। उसी समय सिंहासन के अन्दर से सरस और मधुर बाजे की आवाज आने लगी और थोडी ही देर बाद गाने की आवाज भी पैदा हुई। मालूम होता था कि कई नौजवान औरतें बडी खूबी के साथ गा रही है और कई आदमी पखावज-बीन-बशी-मजीरा इत्यादि बजा कर उन्हे मदद पहुँचा रहे हैं। यह आवाज धीरे-धीरे बढने और फैलने लगी, यहाँ तक कि उस बारहदरी मे

सोने वाले सभी लोगों को जगा दिया अर्थात् सब कोई चौंक कर उठ बैठे और ताज्जुब से चारों तरफ इधर-उधर देखने लगे। केवल इतने ही में बेचैनी दूर न हुई और सब कोई बारहदरी में बाहर निकल कर सहन में चले आये, उसी समय इन्द्रदेव ने सामने आकर महाराज को सलाम किया।

महाराज—यह तो मालूम हो गया कि यह सब तुम्हारी कारीगरी का नतीजा है, मगर बताओ तो सही कि यह गाने-बजाने की आवाज कहाँ से आ रही है?

इन्द्रदेव—आइये, मैं बताता हूँ। महाराज को जगाने ही के लिए यह तरकीब की गई थी, क्योंकि अब यहाँ से रवाना होने का समय हो गया है, और विलम्ब न करना चाहिए।

इतना कहकर इन्द्रदेव सभी को उस सिंहासन के पास ले गया जिसमें से गाने की आवाज आ रही थी। और उसका असल भेद समझाकर बोला, "इसमें मौके पर हर एक रागिनी पैदा हो सकती है।"

इस अनूठे गाने-बजाने से महाराज बहुत प्रसन्न हुए और इसके बाद सभी को लिए हुए इन्द्रदेव के मकान की तरफ रवाना हुए।

उस बारहदरी की बगल में ही एक कोठरी थी जिसमें सभी को साथ लिए हुए इन्द्रदेव चला गया। इस समय इन्द्रदेव के पास तिलिस्मी खंजर था जिससे उसने हलकी रोशनी पैदा की और उसी के सहारे सभी को लिए हुए आगे की तरफ बढ़ा।

उस कोठरी में जाने के बाद पहले सभी को एक छोटे से तहखाने में उतरना पड़ा, वहाँ सभी ने पत्थर की एक समाधि देखी जिसके बारे में दरियाफ्त करने पर इन्द्रदेव ने कहा कि यह समाधि नहीं है, सुरंग का दरवाजा है। इन्द्रदेव उस समाधि के पास बैठ गया और कोई ऐसी तरकीब की कि जिससे वह बीचोंबीच से खुल गई और नीचे उतरने के लिए चार-पाँच सीढ़ियाँ दिखाई दीं। इन्द्रदेव के कहे मुताबिक सब कोई नीचे उतर गए और उसके बाद सभी सुरंग में चलने लगे। सुरंग की हालत और ऊँची-नीची जमीन से साफ मालूम होता था कि यह पहाड़ काटकर बनाई हुई है और सब लोग [illegible] हमारे मुसाफिरों को [illegible] लगभग [illegible] [illegible] [illegible] इन्द्रदेव [illegible] [illegible] सभी ने [illegible] एक सुन्दर [illegible] मालूम [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

पसन्द आया और वार-वार इसकी तारीफ करने लगे। यद्यपि इस बगीचे मे सभी के लायक दर्जे-वदर्जे कुर्सियाँ विछी हुई थी, मगर किसी का जी बैठने को नही चाहता था। सव कोई घूम-घूमकर यहाँ का आनन्द लेना चाहते थे और ले रहे थे, मगर इस बीच मे एक ऐसा मामला हो गया जिसने भूतनाथ और देवीसिंह दोनो ही को चौका दिया। एक आदमी जल से भरा हुआ चाँदी का घडा और सोने की झारी लेकर आया और सगमरमर की चौकी पर, जो वगीचे मे पडी हुई थी, रखकर लौट चला। इसी आदमी को देखकर भूतनाथ और देवीसिंह चौके थे, क्योकि यह वही आदमी था जिसे ये दोनो ऐयार नकाबपोशों के मकान मे देख चुके थे। इसी आदमी ने नकावपोशो के सामने एक तस्वीर पेश की की थी और कहा था कि "कृपानाथ, वस मैं इसी का दावा भूतनाथ पर करूँगा।"[1]

केवल इतना ही नही, भूतनाथ ने वहाँ से थोडी दूर पर एक झाडी मे अपनी स्त्री को भी फूल तोडते देखा और धीरे-से देवीसिंह को छेडकर कहा, "वह देखिये मेरी स्त्री भी वहाँ मौजूद है, ताज्जुव नही कि आपकी चम्पा भी कही घूम रही हो।"

12

यद्यपि भूतनाथ को तरद्दुदो से छुट्टी मिल चुकी थी, यद्यपि उसका कसूर माफ हो चुका था, और वह महाराज के खास ऐयारो मे मिला लिया गया था, मगर इस जगह उस आदमी को, जिसने नकावपोशो के मकान मे तस्वीर पेश की और साथ उस पर दावा करना चाहा था, देखकर उसकी अवस्था फिर विगड गई और साथ ही इसके अपनी स्त्री को भी वहाँ काम करते हुए देखकर उसे क्रोध चढ आया।

जव वह आदमी पानी का घडा और झारी रखकर लौट चला, तव इन्द्रदेव ने उसे पुकारकर कहा, "अर्जन, जरा वह तस्वीर भी तो ले आओ जिसे वार-वार तुम दिखाया करते हो और जो हमारे दोस्त भूतनाथ को डराने और धमकाने के लिए एक औजार के तौर पर तुम्हारे पास रखी हुई है।"

इस नाम ने भूतनाथ के कलेजे को और भी हिला दिया। वास्तव मे उस आदमी का यही नाम था और इस खयाल ने तो उसे और भी वदहवास कर दिया कि अव वह तस्वीर लेकर आयेगा।

इस समय सव कोई वाग मे टहल रहे थे और इसलिए एक-दूसरे से कुछ दूर हो रहे थे। भूतनाथ वढकर देवीसिंह के पास चला गया और उनका हाथ पकडकर धीरे से वोला, "देखा, इन्द्रदेव का रग-ढग ?"

देवीसिंह —(धीरे-से) मैं सब देख और समझ रहा हूँ, मगर तुम घवराओ नहीं।

भूतनाथ—मालूम होता है कि इन्द्रदेव का दिल अभी तक मेरी तरफ से साफ

---

1. देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, बीसवाँ भाग, दूसरा बयान।

नहीं हुआ ।

देवीसिंह—शायद ऐसा ही हो, मगर इन्द्रदेव से ऐसी उम्मीद नही हो सकती, मेरा दिल इसे कबूल नही करता । मगर भूतनाथ, तुम भी अजीब सिडी हो ।

भूतनाथ—सो क्यो ?

देवीसिंह—यही कि नकाबपोशो का पीछा करके तुमने कैसे-कैसे तमाशे देखे और तुम्हें विश्वास भी हो गया कि इन नकाबपोशो से तुम्हारा कोई भेद छिपा नही है, फिर अन्त मे यह भी मालूम हो गया कि उन नकाबपोशो के सरदार कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह थे, फिर इन दोनो से भी अब कोई बात छिपी नही रही ।

भूतनाथ—बेशक ऐसा ही है ।

देवीसिंह—तो फिर अब क्यो तुम्हारा दम बेकार ही घुटा जाता है ? अब तुम्हे किसका डर रह गया ?

भूतनाथ—कहते तो ठीक हो । खैर, कोई चिन्ता नही, जो कुछ होगा, सो देखा जायगा ।

देवीसिंह—बल्कि तुम्हे यह जानने की कोशिश करनी चाहिए कि दोनो कुमारो को तुम्हारे भेदो का पता कैसे लगा । ताज्जुब नही, अब वे सब बाते खुलना चाहती हो ।

भूतनाथ—शायद ऐसा ही हो, मगर मेरी स्त्री के बारे मे तुम भी क्या खयाल करते हो ?

देवीसिंह—इस बारे मे मेरा-तुम्हारा मामला एक-सा ही रहा है, अब इस विषय मे मैं कुछ भी नही कह सकता । वह देखो, इन्द्रदेव, तेजसिंह के पास चला गया है और तुम्हारी स्त्री की तरफ इशारा करके कुछ कह रहा है । तेजसिंह अलग हो तो मैं उनसे कुछ पूछूँ । [illegible] दिन ऐसा लुभा दिया है कि [illegible] (चौंककर) वो देखो, तुम्हारा लड़का नानक भी वहा आ पहुंचा, उसके साथ मे भी कोई औरत मालूम पड़ती है, [illegible] भी उसी के साथ है ।

भूतनाथ—(ताज्जुब से) आश्चर्य की बात है ! नानक और [illegible] का साथ कैसे हुआ ? और [illegible] क्यो ? क्या अपनी माँ के साथ आया है ? क्या कपूत [illegible]

[illegible]

इन्द्रदेव, तेजसिंह के साथ बातें करता रहा, इसके बाद इशारे से अर्जुन और नानक को अपने पास बुलाया और जब वे दोनो पास आ गये तो कुछ कह-सुनकर विदा किया।

भूतनाथ यह सब तमाशा देखकर ताज्जुब कर रहा था। अर्जुन और नानक को विदा करने के बाद तेजसिंह को साथ लिए हुए इन्द्रदेव महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास गया जो एक सुन्दर चट्टान पर खडे-खडे ढलवाँ जमीन और पहाडी पर से नीचे की तरफ गिरते हुए सुन्दर झरने की शोभा देख रहे थे और वीरेन्द्रसिंह भी उन्ही के पास खडे थे। वहाँ भी कुछ देर तक इन्द्रदेव ने महाराज से बातचीत की और इसके बाद चारो आदमी लौटकर बगीचे मे चले आये। महाराज को बगीचे मे आते देख और सब लोग भी जो इधर-उधर फैले हुए तमाशा देख रहे थे, बगीचे मे आकर इकट्ठे हो गए और अब मानो महाराज का यह एक छोटा-सा दरबार बगीचे मे ही लग गया।

वीरेन्द्रसिंह—(इन्द्रदेव से) हाँ, तो अब वे तमाशे कब देखने मे आवेंगे जो आप अपने साथ तिलिस्म मे लेते गये थे?

इन्द्रदेव—जब आज्ञा हो तभी दिखाये जायें।

वीरेन्द्रसिंह—हम लोग तो देखने के लिए तैयार बैठे हैं।

जीतसिंह—मगर पहले यह मालूम हो जाना चाहिए कि उनके देखने मे जितना समय लगेगा, अगर थोडी देर का काम हो तो अभी देख लिया जाय।

इन्द्रदेव—जी, वह थोडी देर का काम तो नही है। इससे यही बेहतर होगा कि पहले जरूरी कामो से छुट्टी पाकर स्नान-ध्यान तथा भोजन इत्यादि से निवृत्त हो लें।

महाराज—हमारी भी यही राय है।

महाराज का मतलब समझ कर सब कोई उठ खडे हुए और जरूरी कामो से छुट्टी पाने की फिक्र मे लगे। महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह तथा और भी सब कोई इन्द्रदेव के उचित प्रबन्ध को देखकर बहुत ही प्रसन्न हुए। किसी को किसी तरह की तकलीफ न हुई और न कोई चीज माँगने की जरूरत ही पडी। इन्द्रदेव के ऐयार और कई खिदमतगार आकर मौजूद हो गये और बात की बात मे सब सामान ठीक हो गया।

स्नान तथा सध्या-पूजा इत्यादि से छुट्टी पाकर सभी ने भोजन किया और इसके बाद इन्द्रदेव ने (बंगले के अन्दर) एक बहुत बडे और सजे हुए कमरे मे सभी को बैठाया जहाँ सभी के योग्य दर्जे-ब-दर्जे बैठने का इन्तजाम किया गया था। एक ऊँची गद्दी पर महाराज सुरेन्द्रसिंह और उनके दाईं तरफ वीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, पण्डित बद्रीनाथ, रामनारायण, पन्नालाल तथा भूतनाथ वगैरह बैठे।

कुछ देर तक इधर-उधर की बातचीत होती रही। इसके बाद इन्द्रदेव ने हाथ जोडकर पूछा—"अब यदि आज्ञा हो तो तमाशों को

महाराज—हाँ-हाँ, अब तो हम लोग हर तरह से निश्चिन्त हैं।

सलाम करके इन्द्रदेव कमरे के बाहर चला गया और घडी भर तक लौट के नही आया, इसके बाद जब आया तो चुपचाप अपने स्थान पर आकर बैठ गया। सब कोई (भूतनाथ, पन्नालाल वगैरह) ताज्जुब के साथ उसका मुंह देख रहे थे कि इतने मे ही सामने वाले दरवाजे का परदा हटा और नानक कमरे के अन्दर आता हुआ दिखाई दिया,

नानक ने बडे अदब के साथ महाराज को सलाम किया और इन्द्रदेव का इशारा पाकर एक किनारे बैठ गया। इस समय नानक के हाथ मे एक बहुत बडी मगर लपेटी हुई तस्वीर थी जो कि उसने अपने बगल मे लगा रखी थी।

नानक के बाद हाथ मे तस्वीर लिए अर्जुन भी पहुँचा और महाराज को सलाम कर नानक के पास बैठ गया। उसी समय कमला का भाई अथवा भूतनाथ का लडका हरनामसिंह दिखाई दिया, वह भी महाराज को प्रणाम करके अर्जुन के बगल मे बैठ गया, हरनामसिंह के हाथ मे एक छोटी-सी सन्दूकडी थी जिसे उसने अपने सामने रख लिया।

इसके बाद नकाब पहने हुए तीन औरतें कमरे के अन्दर आई और अदब के साथ महाराज को सलाम करती हुई दूसरे दरवाजे से कमरे के बाहर निकल गईं।

उस समय भूतनाथ और देवीसिह के दिल की क्या हालत थी, सो वे ही जानते होंगे। उन्हें इस बात का तो विश्वास ही था कि इन औरतो मे एक तो भूतनाथ की स्त्री और दूसरी चम्पा जरूर है, मगर तीसरी औरत के बारे मे कुछ भी नही कह सकते थे।

महाराज—(इन्द्रदेव से) इन औरतो मे भूतनाथ की स्त्री और चम्पा जरूर होंगी?

इन्द्रदेव—(हाथ जोडकर) जी हाँ कृपानाथ।

महाराज—और तीसरी औरत कौन है?

इन्द्रदेव—तीसरी एक बहुत ही गरीब, नेक, सीधी और जमाने की सताई हुई औरत है जिसे देखकर और जिसका हाल सुनकर महाराज को भी बडी ही दया आयेगी। यह वह औरत है जिसे मरे हुए एक जमाना हो गया, मगर अब उसे विचित्र ढग से पैदा होते देख लोगों को बडा ही ताज्जुब होगा।

महाराज—आखिर वह औरत है कौन?

इन्द्रदेव—बेचारी दुखिनी कमला की माँ, यानी भूतनाथ की पहली स्त्री।

यह सुनते ही भूतनाथ चिल्ला उठा और उसने बडी मुश्किल से अपने को बेहोश होने से रोका।

चन्द्रकान्ता सन्तति

वाईसवाँ भाग

1

भूतनाथ की अवस्था ने सबका ध्यान अपनी तरफ खीच लिया। कुछ देर तक सन्नाटा रहा और इसके बाद इन्द्रदेव ने पुन महाराज की तरफ देखकर कहा—

"महाराज, ध्यान देने और विचार करने पर सबको मालूम होगा कि आजकल आपका दरबार 'नाट्यशाला' (थियेटर का घर) हो रहा है। नाटक खेलकर जो-जो बातें दिखाई जा सकती है, और जिनके देखने से लोगो को नसीहत मिल सकती है तथा मालूम हो सकता है कि दुनिया मे जिस दर्जे तक के नेक और बद, दुखिया और सुखिया, गम्भीर और छिछोरे इत्यादि पाये जाते हैं, वे सब इस समय (आजकल) आपके यहाँ प्रत्यक्ष हो रहे हैं। ग्रह-दशा के फेर मे जिन्होंने दु ख भोगा वे भी मौजूद हैं और जिन्होंने अपने पैर मे आप कुल्हाडी मारी, वे भी दिखाई दे रहे हैं, जिन्होने अपने किए का फल ईश्वरेच्छा मे पा लिया है, वे भी आए हुए हैं, और जिन्हे अब सजा दी जायेगी, वे भी गिरफ्तार किए गए हैं। बुद्धिमानो का यह कथन है, कि 'जो बुरी राह चलेगा, उसे बुरा फल अवश्य मिलेगा' ठीक है, परन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि अच्छी राह चलने वाले तथा नेक लोग भी दु ख के चगुल में फँस जाते हैं, और दुर्जन तथा दुष्ट लोग आनन्द के साथ दिन काटते दिखाई देते हैं। इसे लोग ग्रह-दशा के कारण कहते हैं, मगर नही, इसके सिवाय कोई और बात भी जरूर है। परमात्मा की दी हुई बुद्धि और विचारशक्ति का अनादर करने वाले ही प्राय सकट मे पडकर तरह-तरह के दु ख भोगते है। मेरे कहने का तात्पर्य यही है कि इस समय अथवा आजकल आपके यहाँ सब तरह के जीव दिखाई देते हैं, दृष्टान्त देने के बदले केवल इशारा करने से काम निकलता है। हाँ, मैं यह कहना तो भूल ही गया, कि इन्ही मे ऐसे भी जीव आए हुए हैं, जो अपने किए का नहीं, बल्कि अपने सम्बन्धियो के किए हुए पापों का फल भोग रहे है, और इसी से नाते (रिश्ते) और सम्बन्ध का गूढ़ अर्थ भी निकलता है। बेचारी लक्ष्मीदेवी की तरफ देखिए, जिसने किसी का कुछ भी नही बिगाडा, और फिर भी हद दर्जे की तकलीफ उठाकर भी ताज्जुब है कि जीती बच गई। ऐसा क्यो हुआ ? इसके जवाब मे मैं तो यही कहूँगा कि राजा गोपालसिंह की बदौलत जो बेईमान दारोगा के हाथ की कठपुतली हो रहे थे, और इस बात की कुछ

भी खबर नही रखते थे कि उनके घर मे क्या हो रहा है, या उनके कर्मचारियो ने उन्हे कैसे जाल मे फँसा रखा है। जिस राजा को अपने घर की खबर न होगी, वह प्रजा का क्या उपकार कर सकता है, और ऐसा राजा अगर सकट मे पड जाये तो आश्चर्य ही क्या है। केवल इतना ही नही, इनके दुःख भोगने का एक सबब और भी है। बडो ने कहा है कि 'स्त्री के आगे अपने भेद की बात प्रकट करना बुद्धिमानो का काम नही है' परन्तु राजा गोपालसिंह ने इस बात पर कुछ भी ध्यान न दिया, और दुष्टा मायारानी की मुहब्बत मे फँसकर तथा अपने भेदो को बताकर बर्बाद हो गये। सज्जन और सरल स्वभाव होने से ही दुनिया का काम नहीं चलता, कुछ नीति का भी अवलम्बन करना ही पडता है। इसी तरह महाराज शिवदत्त को देखिए, जिसे खुशामदियो ने मिल-जुलकर बर्बाद कर दिया। जो लोग खुशामद मे पडकर अपने को सबसे बडा समझ बैठते है, और दुश्मन को कोई चीज नही समझते है, उनकी वैसी ही गति होती है, जैसी शिवदत्त की हुई। दुष्टो और दुर्जनो की बात जाने दीजिए, उनको बुरे कामो का तो फल मिलना ही चाहिए, मिला ही है और मिलेगा ही, उनका जिक्र तो मैं पीछे करूँगा, अभी तो मैं उन लोगो की तरफ इशारा करता हूँ, जो वास्तव मे बुरे नही थे, मगर नीति पर न चलने तथा बुरी सोहबत मे पडे रहने के कारण नष्ट मे पड गए। मैं दावे के साथ कहता हूँ कि भूतनाथ ऐसा नेक दयावान और चतुर ऐयार बहुत कम दिखाई देगा, मगर लालच और ऐयाशी के फेर मे पडकर यह ऐसा बर्बाद हुआ कि दुनिया भर मे मुँह छिपाने और अपने को मुर्दा मशहूर करने पर भी इसे सुख की नींद नसीब न हुई। अगर यह मेहनत करके ईमानदारी के साथ दौलत पैदा करना चाहता तो आज इसकी दौलत का अन्दाज करना कठिन होता, और अगर ऐयाशी के फेर मे न पड़ा होता तो आज नाती-पोतो मे इसका घर दूसरो के लिए नजीर गिना जाता। इसने समझा कि मैं मालदार हूँ, होशियार हूँ, चालाक हूँ, और ऐयार हूँ—कुलटा स्त्रियो और रण्डियो की सोहबत का मजा लेकर सफाई के साथ अलग हो जाऊँगा, मगर इसे अब मालूम हुआ होगा कि रण्डियाँ ऐयारो के भी कान काटती हैं। नागर वगैरह के बर्ताव को जब याद करता होगा, तब इसके कलेजे मे चोट-सी लगती होगी। मैं इस समय इसकी शिकायत करने पर उतारू नही हुआ हूँ, बल्कि इसके दिल पर से पहाड़-सा बोझ हटाकर इसे [illegible] करना चाहता हूँ, क्योंकि इसे मैं अपना दोस्त समझता था, और मैं समझता हूँ, हो, इधर कई वर्षों से [illegible] उठ गया था और मैं इसकी सोहबत पसन्द नही करता था मगर [illegible]। किसी का चाल-चलन जब खराब हो जाता है तब बुद्धिमान लोग उसका [illegible] भी ऐसी ही आशा है [illegible]। [illegible] किसी तरह की तारीफ नही [illegible] बर्ताव [illegible] अपनी [illegible] दिखाई देने [illegible] (दुनिया से [illegible]) [illegible]

अपना मित्र समझ लिया है और फिर उसी निगाह से देखने लगा हूँ, जिस निगाह से पहले देखता था। परन्तु इतना मैं जरूर कहूँगा कि भूतनाथ ही एक ऐसा आदमी है जो दुनिया मे नेकचलनी और बदचलनी के नतीजे को दिखाने के लिए नमूना बन रहा है। आज यह अपने भेदो को प्रकट होते देख डरता है और चाहता है कि हमारे भेद छिपे के छिपे रह जाये, मगर यह इसकी भूल है, क्योकि किसी के ऐब छिपे नही रहते। सब नही तो बहुत कुछ दोनो कुमारो को मालूम हो ही चुके है और महाराज भी जान गए हैं, ऐसी अवस्था मे इसे अपना किस्सा पूरा-पूरा बयान करके दुनिया मे एक नजीर छोड देनी चाहिए और साथ ही इसके (भूतनाथ की तरफ देखते हुए) अपने दिल के बोझ को भी हलका कर देना चाहिए। भूतनाथ, तुम्हारे दो-चार भेद ऐसे है जिन्हे सुनकर लोगो की आँखे खुल जायेगी, और लोग समझेगे, कि हाँ, आदमी ऐसे-ऐसे काम भी कर गुजरते है और उनका नतीजा ऐसा होता है, मगर यह तो कुछ तुम्हारे ही ऐसे बुद्धिमान और अनूठे ऐयार का काम है, कि इतना करने पर भी आज तुम भले-चगे ही नही दिखाई देते हो, बल्कि नेकनामी के साथ महाराज के ऐयार कहलाने की इज्जत भी पा चुके हो। मैं फिर कहता हूँ कि किसी बुरी नीयत से इन बातो का जिक्र मैं नही करता, बल्कि तुम्हारे दिल का खुटका दूर करने के साथ-ही-साथ, जिसके नाम से तुम डरते हो, उन्हे तुम्हारा दोस्त बनाना चाहता हूँ, अत तुम्हे बे-खौफ अपना हाल बयान कर देना चाहिए।"

भूतनाथ—ठीक है, मगर क्या करूँ, मेरी जुबान नही खुलती, मैंने ऐसे-ऐसे बुरे काम किए हैं कि जिन्हे याद करके आज मेरे रोगटे खडे हो जाते है, और आत्महत्या करने की इच्छा होती है. मगर नही, मैं बदनामी के साथ दुनिया से उठ जाना पसन्द नही करता, अतएव जहाँ तक हो सकेगा, एक दफे नेकनामी अवश्य पैदा करूँगा।

इन्द्रजीतसिंह—नेकनामी पैदा करने का ध्यान जहाँ तक बना रहे अच्छा ही है, परन्तु मैं समझता हूँ कि तुम नेकनामी उसी दिन पैदा कर चुके जिस दिन हमारे महाराज ने तुम्हे अपना ऐयार बनाया, इसलिए कि तुमने इधर बहुत ही अच्छे काम किये है, और वे सब ऐसे थे कि जिन्हे अच्छे-से-अच्छा ऐयार भी कदाचित् नही कर सकता था। चाहे तुमने पहले कैसी ही बुराई और कैसे ही खोटे काम क्यो न किये हो, मगर आज हम लोग तुम्हारे देनदार हो रहे हैं, तुम्हारे अहसान के बोझ से दबे हुए हैं, और समझते हैं कि तुम अपने दुष्कर्मों का प्रायश्चित्त कर चुके हो।

भूतनाथ—आप जो कुछ कहते हैं, वह आपका बडप्पन है, परन्तु जो मैंने कुछ कुकर्म किए हैं, मैं समझता हूँ कि उनका कोई प्रायश्चित्त ही नही है, तथापि अब तो मैं महाराज की शरण मे आ ही चुका हूँ, और महाराज ने भी मेरी बुराइयो पर ध्यान न देकर मुझे अपना दासानुदास स्वीकार कर लिया है, इससे मेरी आत्मा सन्तुष्ट है और मैं अपने को दुनिया मे मुँह दिखाने योग्य समझने लगा हूँ। मैं यह भी समझता हूँ कि आप जो कुछ आज्ञा कर रहे हैं, यह वास्तव मे महाराज की आज्ञा है, जिसे मैं कदापि उल्लघन नही कर सकता, अत मैं आज अपनी अद्भुत जीवनी सुनाने के लिए तैयार हूँ, परन्तु•••

इतना कहकर भूतनाथ ने एक लम्बी साँस ली, और महाराज सुरेन्द्रसिंह की

तरफ देखा।

सुरेन्द्रसिंह—भूतनाथ, यद्यपि हम लोग तुम्हारा कुछ-कुछ हाल जान चुके हैं, मगर फिर भी तुम्हारा पूरा-पूरा हाल तुम्हारे ही मुँह से सुनने की इच्छा रखते हैं। तुम बयान करने में किसी तरह का संकोच न करो। इससे तुम्हारा दिल भी हल्का हो जायगा, और दिन-रात जो तुम्हें खुटका बना रहता है, वह भी जाता रहेगा।

भूतनाथ—जो आज्ञा।

इतना कहकर भूतनाथ ने महाराज को सलाम किया और अपनी जीवनी इस तरह बयान करने लगा—

भूतनाथ की जीवनी

भूतनाथ—सबसे पहले मैं वही बात कहूँगा, जिसे आप लोग अभी नहीं जानते, अर्थात् मैं नौगढ़ के रहने वाले और देवीसिंह के सगे चाचा जीवनसिंहजी का लड़का हूँ। मेरी सौतेली माँ मुझे देखना पसन्द नहीं करती थी और मैं उसकी आँखों में काँटे की तरह गड़ा करता था। मेरे ही सबब से मेरी माँ की इज्जत और कदर थी और उस सौत को कोई पूछता भी न था, अतएव वह मुझे दुनिया से ही उठा देने की फिक्र में लगी और यह बात मेरे पिता को भी मालूम हो गई, इसलिए जब कि मैं आठ वर्ष का था तो मेरे पिता ने मुझे अपने मित्र देवदत्त ब्रह्मचारी के सुपुर्द कर दिया जो तेजसिंह के गुरु थे और महात्माओं की तरह नौगढ़ की उसी तिलिस्मी खोह में रहा करते थे, जिसे राजा वीरेन्द्रसिंहजी ने फतह किया। मैं नहीं जानता कि मेरे पिता ने मेरे विषय में उन्हें क्या समझाया और क्या कहा, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि ब्रह्मचारी मुझे अपने लड़के की तरह मानते, पढ़ाते-लिखाते और साथ साथ ऐयारी भी सिखाते थे, परन्तु जड़ी-बूटियों के प्रभाव से उन्होंने मेरी सूरत में बहुत बड़ा फर्क डाल दिया था, जिसमें मुझे कोई पहचान न सके। मेरे पिता मुझे देखने के लिए बराबर उनके पास आया करते थे।

इतना कहकर भूतनाथ कुछ देर के लिए चुप हो गया और सबके मुँह की तरफ देखने लगा।

तेजसिंह—(ताज्जुब के साथ) ओफ ओह! क्या तुम जीवनसिंह के वही लड़के हो जिसके बारे में उन्होंने मशहूर कर दिया था कि उसे जंगल में से शेर उठा ले गया?

भूतनाथ—(हाथ जोड़कर) जी हाँ।

तेजसिंह—और आप [illegible] हैं, जिस [illegible] '[illegible]' कहकर पुकारा करते थे, क्योंकि [illegible]

भूतनाथ—जी हाँ।

[illegible]

देवीसिंह—यद्यपि मैं बहुत दिनों से आपको भाई की तरह मानने लग गया हूँ, परन्तु आज यह जानकर मेरी खुशी का कोई ठिकाना नही रहा कि आप वास्तव मे मेरे भाई हैं, मगर यह तो बताइए कि ऐसी अवस्था मे शेरसिंह आपके भाई क्योंकर हुए ? वह कौन हैं ?

भूतनाथ—वास्तव मे शेरसिंह मेरा सगा भाई नही है, बल्कि गुरुभाई और उन्ही ब्रह्मचारीजी का लड़का है, मगर हाँ, लडकपन ही से एकसाथ रहने के कारण हम दोनो मे भाई-जैसी मुहब्बत हो गई थी।

तेजसिंह—आजकल शेरसिंह कहाँ हैं ?

भूतनाथ—मुझे उनकी कुछ भी खबर नही है, मगर मेरा दिल गवाही देता है कि अब वे हम लोगों को दिखाई न देंगे।

वीरेन्द्रसिंह—सो क्यो ?

भूतनाथ—इसीलिए कि वे भी अपने को छिपाये और हम लोगो से मिले-जुले रहने और साथ ही इसके ऐबो से खाली न थे।

सुरेन्द्रसिंह—खैर, कोई चिन्ता नही, अच्छा तब ?

भूतनाथ—अत मैं उन्ही ब्रह्मचारीजी के पास रहने लगा। कई वर्ष बीत गए। पिताजी मुझसे मिलने के लिए कभी-कभी आया करते थे, और जब मैं बडा हुआ तो उन्होंने मुझे अपने से जुदा करने का सबब भी बयान किया और वे यह जानकर बहुत प्रसन्न हुए कि मैं ऐयारी के फन मे बहुत तेज औरहोशियार हो गया हूँ। उस समय उन्होंने ब्रह्मचारी-जी से कहा कि इसे किसी रियासत में नौकर रख देना चाहिए तब इसकी ऐयारी खुलेगी। मुख्तसिर यह कि ब्रह्मचारीजी की ही बदौलत मैं गदाधरसिंह के नाम से रणधीरसिंहजी के यहाँ और शेरसिंह महाराज दिग्विजयसिंह के यहाँ नौकर हो गये और यह जाहिर किया गया कि शेरसिंह और गदाधरसिंह दोनो भाई है, और दोनो आपस मे प्रेम भी ऐसा ही रखते थे।

उन दिनो रणधीरसिंहजी की जमीदारी मे तरह-तरह के उत्पात मचे हुए थे और बहुत से आदमी उनके जानी दुश्मन हो रहे थे। उनके आपस वालो को तो इस बात का विश्वास हो गया था कि अब रणधीरसिंहजी की जान किसी तरह नही बच सकती, क्योकि उन्ही दिनो उनका ऐयार श्रीसिंह दुश्मनो के हाथो से मारा जा चुका था, और खूनी का कुछ पता नही लगता था। कोई दूसरा ऐयार भी उनके पास नही था, इसलिए वे बडे ही तरद्दुद मे पडे हुए थे। यद्यपि उन दिनो उनके यहाँ नौकरी करना अपनी जान खतरे मे डालना था, मगर मुझे इन बातो की कुछ भी परवाह न हुई। रणधीरसिंहजी भी मुझे नौकर रखकर बहुत प्रसन्न हुए। मेरी खातिरदारी मे कभी किसी तरह की कमी नही करते थे। इसके दो सबब थे, एक तो उन दिनों उन्हें ऐयार की सख्त जरूरत थी, दूसरे मेरे पिता से और उनमे कुछ मित्रता भी थी जो कुछ दिन के बाद मुझे मालूम हुई।

रणधीरसिंहजी ने मेरा ब्याह भी शीघ्र ही करा दिया। सम्भव है कि इसे भी मैं उनकी कृपा और स्नेह के कारण समझूँ, पर यह भी हो सकता है कि मेरे पैर मे गृहस्थी की बेडी डालने और कही भाग जाने लायक न रखने के लिए उन्होंने ऐसा किया हो, क्योकि

अकेला और बेफिक्र आदमी कही पर जन्म भर रहे और काम करे, इसका विश्वास लोगो को कम रहता है। खैर, जो कुछ हो मतलब यह है कि उन्होने मुझे बडी इज्जत और प्यार के साथ अपने यहाँ रखा और मैंने भी थोडे ही दिनो मे ऐसे अनूठे काम कर दिखाए कि उन्हे ताज्जुब होता था। सच तो यह है कि उनके दुश्मनो की हिम्मत टूट गई और वे दुश्मनी की आग मे आप ही जलने लगे।

कायदे की बात है कि जब किसी के हाथ से दो-चार काम अच्छे निकल जाते है और चारो तरफ उनकी तारीफ होने लगती है, तब वह अपने काम की तरफ से कुछ बेफिक्र हो जाता है। वही हाल मेरा भी हुआ।

आप जानते ही होंगे कि रणधीरसिंहजी का दयाराम नामक एक भतीजा था जिसे वह बहुत प्यार करते थे, और वही उनका वारिस होने वाला था। उसके माँ-बाप लडकपन ही मे मर चुके थे, मगर चाचा की मुहब्बत के सबब उसे भी बाप के मरने का दुःख मालूम न हुआ। वह (दयाराम) उम्र मे मुझसे कुछ छोटा था, मगर मेरे और उसके बीच मे हद दर्जे की दोस्ती और मुहब्बत हो गई थी। जब हम दोनो आदमी घर पर मौजूद रहते तो बिना मिले जी नही मानता था। दयाराम का उठना-बैठना मेरे यहाँ ज्यादा होता था, अक्सर रात को मेरे यहाँ खा-पीकर सो जाता था, और उसके घर वाले भी इसमे किसी तरह का रज नही मानते थे।

जो मकान मुझे रहने के लिए मिला था, वह निहायत उम्दा और शानदार था। उसके पीछे की तरफ एक छोटा-सा नजरबाग था, जो दयाराम के शौक की बदौलत हरदम हरा भरा, गुलजार और सुहावना बना रहता था। प्राय सध्या के समय हम दोनो दोस्त उसी बाग मे बैठकर भाँग-बूटी छानते और सध्योपासन से निवृत्त हो बहुत रात गये तक गप-शप किया करते।

जेठ का महीना था और गर्मी हद दर्जे की पड रही थी। पहर रात बीत जाने पर हम दोनो दोस्त उसी नजरबाग मे दो चारपाइयो के ऊपर लेटे आपस मे धीरे-धीरे बाते कर रहे थे। मेरा खूबसूरत और प्यारा कुत्ता मेरे पायताने की तरफ एक पत्थर की चौकी पर बैठा हुआ था। बात [illegible] हम दोनो को नीद आ गई।

आधी रात से कुछ ज्यादा बीती होगी, जब मेरी आँख कुत्ते के भौकने की आवाज से खुल गई। मैंने इस पर कुछ विशेष ध्यान न दिया और करवट बदलकर फिर आँखे बन्द कर ली, क्योंकि [illegible] और नजरबाग के पिछले हिस्से की तरफ [illegible] मेरी चारपाई के पास आकर भौकने लगा, और [illegible] मेरी [illegible] खुल गई। [illegible] बेचैनी की हालत मे देखा, उस समय वह [illegible] और दोनो [illegible] था।

[illegible] खूब जानता और पहचानता था, [illegible] और मैं [illegible] उठ बैठा। [illegible] चारपाई की तरफ देखा [illegible] चारपाई [illegible] और [illegible] चारपाई [illegible] गया। [illegible] मेरा

नगनकहलाने कुना मेरी धोती पकड़कर बार-बार खीचने और बाग के पिछले हिस्से की तरफ चलने का इशारा करने लगा और जब मैं उसके इशारे के मुताबिक चला तो वह धोती छोड़कर आगे-आगे दौड़ने लगा। कदम बढाता हुआ मैं उसके पीछे-पीछे चला। उस समय मालूम हुआ कि मेरा कुत्ता जख्मी है, उसके पिछले पैर मे चोट आई है, इसलिए वह पैर उठाकर दौड़ता था। अत कुत्ते के पीछे-पीछे चलकर मैं पिछली दीवार के पास जा पहुँचा जहाँ मालती और मोमियाने की लताओ के सबब घना कुज और पूरा अन्धकार हो रहा था। कुत्ता उस झुरमुट के पास जाकर रुक गया और मेरी तरफ देखकर दुम हिलाने लगा। उसी समय मैंने झाडी मे से तीन आदमियो को निकलते हुए देखा जो बाग की दीवार के पास चले गए और फुर्ती से दीवार लाँघकर पार हो गए। उन तीनो मे से एक आदमी के हाथ मे एक छोटी-सी गठरी थी जो दीवार लाँघते समय उसके हाथ से छूटकर बाग के भीतर ही गिर पड़ी। नि मन्देह वह गठरी लेने के लिए भीतर को लौटता मगर उसने मुझे और मेरे कुत्ते को देख लिया था, इसलिए उसकी हिम्मत न पडी।

गठरी गिरने के साथ ही मैंने जफील बजाई और खजर हाथ मे लिए हुए ही उस आदमी का पीछा करना चाहा अर्थात् दीवार की तरफ बढा, मगर कुत्ते ने मेरी धोती पकड ली और झाडी की तरफ हट कर खीचने लगा, जिससे मैं समझ गया कि इस झाडी मे भी कोई छिपा हुआ है, जिसकी तरफ कुत्ता इशारा कर रहा है। मैं सम्हल कर खडा हो गया और गौर के साथ उस झाडी की तरफ देखने लगा। उसी समय पत्तो की खड-खडाहट ने विश्वास दिला दिया कि इसमे कोई और भी है। मैं इस खयाल से कि जिस तरह पहले तीन आदमी दीवार लाँघ कर भाग गये हैं, उसी तरह इसको भी भाग जाने न दूँगा, घूमकर दीवार की तरफ चला गया। उस समय मैंने देखा कि एक चार डडे की सीढी दीवार के साथ लगी हुई है, जिसके सहारे वे तीनो निकल गये थे। मैंने वह सीढी उठाकर उस गठरी के ऊपर फेंक दी जो उसके हाथ से छूट कर गिर पडी थी, क्योकि मैं उस गठरी की हिफाजत का भी खयाल कर रहा था।

सीढी हटाने के साथ ही दो आदमी उस झाडी मे से निकले और बड़ी बहादुरी के साथ मेरा मुकाबला किया, और मैं भी जी तोडकर उनके साथ लडने लगा। अन्दाज से मालूम हो गया कि गठरी उठा लेने की तरफ ही उन दोनो का विशेष ध्यान है। आप सुन चुके हैं कि मेरे हाथ मे केवल खंजर था, मगर उन दोनो के हाथ मे लम्बे-लम्बे लट्ठ थे और मुकाबला करने मे भी वे दोनो कमजोर न थे। अत मुझे अपने बचाव का ज्यादा खयाल था और मैं तब तक लडाई खतम करना नही चाहता था, जब तक मेरे आदमी न आ जाये, जिन्हें जफील देकर मैंने बुलाया था।

आधी घडी से ज्यादा देर तक मेरा उनका मुकाबला होता रहा। उसी समय मुझे रोशनी दिखाई दी और मालूम हुआ कि मेरे आदमी चले आ रहे हैं। उनकी तरफ देख-कर मेरा ध्यान कुछ बँटा ही था कि एक आदमी के हाथ का लट्ठ मेरे सिर पर बैठा और मैं चक्कर खाकर जमीन पर गिर पडा।

2

जब मेरी आँख खुली, मैंने खुद को अपने आदमियों में घिरा हुआ पाया। मशालों
[की] रोशनी बखूबी हो रही थी। जाँच करने पर मालूम हुआ कि मैं आधी घड़ी से ज्यादा
[दे]र तक बेहोश नहीं रहा। जब मैंने दुश्मन के बारे में दरियाफ्त किया, तो मालूम हुआ कि
[वे] दोनों भी भाग गये, मगर मेरे आदमियों के सबब से उस गठरी को नहीं ले जा सके।
[मै]ने अपनी हिम्मत और ताकत पर खयाल किया तो मालूम हुआ कि मैं इस समय उनका
पीछा करने लायक नहीं हूँ। आखिर लाचार हो और पहरे का इन्तजाम करके मैं गठरी
लिए हुए अपने कमरे में चला आया, मगर अपने मित्र की तरफ से मेरा दिल बड़ा ही
बेचैन रहा और तरह-तरह के शक पैदा होते रहे।

मेरे कमरे में रोशनी बखूबी हो रही थी। दरवाजा बन्द करके मैंने गठरी खोली
और उसके अन्दर की चीजों को बड़े गौर से देखने लगा।

गठरी में दो जोड़ी कपड़े निकले जिन्हें मैं पहचानता न था, मगर वे कपड़े पहने
हुए और मैंने थे। कागजों का एक मुट्ठा निकला, जिसे देखते ही मैं पहचान गया कि यह
रणधीरसिंहजी के खास सन्दूक के कागज हैं। मोम का एक साँचा कई कपड़ों की तह में
लपेटा हुआ निकला, जो खास रणधीरसिंहजी की मोहर पर से उठाया गया था। इन
चीजों के अतिरिक्त मोतियों की एक माला एक कण्ठा और तीन जड़ाऊ अँगूठियाँ निकलीं।
ये चीजें मेरे मित्र दयारामसिंह की थीं। इन सब चीजों को पहने हुए ही आज वे मेरे यहाँ
से गायब हुए थे।

इन सब चीजों को देखकर मैं बड़ी देर तक सोच-विचार में पड़ा रहा। उसी
समय कमरे का वह दरवाजा खुला, जो जनाने मकान में जाने के लिए था और मेरी स्त्री
[illegible] की माँ आती हुई दिखाई दी। उस समय वह एक बच्चे की माँ हो चुकी थी
और अपने बच्चे को भी गोद में लिए हुए थी। इसमें कोई शक नहीं कि मेरी वह स्त्री
बुद्धिमान थी और छोटे-मोटे कामों में मैं उसकी राय भी लिया करता था।

उसकी सूरत देखते ही मैं पहचान गया कि तरद्दुद और घबराहट ने उसे अपना
शिकार बना लिया है। मैंने उसे बुलाकर अपने पास बैठाया और सब हाल कह सुनाया
[illegible] कहा कि [illegible] इसी समय अपने [illegible] का पता लगाने के लिए जाना
चाहता हूँ। मगर उसने इस आखिरी बात को कबूल न किया और कहा कि "मेरी राय में
[illegible] से मिलना चाहिए।"

[illegible]

[illegible]

इस समय ऐसे ढग से यहाँ आये हो ? दयाराम कुशल से तो है ?"

मेरी सूरत देखते ही उन्होने दयाराम का कुशल पूछा, इससे मुझे वडा ही ताज्जुव हुआ । खैर, मैं उनके पास वैठ गया और जो कुछ मामला हुआ था, साफ-साफ कह सुनाया ।

मैं इस किस्से को मुख्तसिर ही मे वयान करूँगा । रणधीरसिंहजी इस हाल को सुनकर वहुत ही दु खी और उदास हुए । वहुत कुछ वातचीत करने के वाद अन्त मे वोले, "दयाराम मेरा एक ही वारिस है और तुम्हारा दिली दोस्त है, ऐसी अवस्था मे उसके लिए क्या करना चाहिए, सो तुम ही सोच लो ! मै क्या कहूँ ! मै तो समझ चुका था कि दुश्मनो की तरफ से अब निश्चिन्त हुआ, मगर नही ।"

इतना कहकर वे कपडे से अपना मुँह ढाँप कर रोने लगे । मैं उन्हे वहुत-कुछ समझा वुझाकर विदा हुआ और अपने घर चला आया । अपनी स्त्री से मिलकर सव हाल कहने और समझाने-वुझाने के वाद मैं अपने शागिर्दो को साथ लेकर घर से वाहर निकला । वस यही से मेरी वदकिस्मती का जमाना शुरू हुआ ।

इतना कहकर भूतनाथ अटक गया और सिर नीचा करके कुछ सोचने लगा । सव कोई वेचैनी के साथ उसकी तरफ देख रहे थे और भूतनाथ की अवस्था से मालूम होता था कि वह इस वात को सोच रहा है कि मैं अपना किस्सा आगे वयान करूँ या नही । उसी समय दो आदमी और कमरे के अन्दर चले आये और महाराज को सलाम करके खडे हो गये । इनकी सूरत देखते ही भूतनाथ के चेहरे का रग उड गया और वह डरे हुए ढग मे उन दोनो की तरफ देखने लगा ।

दोनो आदमी, जो अभी-अभी कमरे मे आये, वे ही थे जिन्होने भूतनाथ को अपना नाम 'दलीपशाह' वतलाया था । इन्द्रदेव की आज्ञा पाकर वे दोनो भूतनाथ के पास ही वैठ गये ।

3

प्रेमी-पाठक भूले न होगे कि दो आदमियो ने भूतनाथ से अपना नाम दलीपशाह वतलाया, जिनमे से एक को पहला दलीप और दूसरे को दूसरा दलीप समझना चाहिए ।

भूतनाथ तो पहले ही सोच मे पड गया था कि अपना हाल आगे वयान करे या नही, अव दोनो दलीपशाह को देखकर वह और भी घवडा गया । ऐयार लोग समझ रहे थे कि अव उसमे वात करने की भी ताकत नही रही । उसी समय इन्द्रदेव ने भूतनाथ से कहा, "क्यो भूतनाथ, चुप क्यो हो गये ? कहो हाँ, तव आगे क्या हुआ ?"

इसका जवाव भूतनाथ ने कुछ न दिया और सिर झुकाकर जमीन की तरफ देखने लगा । उस समय पहले दलीपशाह ने हाथ जोड कर महाराज की तरफ देखा और कहा, "कृपानाथ, भूतनाथ को अपना हाल वयान करने मे वड़ा कष्ट हो रहा है, और वास्तव मे वात भी ऐसी ही है । कोई भला आदमी अपनी उन वातो को जिन्हे वह ऐव समझता है,

अपनी जवान से अच्छी तरह वयान नही कर सकता । अत यदि आज्ञा हो तो मैं इसका हाल पूरा-पूरा वयान कर जाऊँ, क्योंकि मैं भी भूतनाथ का हाल उतना ही जानता हूँ, जितना स्वयं भूतनाथ। भूतनाथ जहाँ तक वयान कर चुके हैं, उसे मैं वाहर खडा-खडा सुन भी चुका हूँ। जव मैंने समझा कि अव भूतनाथ से अपना हाल नही कहा जाता तव मैं यह अर्ज करने के लिए हाजिर हुआ हूँ। (भूतनाथ की तरफ देखकर) मेरे इस कहने से आप यह न समझिएगा कि मैं आपके साथ दुश्मनी कर रहा हूँ। नही, जो काम आपके सुपुर्द किया गया है, उसे आपके वदले में मैं आसानी के साथ कर देना चाहता हूँ ।"

इन दोनो आदमियो (दलीपशाह) को महाराज तथा और सव ने भी ताज्जुव के साथ देखा था, मगर यह समझ कर इन्द्रदेव से किसी ने कुछ भी न पूछा कि जो कुछ है, थोडी देर मे मालूम हो ही जायेगा, मगर जव दलीपशाह ऊपर लिखी वात वोलकर चुप हो गया, तव महाराज ने भेद-भरी निगाहो से इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखा और कुमार ने झुककर धीरे से कुछ कह दिया, जिसे वीरेन्द्रसिंह तथा तेजसिंह ने भी सुना तथा इनके जरिए से हमारे और साथियो को भी मालूम हो गया कि कुमार ने क्या कहा ।

दलीपशाह की वात सुनकर इन्द्रदेव ने महाराज की तरफ देखा और हाथ जोड कर कहा, "इन्होंने (दलीपशाह ने) जो कुछ कहा, वास्तव में ठीक है, मेरी समझ में अगर भूतनाथ का किस्सा इन्ही की जुवानी सुन लिया जाये तो कोई हर्ज नही है।" इसके जवाव में महाराज ने मंजूरी के लिए सिर हिला दिया ।

इन्द्रजीतसिंह—(भूतनाथ की तरफ देखकर) भूतनाथ, इसमे तुम्हे किसी तरह का उज्र है ?

भूतनाथ—(महाराज की तरफ देखकर और हाथ जोडकर) जो महाराज की मर्जी, इसमें नहीं कहने की सामर्थ्य नही है। मुझे क्या खवर थी कि कसूर माफ हो जाने पर भी यह दिन देखना नसीव होगा। यद्यपि यह मैं खूव जानता हूँ कि मेरा भेद अव किसी से छिपा नही रहा, परन्तु फिर भी अपनी भूल वार-वार कहने या सुनने मे लज्जा वढ़ती ही जाती है कम नही होती। खैर कोई चिन्ता नहीं, जैसा होगा वैसा अपने कलेजे को मजवूत करूँगा और दलीपशाह की कही हुई वातें सुनूँगा तथा देखूँगा कि ये महाशय कुछ झूठ का भी प्रयोग करते हैं या नहीं।

दलीपशाह—नहीं-नहीं भूतनाथ, मैं झूठ कदापि न वोलूँगा, इससे तुम वेफिक्र रहो। (इन्द्रदेव की तरफ देखकर) अच्छा तो अव मैं प्रारम्भ करता हूँ।

दलीपशाह ने इस तरह कहना शुरू किया —

[illegible]

तरफ देख के) भूतनाथ, मैं वास्तव मे दलीपशाह हूँ, उस दिन तुमने मुझे नही पहचाना तो इसमे तुम्हारी आँखो का कोई कसूर नही है, कैद की सख्तियो के साथ-साथ जमाने की चाल ने मेरी सूरत ही बदल दी है, तुम तो अपने हिसाब से मुझे मार ही चुके थे और तुम्हे मुझसे मिलने की कभी उम्मीद भी न थी मगर सुन लो और देख लो कि ईश्वर की कृपा से मैं अभी तक जीता-जागता तुम्हारे सामने खडा हूँ। यह कुँअर साहब के चरणो का प्रताप है। अगर मैं कैद न हो जाता तो तुमसे बदला लिए बिना कभी न रहता, मगर तुम्हारी किस्मत अच्छी थी जो मैं कैद हो रह गया और छूटा भी तो कुँअर साहब के हाथ से, जो तुम्हारे पक्षपाती हैं। तुम्हे इन्द्रदेव से बुरा न मानना चाहिए और न यह सोचना चाहिए कि तुम्हे दुःख देने के लिए इन्द्रदेव तुम्हारा पुराना पचडा खुलवा रहे हैं। तुम्हारा किस्सा तो सब को मालूम हो चुका है, इस समय ज्यो का त्यो चुपचाप रह जाने पर तुम्हारे चित्त को शान्ति नही मिल सकती और तुम हम लोगो की सूरत देख-देखकर दिन-रात तरद्दुद मे पडे रहोगे अत तुम्हारे पिछले ऐबो को खोलकर इन्द्रदेव तुम्हारे चित्त को शान्ति दिया चाहते हैं और तुम्हारे दुश्मनो को, जिनके साथ तुम ही ने बुराई की है, तुम्हारा दोस्त बना रहे है। ये यह भी चाहते हैं कि तुम्हारे साथ-ही-साथ हम लोगो का भेद भी खुल जाय और तुम जान जाओ कि हम लोगो ने तुम्हारा कसूर माफ कर दिया है क्योकि अगर ऐसा न होगा तो जरूर तुम हम लोगो को मार डालने की फिक्र मे पडे रहोगे और हम लोग इस धोखे मे रह जायेंगे कि हमने इनका कसूर तो माफ ही कर दिया, अब ये हमारे साथ बुराई न करेंगे। (जीतसिंह की तरफ देखकर) अब मैं मतलब की तरफ झुकता हूँ और भूतनाथ का किस्सा बयान करता हूँ।

जिस जमाने का हाल भूतनाथ बयान कर रहा है, अर्थात् जिन दिनो भूतनाथ के मकान से दयाराम गायब हो गए थे उन दिनो यही नागर काशी के बाजार मे वेश्या बनकर बैठी हुई अमीरो के लडको को चौपट कर रही थी। उसकी बढी-चढी खूबसूरती लोगो के लिए जहर हो रही थी और माल के साथ ही विशेष प्राप्ति के लिए यह लोगो की जान पर भी वार करती थी। यही दशा मनोरमा की भी थी परन्तु उसकी बनिस्बत यह बहुत ज्यादा रुपए वाली होने पर भी नागर की-सी खूबसूरत न थी, हाँ, चालाक जरूर ज्यादा थी। और लोगो की तरह भूतनाथ और दयाराम भी नागर के प्रेमी हो रहे थे। भूतनाथ को अपनी ऐयारी का घमण्ड था और नागर को अपनी चालाकी का। भूतनाथ नागर के दिल पर कब्जा करना चाहता था और नागर इसकी तथा दयाराम की दौलत अपने खजाने मे मिलाना चाहती थी।

दयाराम की खोज मे घर से शागिर्दो को साथ लिए हुए बाहर निकलते ही भूतनाथ ने काशी का रास्ता लिया और तेजी के साथ सफर तय करता हुआ नागर के मकान पर पहुँचा। नागर ने भूतनाथ की बडी खातिरदारी और इज्जत की तथा कुशल-मगल पूछने के बाद यकायक यहाँ आने का सबब भी पूछा।

भूतनाथ ने अपने आने का ठीक-ठीक सबब तो नही बताया, मगर नागर समझ गई कि कुछ दाल मे काला जरूर है। इसी तरह भूतनाथ को भी इस बात का शक पैदा हो गया कि दयाराम की चोरी मे नागर का कुछ लगाव जरूर है अथवा यह उन आद-

मियों को जरूर जानती है जिन्होंने दयाराम के साथ ऐसी दुश्मनी की है।

भूतनाथ का शक काशी ही वालों पर था इसलिए काशी ही में अड्डा बनाकर इधर-उधर घूमना और दयाराम का पता लगाना आरम्भ किया। जैसे-जैसे दिन बीतता था, भूतनाथ का शक भी नागर के ऊपर बढ़ता जाता था। सुनते हैं कि उसी जमाने में भूतनाथ ने एक औरत के साथ काशीजी में ही शादी भी कर ली थी जिससे कि नानक पैदा हुआ है क्योंकि इस झमेले में भूतनाथ को बहुत दिनों तक काशी में रहना पड़ा था।

यह सच है कि कम्बख्त रंडियाँ रुपये के सिवा और किसी की नहीं होतीं। जो दयाराम कि नागर को चाहता, मानता और दिल खोलकर रुपया देता था, नागर उसी के खून की प्यासी हो गई क्योंकि ऐसा करने में उसे विशेष प्राप्ति की आशा थी। भूतनाथ ने यद्यपि अपने दिल का हाल नागर से बयान नहीं किया मगर नागर को विश्वास हो गया कि भूतनाथ को उस पर शक है और यह दयाराम ही की खोज में काशी आया हुआ है, अतः नागर ने अपना उचित प्रबन्ध करके काशी छोड़ दी और गुप्त रीति से जमानिया में जा बसी। भूतनाथ भी मिट्टी सूंघता हुआ उसकी खोज में जमानिया जा पहुँचा और एक भाड़े का मकान लेकर वहाँ रहने लगा।

इस खोज-ढूंढ में वर्षों बीत गये, मगर दयाराम का पता न लगा। भूतनाथ ने अपने मित्र इन्द्रदेव से भी मदद माँगी और इन्द्रदेव ने मदद दी भी मगर नतीजा कुछ भी न निकला। इन्द्रदेव ही के कहने से मैं उन दिनों भूतनाथ का मददगार बन गया था।

इस किस्से के सम्बन्ध में रणधीरसिंह के रिश्तेदारों की तथा जमानिया गयाजी और रामगढ़ इत्यादि की भी बहुत-सी बातें कही जा सकती हैं परन्तु मैं भी भूतनाथ का मददगार था, मगर अफसोस, भूतनाथ की किस्मत तो कुछ और ही बनाना चाहती थी इसलिए हम लोगों की मेहनत का कोई अच्छा नतीजा न निकला, बल्कि एक दिन जब मिलने के लिए मैं भूतनाथ के डेरे पर गया तो मुलाकात होने के साथ ही भूतनाथ ने क्रोध से लाल-पीला होकर मुझसे कहा, "दलीपशाह, मैं तो तुम्हें बहुत अच्छा और नेक समझता था मगर तुम बहुत ही बुरे और दगाबाज निकले। मुझे ठीक-ठीक पता लग चुका है कि दयाराम का भेद तुम्हारे दिल के अन्दर है और तुम हमारे दुश्मनों के मददगार हो और [illegible] दयाराम कहाँ है। तुम्हारे लिए यही अच्छा है कि [illegible] (दयाराम का) पता बता दो, नहीं तो मैं तुम्हारे साथ बुरी [illegible] और [illegible] हरगिज नहीं छोड़ूँगा।"

[illegible] बेतुकी बातों को [illegible] और [illegible] गया। [illegible] कहा गया। [illegible] भूतनाथ को [illegible]

किया। खैर कोई चिन्ता नही, भूतनाथ अपनी इस वेवकूफी पर अफसोस करेगा और पछतावेगा, तुम इस वात का खयाल न करो और भूतनाथ से मिलना-जुलना छोडकर दयाराम की खोज मे लगे रहो, तुम्हारा अहसान रणधीरसिंह पर और मेरे ऊपर होगा।

इन्द्रदेव ने वहुत कुछ कह-सुनकर मेरा क्रोध शान्त किया और दो दिन तक मुझे अपने यहाँ मेहमान रक्खा। तीसरे दिन मैं इन्द्रदेव से विदा होने वाला ही था कि तभी इनके एक शागिर्द ने आकर एक विचित्र खवर सुनाई। उसने कहा कि आज रात को वारह वजे के समय मिर्जापुर के एक जमीदार 'राजसिंह' के यहाँ दयाराम के होने का पता मुझे लगा है। खुद मेरे भाई ने यह खवर दी है। उसने यह भी कहा है कि आज कल नागर भी उन्ही के यहाँ है।

इन्द्रदेव—(शागिर्द से) वह खुद मेरे पास क्यो नही आया ?

शागिर्द—वह आप ही के पास आ रहा था, मुझसे रास्ते मे मुलाकात हुई और उनके पूछने पर मैंने कहा कि दयाराम जी का पता लगाने के लिए मैं तैनात किया गया हूँ। उसने जवाव दिया कि अव तुम्हारे जाने को कोई जरूरत न रही, मुझे उनका पता लग गया और यही खुशखवरी सुनाने के लिए मैं सरकार के पास जा रहा था, मगर अव तुम मिल गये हो तो मेरे जाने की कोई जरूरत नही। जो कुछ मै कहता हूँ, तुम जाकर उन्हें सुना दो और मदद लेकर वहुत जल्द मेरे पास आओ। मैं फिर उसी जगह जाता हूँ, कहो ऐसा न हो कि दयाराम जी वहाँ से भी निकालकर किसी दूसरी जगह पहुँचा दिये जायँ और हम लोगो को पता न लगे, मै जाकर इस वात का ध्यान रक्खूंगा। इसके वाद उसने सव कैफियत वयान की और अपने मिलने का पता वताया।

इन्द्रदेव—ठीक है उसने जो कुछ किया वहुत अच्छा किया, अव उसे मर्दद पहुँचाने का वन्दोवस्त करना चाहिए।

शागिर्द—यदि आज्ञा हो तो भूतनाथ को भी इस वात की इत्तिला दे दी जाय ?

इन्द्रदेव—कोई जरूरत नही, अव तुम जाकर कुछ आराम करो, तीन घण्टे वाद फिर तुम्हें सफर करना होगा।

इसके वाद इन्द्रदेव का शागिर्द जव अपने डेरे पर चला गया, तव मुझसे और इन्द्रदेव से वातचीत होने लगी। इन्द्रदेव ने मुझसे मदद माँगी और मुझे मिर्जापुर जाने के लिए कहा, मगर मैंने इनकार किया और कहा कि अव मै न तो भूतनाथ का मुँह देखूंगा और न उसके किसी काम मे शरीक होऊँगा। इसके जवाव मे इन्द्रदेव ने मुझे पुन समझाया और कहा कि यह काम भूतनाथ का नही है, मैं कह चुका हूँ कि इसका अहसान मुझ पर और रणधीरसिंह जी पर होगा।

इसी तरह की वहुत-सी वातें हुईं, लाचार मुझे इन्द्रदेव की वात माननी पडी और कई घण्टे के वाद इन्द्रदेव के उसी शागिर्द 'शम्भू' को साथ लिए हुए मैं मिर्जापुर की तरफ रवाना हुआ। दूसरे दिन हम लोग मिर्जापुर जा पहुँचे और वताये हुए ठिकाने पर पहुँचकर शम्भू के भाई से मुलाकात की। दरियाफ्त करने पर मालूम हुआ कि दयाराम अभी तक मिर्जापुर की सरहद के वाहर नही गये है, अत जो कुछ हम लोगो को करना था, आपस मे तय करने के वाद सूरत वदलकर वाहर निकलें।

दयाराम को ढूंढ निकालने के लिए हमने कैसी-कैसी मेहनत की और हम लोगो को किस-किस तरह की तकलीफें उठानी पडी, इसका बयान करना किस्से को व्यर्थ तूल देना और अपने मुंह मियां मिट्ठू बनना है। महाराज के (आपके) नामी ऐयारो ने जैसे-अनूठे काम किये हैं उनके सामने हमारी ऐयारी कुछ भी नही है अतएव केवल इतना ही कहना काफी है कि हम लोगो ने अपनी हिम्मत से बढकर काम किया और हद दर्जे की तकलीफ उठाकर दयाराम जी को ढूंढ निकाला। केवल दयाराम को नही, बल्कि उनके साथ-ही-साथ 'राजसिंह' को भी गिरफ्तार करके हम लोग अपने ठिकाने पर ले आये, मगर अफसोस! हम लोगों की सब मेहनत पर भूतनाथ ने पानी ही नही फेर दिया, बल्कि जन्म भर के लिए अपने माथे पर कलक का टीका भी लगाया।

कैद की सख्ती उठाने के कारण दयाराम जी बहुत ही कमजोर और बीमार हो रहे थे, उनमें बात करने की भी ताकत न थी, इसलिए हम लोगो ने उसी समय उन्हे उठाकर इन्द्रदेव के पास ले जाना मुनासिब न समझा और दो-तीन दिन तक आराम देने की नीयत से अपने गुप्त स्थान पर, जहाँ हम लोग टिके हुए थे, ले गये। जहाँ तक हो सका, नरम बिछावन का इन्तजाम करके उस पर उन्हे लिटा दिया और उनके शरीर मे ताकत लाने का बन्दोबस्त करने लगे। इस बात का भी निश्चय कर लिया कि जब तक इनकी तबीयत ठीक न हो जायगी, इनसे कैद किये जाने का सबब तक न पूछेंगे।

दयाराम जी के आराम का इन्तजाम करने के बाद हम लोगो ने अपने-अपने हर्बे खोलकर उनकी चारपाई के नीचे रख दिए, कपड़े उतारे और बातचीत करने तथा दुश्मनी का सबब जानने के लिए राजसिंह को होश मे लाये और उसकी मुश्कें खोलकर बातचीत करने लगे क्योंकि उस समय इस बात का डर हम लोगो को कुछ भी न था कि वह हम पर हमला करेगा या हम लोगो का कुछ बिगाड़ सकेगा।

जिस मकान में हम लोग टिके हुए थे वह बहुत ही एकान्त और उजाड़ मुहल्ले में था। रात का समय था और मकान की तीसरी मंजिल पर हम लोग बैठे हुए थे, एक मद्धिम चिराग आले पर जल रहा था। दयाराम जी का पलंग हम लोगों के पीछे की तरफ था और राजसिंह सामने बैठा हुआ ताज्जुब के साथ हम लोगों का मुँह देख रहा था। उसी समय दरवाजे पर धमाके होने की आवाज आई और उसके कुछ ही देर बाद [illegible] ने अपने आपको हम लोगों के सामने खड़ा किया। सामना होने के साथ ही भूतनाथ ने मुझसे कहा, 'क्या मैं [illegible], आखिर मेरी बात ठीक निकली [illegible] राजसिंह के साथ मिल कर हमारे साथ दगाबाजी [illegible]। खैर, [illegible]'

[illegible]

ही चाहते थे कि भूतनाथ के हाथ का खजर उनके कलेजे के पार हो गया और वे बेदम होकर जमीन पर गिर पडे ।

4

मैं नही कह सकता कि भूतनाथ ने ऐसा क्यो किया। भूतनाथ का कौल तो यही है कि मैंने उनको पहचाना नही, और धोखा हुआ। खैर जो हो, दयाराम के गिरते ही मेरे मुँह से 'हाय' की आवाज निकली और मैंने भूतनाथ से कहा, "ऐ कम्बख्त ! तूने बेचारे दयाराम को क्यो मार डाला जिन्हे बडी मुश्किल से हम लोगो ने खोज निकाला था !"

मेरी बात सुनते ही भूतनाथ सन्नाटे मे आ गया। इसके बाद उसके दोनो साथी तो न मालूम क्या सोचकर एकदम भाग खडे हुए, मगर भूतनाथ बडी बेचैनी से दयाराम के पास बैठकर उनका मुँह देखने लगा। उस समय भूतनाथ के देखते ही देखते उन्होंने आखिरी हिचकी ली और दम तोड दिया। भूतनाथ उनकी लाश के साथ चिपटकर रोने लगा और बडी देर तक रोता रहा। तब तक हम तीनो आदमी पुन मुकाबला करने लायक हो गये और इस बात मे हम लोगो का साहस और भी बढ गया कि भूतनाथ के दोनो साथी उसे अकेला छोडकर भाग गये थे। मैंने मुश्किल से भूतनाथ को अलग किया और कहा, "अब रोने और नखरा करने से फायदा ही क्या होगा, उसके साथ ऐसी ही मुहब्बत थी तो उन पर वार न करना था, अब उन्हें मारकर औरतो की तरह नखरा करने बैठे हो !"

इतना सुनकर भूतनाथ ने अपनी आँखें पोछी और मेरी तरफ देख के कहा, "क्या मैंने जानबूझकर इन्हें मार डाला है ?"

मैं—बेशक ! क्या यहाँ आने के साथ ही तुमने उन्हे चारपाई पर पडे नही देखा था ?

भूतनाथ—देखा था, मगर मैं नही जानता था कि ये दयाराम है। इतने मोटे-ताजे आदमी को यकायक ऐसा दुबला-पतला देखकर मैं कैसे पहचान सकता था ?

मैं—क्या खूब, ऐसे ही तो तुम अन्धे थे ? खैर, इसका इन्साफ तो रणधीरसिंह के सामने ही होगा, इस समय तुम हमसे फैसला कर लो, क्योकि अभी तक तुम्हारे दिल मे लडाई का हौसला जरूर बना होगा।

भूतनाथ – (अपने को सभालकर और मुँह पोछकर) नही-नही, मुझे अब लडने का हौसला नही है, जिसके वास्ते मैं लडता था जब वही नही रहा तो अब क्या ? मुझे ठीक पता लग चुका था कि दयाराम तुम्हारे फेर मे पडे हुए हैं, और अपनी आँखो से देख भी लिया, मगर अफसोस है कि मैंने पहचाना नही और ये इस तरह धोखे मे मारे गये। लेकिन इसका कसूर भी तुम्हारे ही सिर लग सकता है।

मैं—खैर, अगर तुम्हारे किए हो सके तो तुम बिलकुल कसूर मेरे ही सिर थोप देना, मैं अपनी सफाई आप कर लूंगा, मगर इतना समझ रखो कि लाख कोशिश करने पर भी तुम अपने को बचा नहीं सकते, क्योंकि मैंने इन्हे खोज निकालने मे जो कुछ मेहनत की थी, वह इन्द्रदेवजी के कहने से की थी, न तो मैं अपनी प्रशसा कराना चाहता था और न इनाम ही लेना चाहता था, बल्कि जरूरत पड़ने पर मैं इन्द्रदेव की गवाही दिला सकता हूँ और तुम भी अपने को बेकसूर साबित करने के लिए नागर को पेश कर देना, जिसके कहने और सिखाने मे आकर तुमने मेरे साथ दुश्मनी पैदा कर ली।

इतना सुनकर भूतनाथ सन्नाटे मे आ गया। सिर झुकाकर देर तक सोचता रहा और इसके बाद लम्बी सांस लेकर उसने मेरी तरफ देखा और कहा, "बेशक मुझे नागर कम्बख्त ने धोखा दिया। अब मुझे भी इन्ही के साथ मर-मिटना चाहिए।" इतना कहकर भूतनाथ ने खंजर हाथ मे ले लिया, मगर कुछ न कर सका, अर्थात् अपनी जान न दे सका।

महाराज, जवांमर्दों का कहना बहुत ठीक है कि बहादुरो को अपनी जान प्यारी नही होती। वास्तव मे जिसे अपनी जान प्यारी होती है, वह कोई हौसले का काम नही कर सकता और जो अपनी जान हथेली पर लिए रहता है और समझता है कि दुनिया मे मरना एक बार ही है, कोई बार-बार नही मरता, वही सब कुछ कर सकता है। भूतनाथ के बहादुर होने मे सन्देह नही, परन्तु इसे अपनी जान प्यारी जरूर थी और इसका सबब यही था कि वह ऐयाशी के नशे मे चूर था। जो आदमी ऐयाश होता है उसमे ऐयाशी के सबब कई तरह की बुराइयाँ आ जाती हैं और बुराइयो की बुनियाद जम जाने के कारण ही उसे अपनी जान प्यारी हो जाती है, तथा वह कोई भी काम नही कर सकता। यही सबब था कि उस समय भूतनाथ जान न दे सका, बल्कि [illegible] करने का ढंग जमाने लगा, नही तो उस समय मौका ऐसा ही था, इनसे जैसे कसूर हो गए थे, उनका बदला तभी पूरा होता जब यह भी उसी जगह अपनी जान दे देता और उस मकान मे तीनों लाशें एक साथ ही निकाली जातीं।

भूतनाथ ने कुछ देर तक सोचने के बाद मुझसे कहा—"मुझे इस समय अपनी जान प्यारी नही है और मैं मर जाने के लिए तैयार हूँ, मगर मैं देखता हूँ कि ऐसा करने से भी किसी का फायदा नही पहुँचेगा। मैं जितना समझ चुका हूँ और जानता हूँ [illegible] क्योंकि इस समय यह दुश्मनों से घिरा हुआ है। अगर मैं [illegible] दुश्मनों का नामोनिशान मिटाकर इन्हे बेफिक्र कर सकूँगा, अतएव [illegible] हूँ कि [illegible] सिर्फ दो साल के लिए जाना छोड़ दें।'

मैं [illegible] हूँ। तब तुम [illegible] तुमने [illegible] आप [illegible] ऐयाश [illegible] रहे।

भूतनाथ—नही-नही, मेरा मतलब तुम्हारी पहली बात से नही है, वल्कि दूसरी वात से है, अर्थात् अगर तुम चाहोगे तो लोगो को इस वात का पता ही नही लगेगा कि दयाराम भूतनाथ के हाथ से मारा गया।

मैं—यह क्योकर छिप सकता है?

भूतनाथ—अगर तुम छिपाओ तो सब छिप जायगा।

मुख्तसिर यह कि धीरे-धीरे वातो को वढाता हुआ भूतनाथ मेरे पैरो पर गिर पडा और बडी खुशामद के साथ कहने लगा कि तुम इस मामले को छिपाकर मेरी जान बचा लो। केवल इतना ही नहीं, इसने मुझे हर तरह के सब्जवाग दिखाए और कसमे दे-देकर मेरी नाक मे दम कर दिया। लालच मे तो मैं नही पडा, मगर पिछली मुरौवत के फेर मे जरूर पड गया और भेद को छिपाये रखने की कसम खाकर अपने साथियो को साथ लिए हुए मैं उस घर के वाहर निकल गया। भूतनाथ तथा दोनो लाशो को उसी तरह छोड दिया, फिर मुझे मालूम नही कि भूतनाथ ने उन लाशो के साथ क्या बर्ताव किया।"

यहाँ तक भूतनाथ का हाल कहकर कुछ देर के लिए दलीपशाह चुप हो गया और उसने इस नीयत मे भूतनाथ की तरफ देखा कि देखे यह कुछ बोलता है या नही। इस समय भूतनाथ की आँखो से आँसू की नदी वह रही थी और वह हिचकियाँ ले-लेकर रो रहा था। वडी मुश्किल से भूतनाथ ने अपने दिल को सम्हाला और दुपट्टे से मुह पोछ कर कहा, "ठीक है, ठीक है, जो कुछ दलीपशाह ने कहा, सब सच है। मगर यह वात मैं कसम खाकर कह सकता हूँ कि मैंने जानवूझकर दयाराम को नही मारा। वहाँ राजसिंह को खुले हुए देखकर मेरा शक यकीन के साथ वदल गया और चारपाई पर पडे हुए देख कर भी मैंने दयाराम को नही पहचाना। मैंने समझा कि यह भी कोई दलीपशाह का साथी होगा। बेशक दलीपशाह पर मेरा शक मजबूत हो गया था और मैं समझ बैठा था कि जिन लोगो ने दयाराम के साथ दुश्मनी की है दलीपशाह जरूर उनका साथी है। यह शक यहाँ तक मजवूत हो गया था कि दयाराम के मारे जाने पर भी दलीपशाह की तरफ से मेरा दिल साफ न हुआ। बल्कि मैंने समझा कि इसी (दलीपशाह) ने दयाराम को वहाँ लाकर कैद किया था। जिस नागर पर मुझे शक हुआ था, उसी कम्बख्त की जादू-भरी वातो मे मैं फँस गया और उसी ने मुझे विश्वास दिला दिया कि इसका कर्ता-धर्ता दलीप-शाह है। यही सवब है कि इतना हो जाने पर भी मैं दलीपशाह का दुश्मन बना ही रहा। हाँ, दलीपशाह ने एक वात नही कही, वह यह है कि इस भेद को छिपाये रखने की कसम खाकर भी दलीपशाह ने मुझे सूखा नही छोडा। इन्होंने कहा कि तुम कागज पर लिखकर माफी माँगो तब मैं तुम्हें माफ करके यह भेद छिपाये रखने की कसम खा सकता हूँ। लाचार होकर मुझे ऐसा करना पडा और मैं माफी के लिए चिट्ठी लिख हमेशा के लिए इनके हाथ मे फँस गया।

दलीपशाह—वेशक यही बात है, और मैं अगर ऐसा न करता तो थोडे ही दिन वाद भूतनाथ मुझे दोषी ठहरा कर आप सच्चा बन जाता। खैर, अब मैं इसके आगे का हाल बयान करता हूँ जिसमे थोडा-सा हाल तो ऐसा ही होगा जो मुझे खास भूतनाथ से

मालूम हुआ था।

इतना कहकर दलीपशाह ने फिर अपना बयान शुरू किया—

दलीपशाह—जैसाकि भूतनाथ भी कह चुका है, बहुत मिन्नत और खुशामद से लाचार होकर मैंने कसूरवार होने और माफी माँगने की चिट्ठी लिखाकर इसे छोड दिया और इसका ऐब छिपा रखने का वादा करके अपने साथियो को साथ लिए उस घर से बाहर निकल गया और भूतनाथ की इच्छानुसार दयाराम की लाश को और भूतनाथ को उसी मकान में छोड दिया। फिर मुझे नही मालूम कि क्या हुआ और इसने दयाराम की लाश के साथ कैसा बर्ताव किया।

वहाँ से बाहर होकर मैं इन्द्रदेव की तरफ रवाना हुआ, मगर रास्ते भर सोचता जाता था कि अब मुझे क्या करना चाहिए, दयाराम का सच्चा-सच्चा हाल इन्द्रदेव से बयान करना चाहिए या नही। आखिर हम लोगो ने निश्चय कर लिया कि जब भूतनाथ से वादा कर चुके है तो इस भेद को इन्द्रदेव से भी छिपा ही रखना चाहिए।

जब हम लोग इन्द्रदेव के मकान मे पहुँचे तो उन्होंने कुशल-मगल पूछने के बाद दयाराम का हाल दरियाफ्त किया जिसके जवाब मे मैंने असल मामले को तो छिपा रखा और बात बनाकर यो कह दिया कि जो कुछ मैंने या आपने सुना था, वह ठीक ही निकला अर्थात् राजसिंह ही ने दयाराम के साथ वह सलूक किया और दयाराम राजसिंह के घर मे मौजूद भी थे, मगर अफसोस, बेचारे दयाराम को हम लोग छुडा न सके और वे जान से मारे गये।

इन्द्रदेव—(चौंककर) है! जान से मारे गये!

मैं—जी हाँ, और इस बात की खबर भूतनाथ को भी लग चुकी थी। मेरे पहुँचने के पहले ही भूतनाथ, राजसिंह के उस मकान मे जिसमे दयाराम को कैद कर रखा था, पहुँच गया और उसने अपने मालिक दयाराम की लाश देखी जिसे कुछ ही देर पहले राजसिंह ने मार डाला था, तब भूतनाथ ने उसी समय राजसिंह का सिर काट डाला। सिवाय इसके या और कर ही क्या सकता था। इसके थोडी देर बाद हम लोग भी उस घर मे पहुँचे और दयाराम तथा राजसिंह की लाश और भूतनाथ को वहाँ मौजूद पाया, दरियाफ्त करने पर भूतनाथ ने सब हाल बयान किया और अफसोस करते हुए हम लोग वहाँ से रवाना हुए।

इन्द्रदेव—अफसोस! बडा बुरा हुआ! खैर, ईश्वर की मर्जी!

फिर भूतनाथ के ऐब को छिपाकर जो कुछ इन्द्रदेव से कहा, भूतनाथ की इच्छानुसार ही कहा था। भूतनाथ ने भी यही बात मंजूर की और इस तरह अपने ऐब को छिपा रखा।

यहाँ तक भूतनाथ का किस्सा कहकर जब दलीपशाह कुछ देर के लिए चुप हो [illegible] [illegible] भूतनाथ की [illegible] इस मामले [illegible] [illegible] भेद को [illegible]

[illegible] भूतनाथ [illegible] और [illegible] है। अब,

इसी से समझ जाइये और मैं क्या कहूँ !

तेजसिंह—ठीक है, अच्छा तब क्या हुआ ? भूतनाथ की कथा इतनी ही है, या और भी कुछ ?

दलीपशाह—जी अभी भूतनाथ की कथा समाप्त नही हुई, अभी मुझे बहुत-कुछ कहना बाकी है। और बातो के सिवाय भूतनाथ से एक कसूर ऐसा हुआ है जिसका रज भूतनाथ को इससे भी ज्यादा होगा।

तेजसिंह—सो क्या ?

दलीपशाह—सो भी मैं अर्ज करता हूँ।

इतना कहकर दलीपशाह ने फिर कहना शुरू किया—

इस मामले को वर्षो बीत गये। मैं भूतनाथ की तरफ से कुछ दिनो तक बेफिक्र रहा, मगर जब यह मालूम हुआ कि भूतनाथ मेरी तरफ से निश्चिन्त नही है बल्कि मुझे इस दुनिया से उठा, बेफिक्र हुआ चाहता है तो मैं भी होशियार हो गया और दिन-रात अपने बचाव की फिक्र मे डूबा रहने लगा। (भूतनाथ की तरफ देखकर) भूतनाथ, अब मैं वह हाल बयान करूँगा जिसकी तरफ उस दिन मैंने इशारा किया था, जब तुम हमे गिरफ्तार करके एक विचित्र पहाडी स्थान[1] मे ले गये थे और जिसके विषय मे तुमने कहा था कि—"यद्यपि मैंने दलीपशाह की सूरत नही देखी है" इत्यादि। मगर क्या तुम इस समय भी' '

भूतनाथ—(बात काटकर) भला मैं कैसे कह सकता हूँ कि मैंने दलीपशाह की सूरत नही देखी है जिसके साथ ऐसे-ऐसे मामले हो चुके है, मगर उस दिन मैंने तुम्हे भी धोखा देने के लिए वे शब्द कहे थे, क्योकि मैंने तुम्हें पहचाना नही था। इस कहने से मेरा मतलब था कि अगर तुम दलीपशाह न होगे तो कुछ न कुछ जरूर बात बनाओगे। खैर, जो कुछ हुआ सो हुआ। मगर तुम वास्तव मे अब उस किस्से को बयान करने वाले हो ?

दलीपशाह—हाँ, मैं उसे जरूर बयान करूँगा।

भूतनाथ—मगर उसके सुनने से किसी को कुछ फायदा नही पहुँच सकता और न किसी तरह की नसीहत ही हो सकती है। वह तो महज मेरी नादानी और पागलपने की बात थी। जहाँ तक मैं समझता हूँ, उसे छोड देने से कोई हर्ज नही होगा।

दलीपशाह—नही, उसका बयान जरूरी जान पडता है। क्या तुम नही जानते या भूल गये कि उसी किस्से को सुनने के लिए कमला की माँ, अर्थात् तुम्हारी स्त्री यहाँ आई हुई है ?

भूतनाथ—ठीक है, मगर हाय ! मैं सच्चा बदनसीब हूँ जो इतना होने पर भी उन्ही बातो को' '

इन्द्रदेव—अच्छा-अच्छा, जाने दो भूतनाथ ! अगर तुम्हें इस बात का शक है कि दलीपशाह बातें बनाकर कहेगा या उसके कहने का ढग लोगो पर बुरा असर डालेगा तो

---

1 देखिये चन्द्रकान्ता सन्तति बीसवां भाग, बारहवां बयान।

मैं [illegible] तो वह हाल कहने मे भी रोक दूंगा और तुम्हारे ही हाथ की लिखी हुई तुम्हारी अपनी जीवनी पढ़ने के लिए किसी को दूंगा जो इस सन्दूकडी मे बन्द है।

इतना कहकर इन्द्रदेव ने वही सन्दूकडी निकाली जिसकी सूरत देखने ही से भूतनाथ का कलेजा कांपता था।

उस सन्दूकडी को देखते ही एक दफे तो भूतनाथ घबराया-सा होकर कांपा, मगर तुरन्त ही उसने अपने को सँभाल लिया और इन्द्रदेव की तरफ देख के बोला, "हाँ हाँ आप कृपा कर इस सन्दूकडी को मेरी तरफ बढ़ाइये, क्योंकि यह मेरी चीज है और मैं इसे लेने का हक रखता हूँ। यद्यपि कई ऐसे कारण हो गये हैं जिनसे आप कहेंगे कि यह सन्दूकडी तुम्हें नही दी जायगी, मगर फिर भी मैं इसी समय इस पर अपना कब्जा कर सकता हूँ, क्योंकि देवीसिंहजी मुझसे प्रतिज्ञा कर चुके है कि सन्दूकडी बन्द की बन्द तुम्हें दिला दूँगा, अब देवीसिंहजी की प्रतिज्ञा झूठी नही हो सकती।" इतना कहकर भूतनाथ ने देवीसिंह की तरफ देखा।

देवीसिंह—(महाराज से) निःसन्देह मैं ऐसी प्रतिज्ञा कर चुका हूँ।

महाराज—अगर ऐसा है तो तुम्हारी प्रतिज्ञा झूठी नही हो सकती। मैं आज्ञा देता हूँ कि तुम अपनी प्रतिज्ञा पूरी करो।

इतना सुनते ही देवीसिंह उठ खड़े हुए, उन्होंने इन्द्रदेव के सामने से वह सन्दूकडी उठा ली और यह कहते हुए भूतनाथ के हाथ मे दे दी, "लो मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी करता हूँ, तुम महाराज को सलाम करो जिन्होंने मेरी और तुम्हारी इज्जत रख ली।"

भूतनाथ—(महाराज को सलाम करके) महाराज की कृपा से अब मैं जी उठा।

तेजसिंह—भूतनाथ, तुम यह निश्चय जानो कि यह सन्दूकडी अभी तक खोली नहीं गयी है, अगर महाराज से पूछने की नौबत होती तो शायद खुल गयी होती।

भूतनाथ—(सन्दूकडी अच्छी तरह देख-भाल कर) बेशक यह अभी तक खुली नहीं है और सिवाय मेरे कोई दूसरा आदमी इसे बिना तोड़े खोल भी नही सकता। यह [illegible] कागजों से भरी हुई है, या यों कहिये कि यह मेरे भेदों का खजाना है, यद्यपि इसमें से कई भेद खुल चुके हैं, खुल रहे हैं और खुलते जायेंगे, तथापि इस समय [illegible] महाराज को दुखी किया हुआ नहीं रहूँगा कि मैं जी [illegible] अब मैं खुशी से अपनी जीवनी [illegible] और सुनाने के लिए तैयार हूँ और साथ ही [illegible] भी कर देता हूँ कि [illegible] जीवनी के सम्बन्ध में जो कुछ कहूँगा, सच कहूँगा।

[illegible] भूतनाथ ने वह सन्दूकडी अपने बटुए में [illegible] और पुनः [illegible] महाराज से बोला, "महाराज, मैं आज्ञा पा चुका हूँ कि अपना हाल साफ-साफ [illegible] घटनाओं में [illegible] हुआ है [illegible] किया है, [illegible] और [illegible] हो [illegible]

[illegible]-5-5

सामने पेश करूँगा और सम्भव है कि महाराज उसे सुन-सुनाकर यादगार के तौर पर अपने खजाने मे रखने की आज्ञा देंगे । इस एक महीने के बीच मे मुझे भी सब बातें याद करके लिख लेने का मौका मिलेगा और मैं अपनी निर्दोप स्त्री तथा उन लोगो से जिन्हे देखने की भी आशा नही थी, परन्तु जो बहुत-कुछ दु ख भोगकर भी दोनो कुमारो की बदौलत इस समय यहाँ आ गये है और जिन्हे मैं अपना दुश्मन समझता था, मगर अब महाराज की कृपा से जिन्होंने मेरे कसूरो को माफ कर दिया है, मिल-जुलकर कई बातो का पता भी लगा लूंगा, जिससे मेरा किस्सा सिलसिलेवार और कायदे से हो जायगा ।"

इतना कहकर भूतनाथ ने इन्द्रदेव, राजा गोपालसिंह, दोनो कुमारो और दलीपशाह वगैरह की तरफ देखा और तुरन्त ही मालूम कर लिया कि उसकी अर्जी कबूल कर ली जायगी ।

महाराज ने कहा, "कोई चिन्ता नही, तब तक हम लोग कई जरूरी कामो से छुट्टी पा लेंगे ।" राजा गोपालसिंह और इन्द्रदेव ने भी इस बात को पसन्द किया और इसके बाद इन्द्रदेव ने दलीपशाह की तरफ देखकर पूछा, "क्यो दलीपशाह, इसमें तुम लोगो को कोई उज्र तो नही है ?"

दलीपशाह—(हाथ जोडकर) कुछ भी नही, क्योकि अब महाराज की आज्ञानुसार हम लोगो को भूतनाथ से किसी तरह की दुश्मनी भी नही रही और न यही उम्मीद है कि भूतनाथ हमारे साथ किसी तरह की खुटाई करेगा, परन्तु मैं इतना जरूर कहूँगा कि हम लोगो का किस्सा भी महाराज के सुनने लायक है और हम लोग भूतनाथ के बाद अपना किस्सा भी सुनाना चाहते हैं ।

महाराज—नि सन्देह तुम लोगो का किस्सा भी सुनने योग्य होगा और हम लोग उसके सुनने की अभिलाषा रखते हैं । यदि सम्भव हुआ तो पहले तुम्ही लोगो का किस्सा सुनने मे आवेगा । मगर सुनो दलीपशाह, यद्यपि भूतनाथ से बडी-बडी बुराइयाँ हो चुकी हैं और भूतनाथ तुम लोगो का भी कसूरवार है, परन्तु इधर हम लोगो के साथ भूतनाथ ने जो कुछ किया है, उसके लिए हम लोग इसके अहसानमन्द हैं और इसे अपना हितू समझते हैं ।

इन्द्रदेव—बेशक-बेशक ।

गोपालसिंह—जरूर हम लोग इसके अहसान के बोझ से दबे हुए हैं ।

दलीपशाह—मैं भी ऐसा ही समझता हूँ । भूतनाथ ने इधर जो-जो अनूठे काम किए हैं, उनका हाल कुँअर साहब की जुबानी हम लोग सुन चुके हैं । इसी खयाल से तथा कुँअर साहब की आज्ञा से हम लोगो ने सच्चे दिल से भूतनाथ का अपराध क्षमा ही नही कर दिया बल्कि कुँअर साहब के सामने इस बात की प्रतिज्ञा भी कर चुके हैं कि भूतनाथ को दुश्मनी की निगाह से कभी न देखेंगे ।

महाराज—बेशक, ऐसा ही होना चाहिए, अत बहुत-सी बातो को सोचकर और इसकी कार गुजारी पर ध्यान देकर हमने इसके सब कसूर माफ करके इसे अपना ऐयार बना लिया है, आशा है कि तुम लोग भी इसे अपनायत की निगाह से देखोगे और पिछली बातो को बिल्कुल भूल जाओगे ।

दलीपशाह—महाराज अपनी आज्ञा के विरुद्ध चलते हुए हम लोगों को कदापि न देखेंगे, यह हमारी प्रतिज्ञा है।

महाराज—(अर्जुनसिंह तथा दलीपशाह के दूसरे साथी की तरफ देख कर) तुम लोगों की जुबान से भी हम ऐसा ही सुनना चाहते हैं।

दलीपशाह का साथी—मेरी भी यही प्रतिज्ञा है और ईश्वर से प्रार्थना है कि मेरे दिल में दुश्मनी के बदले दिन-दूनी रात-चौगुनी तरक्की करने वाली भूतनाथ की मुहब्बत पैदा करे।

महाराज—शाबाश! शाबाश!

अर्जुनसिंह—कुँअर साहब के सामने मैं जो कुछ प्रतिज्ञा कर चुका हूँ उसे महाराज सुन चुके होंगे। इस समय महाराज के सामने भी शपथ खाकर कहता हूँ कि स्वप्न में भी भूतनाथ के साथ दुश्मनी का ध्यान आने पर मैं अपने को दोषी समझूँगा।

इतना कहकर अर्जुनसिंह ने वह तस्वीर जो उसके हाथ में थी, फाड डाली और टुकडे-टुकडे करके भूतनाथ के आगे फेंक दी और पुनः महाराज की तरफ देखकर कहा, "यदि आज्ञा हो और बेअदबी न समझी जाय तो हम लोग इसी समय भूतनाथ से गले मिलकर अपने उदास दिल को प्रसन्न कर लें।"

महाराज—यह तो हम स्वयं कहने वाले थे।

इतना सुनते ही दोनों दलीपशाह, अर्जुनसिंह और भूतनाथ आपस में गले मिले और इसके बाद महाराज का इशारा पाकर एक साथ बैठ गये।

भूतनाथ—(दूसरे दलीपशाह और अर्जुनसिंह की तरफ देखकर) अब कृपा करके मेरे दिल का खटका मिटाओ और साफ-साफ बता दो कि तुम दोनों में से असल में अर्जुनसिंह कौन है? जब मैं दलीपशाह को बेहोश करके उस घाटी में ले गया था[1], तब तुम दोनों में से कौन महाशय वहाँ पहुँचकर दूसरे दलीपशाह बनने को तैयार हुए थे?

दूसरा दलीपशाह—(हँस कर) उस दिन मैं ही तुम्हारे पास पहुँचा था। इत्तिफाक से उस दिन मैं अर्जुनसिंह की सूरत बनाकर बाहर घूम रहा था और जब तुम दलीपशाह को गठरी बाँध के ले चले तब मैंने छिपकर पीछा किया था। आज केवल धोखा देने ही के लिए अर्जुनसिंह के बदले मैं अर्जुनसिंह बन कर दलीपशाह के साथ यहाँ आया हूँ।

इतना कहकर दूसरे दलीपशाह ने पास से गीला गमछा उठाया और अपने चेहरे का रंग [illegible] धोखा देने के लिए बनाया या लगाया था।

चेहरा साफ होते ही उसकी सूरत ने राजा गोपालसिंह को चौंका दिया और वह [illegible] "क्या आप भरतसिंहजी हैं, जिनके विषय में [illegible] और इसके जवाब में [illegible] इसके बाद [illegible] और अर्जुनसिंह को [illegible] महाराज [illegible]

[illegible]

[illegible]

बोले, "इनके मिलने की मुझे हद से ज्यादा खुशी हुई, बहुत देर से मैं चाहता था कि इनके विषय मे कुछ पूछूं।"

महाराज—मालूम होता है इन्हे भी दारोगा ही ने अपना शिकार बनाया था ?

भरतसिंह—जी हाँ, आज्ञा होने पर मैं अपना हाल बयान करूँगा।

इन्द्रजीतसिंह—(महाराज से) तिलिस्म के अन्दर मुझे पाँच कैदी मिले थे। जिनमे से तीन तो यही अर्जुनसिंह, भरतसिंह और दलीपशाह है। इसके अतिरिक्त दो और हैं जो यहाँ बुलाये नही गये। दारोगा, मायारानी तथा उसके पक्ष वालो के सम्बन्ध मे इन पाँचो ही का किस्सा सुनने योग्य है। जब कैदियो का मुकदमा होगा, तब आप देखियेगा कि इन लोगो की सूरत देखकर कैदियो की क्या हालत होती है।

महाराज—वे दोनो कहाँ हैं ?

इन्द्रजीतसिंह—इस समय यहाँ मौजूद नही हैं, छुट्टी लेकर अपने घर की अवस्था देखने गये है, दो-चार दिन मे आ जायेंगे।

भूतनाथ—(इन्द्रदेव से) यदि आज्ञा हो तो मैं भी कुछ पूछूं ?

इन्द्रदेव—आप जो कुछ पूछेंगे उसे मैं खूब जानता हूँ। मगर खैर, पूछिये।

भूतनाथ—कमला की माँ आप लोगो को कहाँ से और क्योंकर मिली ?

इन्द्रदेव—यह तो उसी की जुबानी सुनने मे ठीक होगा। जब वह अपना किस्सा बयान करेगी, कोई बात छिपी न रह जायगी।

भूतनाथ—और नानक की माँ तथा देवीसिंहजी की स्त्री के विषय मे कब मालूम होगा ?

इन्द्रदेव—वह भी उसी समय मालूम हो जायगा। मगर भूतनाथ, (मुस्कराकर) तुमने और देवीसिंह ने नकाबपोशो का पीछा करके व्यर्थ खटका और तरद्दुद खरीद लिया। यदि उनका पीछा न करते और पीछे से तुम दोनो को मालूम होता कि तुम्हारी स्त्रियाँ भी इस काम मे शरीक हुई थी, तो तुम दोनो को एक प्रकार की प्रसन्नता होती। प्रसन्नता तो अब भी होगी, मगर खटके और तरद्दुद से कुछ खून सुखा लेने के बाद !

इतना कहकर इन्द्रदेव हँस पडे और इसके बाद सभी के चेहरो पर मुस्कराहट दिखाई देने लगी।

तेजसिंह—(मुस्कराते हुए देवीसिंह से) अब तो आपको भी मालूम हो ही गया होगा कि आपका लडका तारासिंह कई विचित्र भेदो को आपसे क्यो छिपाता था ?

देवीसिंह—जी हाँ, सब कुछ मालूम हो गया। जब अपने को प्रकट करने के पहले ही दोनो कुमारो ने भैरोसिंह और तारासिंह को अपना साथी बना लिया, तो हम लोग जहाँ तक आश्चर्य मे डाले जाते, थोडा था !

देवीसिंह की बातें सुनकर पुन सभी ने मुस्करा दिया और अब दरबार का रग-ढग ही कुछ दूसरा हो गया अर्थात् तरद्दुद के बदले सभी के चेहरे पर हँसी और मुस्कराहट दिखाई देने लगी।

तेजसिंह—(भूतनाथ से) भूतनाथ, आज तुम्हारे लिए बडी खुशी का दिन है, क्योकि और बातो के अतिरिक्त तुम्हारी नेक और सती स्त्री भी तुम्हे मिल गई। जिसे

करता है, परन्तु मेरी राय यही है कि तक जहाँ जल्द हो यहाँ से लौट चलना चाहिए।

महाराज—हम भी यही सोचते है। इन लोगो की जीवनी और आश्चर्य-भरी कहानी तो वर्षो तक सुनते ही रहेगे। परन्तु इन्द्रजीत और आनन्दसिंह की शादी जहाँ तक हो सके जल्द कर देनी चाहिए, जिसमे और किसी तरह के विघ्न पड़ने का फिर डर न रहे।

जीतसिंह—जरूर ऐसा होना चाहिए, इसीलिए मैं चाहता हूँ कि यहाँ से जल्द चलिए। भरतसिंह वगैरह की कहानी वहाँ ही सुन लेंगे या शादी के वाद और लोगो को भी यहाँ ले आवेंगे, जिसमे वे लोग भी तिलिस्म और इस स्थान का आनन्द ले लें।

महाराज—अच्छी वात है, खैर अव यह वताओ कि कमलिनी और लाडिली के विषय मे भी तुमने कुछ सोचा?

जीतसिंह—उन दोनों के लिए जो कुछ आप विचार रहे हैं, वही मेरी भी राय है। उनकी भी शादी दोनो कुमारो के साथ ही कर देनी चाहिए।

महाराज—है न यही राय?

जीतसिंह—जी हाँ, मगर किशोरी और कामिनी की शादी के वाद। क्योंकि किशोरी एक राजा की लडकी है, इसलिए उसी की औलाद को गद्दी का हकदार होना चाहिए। यदि कमलिनी के साथ पहले शादी हो जायगी तो उसी का लडका गद्दी का मालिक समझा जायगा, इसी से मैं चाहता हूँ कि पटरानी किशोरी ही वनाई जाय।

महाराज—यह वात तो ठीक है, अत ऐसा ही होगा और साथ ही इसके कमला की शादी भैरो के साथ और इन्दिरा की तारा के साथ कर दी जायगी।

जीतसिंह—जो मर्जी।

महाराज—अच्छा तो अव यही निश्चय रहा कि दलीपशाह और भरतसिंह की वीती यहाँ से चलने के वाद घर पर ही सुननी चाहिए।

जीतसिंह—जी हाँ, सच तो यो है कि ऐसा करना ही पडेगा, क्योकि इन लोगो की कहानी दारोगा और जयपाल इत्यादि कैदियो से घना सम्वन्ध रखती है, वल्कि यो कहना चाहिए कि इन्ही लोगो के इजहार पर उन लोगो के मुकदमे का दारोमदार (हेस नेस) है और यही लोग उन कैदियो को लाजवाव करेंगे।

महाराज—नि:सन्देह ऐसा ही है, इसके अतिरिक्त उन कैदियो ने हम लोगो तथा हमारे सहायको को वडा दु:ख दिया है और दोनो कुमारो की शादी मे भी वडे-वडे विघ्न डाले हैं। अतएव उन कम्वख्तो को कुमारो की शादी का जलसा भी दिखा देना चाहिए, जिसमे ये लोग भी अपनी आँखो से देख ले कि जिन वातो को वे विगाडना चाहते थे, वे आज कैसी खूवी और खुशी के साथ हो रही हैं, इसके वाद उन लोगों को सजा दी जानी चाहिए। मगर अफसोस तो यह है कि मायारानी और माधवी जमानिया मे ही मार डाली गईं, नही तो वे दोनो भी देख लेती कि

जीतसिंह—खैर, उनकी किस्मत मे यही वदा था।

महाराज—अच्छा, तो एक वात का और खयाल करना चाहिए।

जीतसिंह—आज्ञा?

महाराजा—भूतनाथ वगैरह को मौका देना चाहिए कि वे अपने सम्बन्धियों से बखूबी मिल-जुल कर अपने दिल का खटका निकाल लें, क्योंकि हम लोग तो उनका हाल वहाँ चल कर ही सुनेंगे।

जीतसिंह—बहुत खूब।

इतना कहकर जीतसिंह उठ खड़े हुए और कमरे से बाहर चले गये।

6

इन्द्रदेव के इस स्वर्ग-तुल्य स्थान में बंगले से कुछ दूर हट कर बगीचे के दक्खिन तरफ एक घना जामुन का पेड़ है, जिसे सुन्दर लताओं ने घेर कर देखने योग्य बना रखा है और वहाँ एक कुंज की-सी छटा दिखाई पड़ती है। उसी के नीचे साफ पानी का एक चश्मा भी बह रहा है। अपनी सुरीली बोली से लोगों के दिल लुभा लेने वाली चिड़ियाएँ सन्ध्या का समय निकट जान अपने घोंसलों के चारों तरफ फुदक-फुदक कर अपने चुलबुले बच्चों को चैतन्य करती हुई कह रही हैं, "देखो, मैं बहुत दूर से तुम लोगों के लिए दाना-पानी अपने पेट में भर लाई हूँ, जिससे तुम्हारी सन्तुष्टि हो जायगी।"

यह रमणीक स्थान ऐसा है कि यहाँ दो-चार आदमी छिप कर इस तरह बैठ सकते हैं कि वे चारों तरफ के आदमियों को बखूबी देख लें, पर उन्हें कोई भी न देखे। इस स्थान पर हम इस समय भूतनाथ और उसकी पहली स्त्री, (कमला की माँ) को पत्थर की चट्टानों पर बैठे बातें करते हुए देख रहे हैं। ये दोनों मुद्दत के बिछुड़े हुए हैं, और [illegible] दिन से नहीं तो कमला की माँ के दिल में जरूर शिकायतों का खजाना भरा हुआ है जिसे वह इस समय बेकदर उगलने के लिए तैयार है। प्यारे पाठक, आइये हम आप मिलकर जरा इन दोनों की बातें तो सुन लें।

भूतनाथ—प्यारी[1], आज तुमसे मिलकर मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ।

शान्ता—[illegible] जो चीज किसी कारणवश खो जाती है, उसे यकायक पाने से प्रसन्नता होती है, मगर जो चीज जान-बूझ कर फेंक दी जाती है, उसके पाने की खुशी क्या होगी?

भूतनाथ—किसी [illegible] से एक पत्थर का टुकड़ा मिल जाय और वह उसे [illegible] मालूम हो कि [illegible] होगा? [illegible]

[illegible]

1 [illegible] कमला की माँ का नाम था।

फलाँ जगह छोडा या फेंका है वहाँ जाने से जरूर मिल जायेगा, उसकी तरफ दौड जाय, तो बेशक समझा जायगा कि उसे उसके फेंक देने का रज हुआ था और उसके मिल जाने से प्रसन्नता होगी, लेकिन यदि ऐसा नही है तो नही।

भूतनाथ—ठीक है, मगर वह आदमी उस जगह, जहाँ उसने हीरे को पत्थर समझकर फेंका, था पुन उसे पाने की आशा मे तभी जायगा जब अपना जाना सार्थक समझेगा। परन्तु जब उसे यह निश्चय हो जायगा कि वहाँ जाने मे उस हीरे के साथ तू भी बर्बाद हो जायगा, अर्थात् वह हीरा भी काम का न रहेगा और तेरी भी जान जाती रहेगी, तब वह उसकी खोज मे क्यों जायगा ?

शान्ता—ऐसी अवस्था मे वह अपने को इस योग्य बनावेगा ही नही कि वह उस हीरे की खोज मे जाने लायक न रहे, यदि यह बात उसके हाथ मे होगी और वह उस हीरे को वास्तव मे हीरा समझता होगा।

भूतनाथ—बेशक, मगर शिकायत की जगह तो ऐसी अवस्था मे हो सकती थी जब वह अपने बिगडे हुए कँटीले रास्ते को, जिसके सबब से वह उस हीरे तक नही पहुँच सकता था, पुन सुधारने और साफ करने के लिए परले सिरे का उद्योग करता हुआ दिखाई न देता।

शान्ता—ठीक है, लेकिन जब वह हीरा यह देख रहा है कि उसका अधिकारी या मालिक बिगडी हुई अवस्था मे भी एक मानिक के टुकडे को कलेजे से लगाए हुए घूम रहा है और यदि वह चाहता तो उस हीरे को भी उसी तरह रख सकता था, मगर अफसोस, उस हीरे की तरफ जो वास्तव मे पत्थर ही समझा गया है, कोई भी ध्यान नही देता जो बे-हाथ-पैर का होकर भी उसी मालिक की खोज मे जगह-जगह की धूल छानता फिर रहा है जिसने जान-बूझकर उसे पैर मे गडने वाले ककड की तरह अपने आगे से उठाकर फेंक दिया है और जानता है कि उस पत्थर के साथ, जिसे वह व्यर्थ ही मे हीरा कह रहा है, वास्तव मे छोटी-छोटी हीरे की कनियाँ भी चिपकी हुई है जो छोटी होने के कारण सहज ही मिट्टी मे मिल जा सकती हैं, तब क्या शिकायत की जगह नही है !

भूतनाथ—परन्तु अदृष्ट भी कोई वस्तु है, प्रारब्ध भी कुछ कहा जाता है और होनहार भी किसी चीज का नाम है !

शान्ता—यह दूसरी बात है, इन सभी का नाम लेना वास्तव मे निरुत्तर (लाजवाब) होना और चलती बहस को जान-बूझकर बद कर देना ही नही है बल्कि उद्योग ऐसे अनमोल पदार्थ की तरफ से मुँह फेर लेना भी है। अत जाने दीजिए मेरी यह इच्छा भी नही है कि आपको परास्त करने की अभिलाषा से मैं विवाद करती ही जाऊँ, यह तो बात-ही-बात मे कुछ कहने का मौका मिल गया और छाती पर पत्थर रखकर जी का उबाल निकाल लिया, नही तो जरूरत ही क्या थी।

भूतनाथ—मैं कसूरवार हूँ और बेशक कसूरवार हूँ, मगर यह उम्मीद भी तो न थी कि ईश्वर की कृपा से तुम्हें इस दुनिया मे इस तरह जीती देखूँगा।

शान्ता—अगर यही आशा या अभिलाषा होती तो अपने परलोकगामी होने की

खबर सुन अभागी के कानों तक पहुँचाने की कोशिश क्यों करते और ··

भूतनाथ—बस-बस, अब मुझ पर दया करो और इस ढंग की बातें छोड़ दो क्योंकि आज बड़े भाग्य से मेरे लिए यह खुशी का दिन नसीब हुआ है। इसे जली-कटी बातें सुनाकर तुम कड़वा न करो और यह सुनाओ कि तुम इतने दिनों तक कहाँ छिपी हुई थी और अपनी लड़की कमला को किस तरह धोखा देकर चली गई कि आज तक वह तुमको मरी हुई ही समझती है?

इस समय शान्ता का खूबसूरत चेहरा नकाब से ढका हुआ नहीं है। यद्यपि वह जमाने के हाथों सताई हुई तथा दुबली-पतली और उदास है और उसका तमाम बदन पीला पड़ गया है मगर फिर भी आज की यह खुशी उसके सुन्दर बादामी चेहरे पर रौनक पैदा कर रही है और इस बात की इजाजत नहीं देती कि कोई उसे ज्यादा उम्रवाली कह कर खूबसूरतों की पंक्ति में बैठने से रोके। हजार गई-गुजरी होने पर भी वह रामदेई (भूतनाथ की दूसरी स्त्री) से बहुत अच्छी मालूम पड़ती है और इस बात को भूतनाथ भी बड़े गौर से देख रहा है। भूतनाथ की आखिरी बात सुनकर शान्ता ने अपनी डबडबाई हुई बड़ी-बड़ी आँखों को आँचल से साफ किया और एक लम्बी साँस ले कर कहा—

शान्ता—मैं रणधीरसिंह जी के यहाँ से कभी न भागती अगर अपना मुँह किसी को दिखाने लायक समझती। मगर अफसोस, आपके भाई ने इस बात को खूब अच्छी तरह मशहूर किया कि आपके दुश्मन (अर्थात् आप) इस दुनिया से उठ गये। इसके सबूत में उन्होंने बहुत सी बातें पेश कीं, मगर मुझे विश्वास न हुआ, तथापि इस गम से मैं बीमार हो गई और दिन-दिन मेरी बीमारी बढ़ती ही गई। उसी जमाने में मेरी मौसेरी बहिन अर्थात् दलीपशाह की स्त्री मुझे देखने के लिए मेरे घर आई। मैंने अपने दिल का हाल और बीमारी का सबब उससे बयान किया और यह भी कहा कि जिस तरह मेरे पति ने सारे जमाने में अपने को मरा मशहूर किया, उसी तरह मुझे तुम कहीं छिपा कर मरा हुआ मशहूर कर दो। अगर ऐसा हो जायगा तो मैं अपने पति को ढूंढ निकालने का उद्योग करूंगी। उसने मेरी बात पसन्द कर ली और लोगों को यह कह कर कि मेरे यहाँ की आबोहवा अच्छी है, यहाँ शान्ता को बहुत जल्द ही आराम हो जायगा, मुझे अपने घर ले जाने का बन्दोबस्त किया और रणधीरसिंहजी से इजाजत भी ले ली। मैं [illegible]

[illegible]

[illegible]

लगी। भूतनाथ की बुरी अवस्था हो रही थी और इससे ज्यादे वह उस भयानक घटना का हाल नहीं सुनना चाहता था। वह यह कहता हुआ कि 'बस माफ करो, अब इसका जिक्र न करो' अपनी स्त्री शान्ता के पैरो पर गिरा ही चाहता था कि उसने पैर खींचकर भूतनाथ का सिर थाम लिया और कहा—"हाँ-हाँ, यह क्या करते हो ? क्यो मेरे सिर पर पाप चढाते हो ? मैं खूब जानती हूँ कि आपने उसे बिलकुल नही पहचाना मगर इतना जरूर समझते थे कि वह दलीपशाह का लडका है, अत फिर भी आपको ऐसा नही करना चाहिए था, खैर अब मैं इस जिक्र को छोड देती हूँ।"

इतना कहकर शान्ता ने अपने आँसू पोंछे और फिर इस तरह बयान करना शुरू किया—

"शोक और दु ख से मैं पुन बीमार पड गई, मगर आशा-लता ने धीरे-धीरे कुछ दिन मे अपनी तरह मुझे भी (आराम) कर दिया। यह आशा केवल इसी बात की थी कि एक दफे आपसे जरूर मिलूँगी। मुश्किल तो यह थी कि उस घटना ने दलीपशाह को भी आपका दुश्मन बना दिया था, केवल उस घटना ने ही नही, इसके अतिरिक्त भी दलीपशाह को बर्बाद करने मे आपने कुछ उठा न रक्खा था, यहाँ तक कि आखिर वह दारोगा के हाथ फँस ही गये।"

भूतनाथ—(बेचैनी के साथ लम्बी साँस लेकर) ओफ ! मैं कह चुका हूँ कि इन बातो को मत छेडो, केवल अपना हाल बयान करो, मगर तुम नही मानती !

शान्ता—नहीं-नही, मैं तो अपना ही हाल बयान कर रही हूँ, खैर, मुख्तसिर ही मे कहती हूँ।

उस घटना के बाद ही मेरी इच्छानुसार दलीपशाह ने मेरा और बच्चे का मर जाना मशहूर किया जिसे सुनकर हरनामसिंह और कमला भी मेरी तरफ से निश्चिन्त हो गये। जब खुद दलीपशाह भी दारोगा के हाथ मे फँस गये, तब मैं बहुत ही परेशान हुई और सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिए। उस समय दलीपशाह के घर मे उनकी स्त्री, एक छोटा सा बच्चा और मैं, केवल ये तीन ही आदमी रह गये थे। दलीपशाह की स्त्री को मैंने धीरज धराया और कहा कि अभी तू अपनी जान मत बर्बाद कर, मैं बराबर तेरा साथ दूँगी और दलीपशाह को खोज निकालने का उद्योग करूँगी मगर अब हमलोगो को यह घर एकदम छोड देना चाहिए और ऐसी जगह छिपकर रहना चाहिए जहाँ दुश्मनो को हम लोगो का पता न लगे। आखिर ऐसा ही हुआ, अर्थात् हम लोगो की जो कुछ जमा-पूँजी थी उसे लेकर हमने उस घर को एक दम छोड दिया और काशीजी मे जाकर एक अँधेरी गली मे पुराने और गदे मकान मे डेरा डाला, मगर इस बात की टोह लेते रहे कि दलीपशाह कहाँ हैं अथवा छूटने के बाद अपने घर की तरफ जा कर हम लोगो को ढूँढते हैं या नहीं। इस फिक्र मे मैं कई दफे सूरत बदल कर बाहर निकली और इधर-उधर घूमती रही। इत्तिफाक से दिल मे यह बात पैदा हुई कि किसी तरह अपने लड़के हरनामसिंह से छिप कर मिलना और उसे अपना साथी बना लेना चाहिए। ईश्वर ने मेरी यह मुराद पूरी की। जब माधवी कुँअर इन्द्रजीतसिंह को फँसा ले गई और उसके बाद उसने किशोरी पर भी कब्जा कर लिया, तब कमला और हरनामसिंह दोनो आदमी

किशोरी की खोज में निकले और वे एक-दूसरे से जुदा हो गये। किशोरी की खोज में हरनामसिंह काशी की गलियों में घूम रहा था जब उस पर मेरी निगाह पड़ी और मैंने इशारे से अलग बुला कर अपना परिचय दिया। उस को मुझसे मिलकर जितनी खुशी हुई उसे मैं बयान नहीं कर सकती। मैं उसे अपने घर में ले गई और सब हाल उससे कह अपने दिल का इरादा जाहिर किया जिसे उसने खुशी से मंजूर कर लिया। उस समय मैं चाहती तो कमला को भी अपने पास बुला लेती, मगर नहीं, उसे किशोरी की मदद के लिए छोड़ दिया क्योंकि किशोरी के नमक को मैं किसी तरह भूल नहीं सकती थी, अतः मैंने केवल हरनामसिंह को अपने पास रख लिया और खुद चुपचाप अपने घर में बैठी रहकर आपका और दलीपशाह का पता लगाने का काम लड़के को सुपुर्द किया। बहुत दिनों तक बेचारा लड़का चारों तरफ मारा फिरा और तरह-तरह की खबरें ला कर मुझे सुनाता रहा। जब आप प्रकट होकर कमलिनी के साथी बन गए और उसके काम के लिए चारों तरफ घूमने लगे तब हरनामसिंह ने भी आपको देखा और पहचान कर मुझे इत्तिला दी। थोड़े दिन बाद यह भी उसी की जुबानी मालूम हुआ कि अब आप नेकनाम होकर दुनिया में अपने को प्रकट किया चाहते हैं। उस समय मैं बहुत प्रसन्न हुई और मैंने हरनाम को राय दी कि तू किसी तरह राजा वीरेन्द्रसिंह के किसी ऐयार की शागिर्दी कर ले। आखिर वह तारासिंह से मिला और उसके साथ रह कर थोड़े ही दिनों में उसका प्यारा शागिर्द बल्कि दोस्त बन गया तब उसने अपना हाल तारासिंह को कह सुनाया और तारासिंह ने भी उसके साथ बहुत अच्छा प्यार का बर्ताव करके उसकी इच्छानुसार उसके भेदों को छिपाया। तब से हरनामसिंह सूरत बदले हुए तारासिंह का काम करता रहा और मुझे भी आपकी पूरी-पूरी खबर मिलती रही। आपको शायद इसकी खबर भी न हो कि तारासिंह की माँ चम्पा से और मुझसे बहिन का रिश्ता है, वह मेरे मामा की लड़की है, अतः चम्पा ने अपने लड़के की जुबानी हरनामसिंह का हाल सुना और जब यह मालूम हुआ कि यह रिश्ते में भतीजा होता है, तब उसने भी उस पर दया प्रकट की और [illegible] बराबर अपने लड़के की तरह मानती रही।

कमलिनी ने तिलिस्म का [illegible] और कैदियों को साथ लिए हुए जब दोनों कुमार उस ओर वाले तिलिस्मी बंगले में पहुँचे तो उन्होंने भैरोसिंह और तारासिंह को अपने पास बुला लिया और तिलिस्म का पूरा हाल उनसे कह के उन दोनों को अपने साथ रक्खा। [illegible] तारासिंह [illegible] मालूम हुआ कि उनके खान-दान [illegible] है, साथ ही [illegible] भी दलीपशाह का [illegible] हुआ। [illegible] कुमारों के [illegible] हरनामसिंह को [illegible]

[illegible]

शान्ता—जी उसके पहले ही से वे दोनो यहाँ आते जाते रहे, उस दिन तो प्रकट रूप से यहाँ लाए गये थे। क्या इतना हो जाने पर भी आपको अन्दाज से मालूम न हुआ?

भूतनाथ—ठीक है, इसका शक तो मुझे और देवीसिंह को भी होता रहा।

शान्ता का किस्सा भूतनाथ ने वडे गौर के साथ ध्यान देकर सुना और तब देर तक आरजू-मिन्नत के साथ शान्ता से माफी माँगता रहा और इसके बाद पुन दोनो मे बातचीत होने लगी।

शान्ता—अब तो आपको मालूम हो गया कि चम्पा यहाँ क्यो कर और किस लिए आई?

भूतनाथ—हाँ, यह भेद तो खुल गया मगर इसका पता न लगा कि नानक और उसकी माँ का यहाँ आना कैसे हुआ?

शान्ता—सो मैं न कहूँगी, यह उसी से पूछ लेना।

भूतनाथ—(ताज्जुब से) सो क्यो?

शान्ता—मैं उसके बारे मे कुछ कहना ही नही चाहती।

भूतनाथ—आखिर इसका कोई सबब भी है?

शान्ता—सबब यही है कि उसकी यहाँ कोई इज्जत नही है बल्कि वह बेकदरी की निगाह से देखी जाती है।

भूतनाथ—वह है भी इसी योग्य! पहले तो मैं उसे प्यार करता था, मगर जब यह सुना कि उसी की बदौलत मैं जैपाल (नकली बलभद्र) का शिकार बन गया और एक भारी आफत मे फँस गया, तब से मेरी तबीयत उससे खट्टी हो गई।

शान्ता—सो क्यो?

भूतनाथ—इसीलिए कि वह बेगम की गुप्त सहेली नन्ही से गहरी मुहब्बत रखती है।[1] और इसी सबब से वह कागज का मुट्ठा जो मैंने अपने फायदे के लिए तैयार किया था, गायब हो के जैपाल के हाथ लग गया और उसमे मुझे नुकसान पहुँचा। इस बात का सबूत भी मैंने अपनी आँखो से देख लिया।

शान्ता—सो ठीक है, मैं भी दलीपशाह से यह बात सुन चुकी हूँ।

भूतनाथ—इसी से अब मैं उसे अपनी स्त्री नही बल्कि दुश्मन समझता हूँ। केवल नन्ही से ही नही बल्कि कम्बख्त गौहर से भी वह दोस्ती रखती थी और वह दोस्ती पाक न थी। (लम्बी साँस लेकर) अफसोस! इसी से उस खोटी का लड़का नानक भी खोटा ही निकला।

शान्ता—(मुस्कुराकर) तब आप उसके लिए इतना परेशान क्यो थे? क्योकि यह बात सुनने बाद ही तो आपने उसे नकाबपोशो के स्थान पर देखा था।

भूतनाथ—वह परेशानी मेरी उसकी मुहब्बत के सबब मे न थी बल्कि इस खयाल से थी कि कही वह मुझ पर कोई नई आफत लाने के लिए तो नकाबपोशो से नही आ मिली।

---

1 चन्द्रकान्ता सन्तति, उन्नीसवाँ भाग, बारहवाँ बयान, देखिए नकाबपोश की बातचीत।

शान्ता—ठीक भी है, यह खयाल हो सकता था।

भूतनाथ—फिर इसी बीच मे जब उसने मुझे जगल मे गाना सुना के धोखा दिया और गिरफ्तार करके अपने स्थान पर ले गई[1], जिसका हाल शायद तुम्हे मालूम होगा, तब मेरा रंज और भी बढ गया।

शान्ता—यह हाल मुझे मालूम है मगर यह कार्रवाई उसकी न थी, बल्कि इन्द्रदेव की थी। उन्होने ही आपके साथ यह ऐयारी की थी और उस दिन जगल मे घोड़े पर सवार जो औरत आपको मिली थी और जिसे आपने अपनी स्त्री समझा था, वह भी इन्द्रदेव का एक ऐयार ही था। यह बात मैं उन्ही (इन्द्रदेव) की जुबानी सुन चुकी हूँ, शायद आपसे भी वे कहे। हाँ, उस दिन बँगले मे जिस औरत को आपने देखा था, वह बेशक नानक की माँ थी। वह तो खुद कैदियो की तरह यहाँ रक्खी गई है, मैदान की हवा नसीब हो जाती है। दोनो कुमार नही चाहते थे कि प्रकट होने के पहले ही कोई उन लोगो का पता लगा ले इसीलिए ये सब खेल खेले गये। (कुछ सोचकर) आखिर आपने धीरे-धीरे नानक की माँ का हाल पूछ ही लिया, मैं उसके बारे मे कुछ भी नही कहना चाहती थी, अब अब इससे आगे और कुछ भी न कहूँगी, आप उसके बारे मे मुझसे कुछ न पूछे।

भूतनाथ—नहीं-नहीं, जब इतना बता चुकी तो तो कुछ और भी बताओ क्योंकि मैं उससे सिवाय कुछ भी नहीं पूछा चाहता, बल्कि अब तो उसका मुँह देखना भी मुझे पसन्द नही है। अच्छा, यह तो बताओ कि वह कम्बख्त यहाँ क्यों लाई गई?

शान्ता—लाई नही गई, बल्कि उसी नन्दी के यहाँ गिरफ्तार की गई, उस समय नानक भी उसके साथ था।

भूतनाथ—(आश्चर्य और क्रोध से) फिर भी उसी नन्दी के यहाँ गई थी?

शान्ता—जी हाँ।

भूतनाथ—(लम्बी साँस लेकर) लोग सच कहते हैं कि ऐयाशी का नतीजा बहुत बुरा निकलता है।

शान्ता—अब आप उसके बारे मे मुझसे कुछ न पूछिए, इन्द्रदेवजी आपको सब-कुछ कह देंगे।

भूतनाथ—हाँ, [illegible] उसके बारे मे कुछ न पूछूँगा, जो कुछ पूछूँगा [illegible] आज से [illegible]

[illegible]

[1] [illegible]

दारोगा की शैतानियो का सबूत उससे मिलकर ही बटोर लें, दारोगा के मतलब ही का जवाब दिया था जिससे खुश होकर उसने कई चिट्ठियो मे दलीपशाह को तरह-तरह के सब्जबाग दिखलाए, मगर जब दारोगा की कई चिट्ठियाँ दलीपशाह ने बटोर ली तब साफ जवाब दे दिया। उस समय दारोगा बहुत घबराया और उसने सोचा कि कही ऐसा न हो कि दलीपशाह मुझसे दुश्मनी करके मेरा यह भेद खोल दे, अत किसी तरह उसे गिरफ्तार कर लेना चाहिए। उस समय कम्बख्त दारोगा आपसे मिला और उसने दलीपशाह की पहली चिट्ठियाँ आपको दिखा कर खुद आप ही को दलीपशाह का दुश्मन बना दिया, बल्कि आप ही के जरिये से दलीपशाह को गिरफ्तार भी करा लिया।

भूतनाथ—ठीक है, इस विषय मे मैंने बहुत बडा धोखा खाया।

शान्ता—मगर दलीपशाह को गिरफ्तार कर लेने पर भी वे चिट्ठियाँ दारोगा के हाथ न लगी क्योंकि वे दलीपशाह की स्त्री के कब्जे मे थी। हम लोग उन्हे अपने साथ लाये है जिसमे दारोगा के मुकदमे मे पेश करें।

भूतनाथ—अब मेरे दिल का पूरा खुटका निकल गया और मुझे निश्चय हो गया कि हरनाम की कोई कार्रवाई मेरे खिलाफ न होगी।

शान्ता—भला वह कोई काम ऐसा क्यो करेगा जिससे आपको तकलीफ हो? ऐसा खयाल भी आपको न रखना चाहिए।

इन दोनो मे इस तरह की बातें हो रही थी कि किसी के आने की आहट मालूम हुई। भूतनाथ ने जब घूमकर देखा तो नानक पर निगाह पडी। जब वह पास आया तब भूतनाथ ने उससे पूछा, "क्या चाहते हो?"

नानक—मेरी माँ आपसे मिलना चाहती है।

भूतनाथ—तो यहाँ पर क्यो न चली आई? यहाँ कोई गैर तो था नही।

नानक—सो तो वही जानें।

भूतनाथ—अच्छा, जाओ, उसे इसी जगह मेरे पास भेज दो।

नानक—बहुत अच्छा।

इतना कहकर नानक चला गया और इसके बाद शान्ता ने भूतनाथ से कहा, "शायद उसे मेरे सामने आपसे बातचीत करना मजूर न हो, शर्म आती हो या किसी तरह का और कुछ खयाल हो, अत आज्ञा दीजिए तो मैं चली जाऊँ, फिर ··"

भूतनाथ—नही-नही, उसे जो कुछ कहना होगा तुम्हारे सामने ही कहेगी, तुम चुपचाप बैठी रहो।

शान्ता—सम्भव है कि वह मेरे रहते यहाँ न आवे, या उसे इस बात का खयाल हो कि तुम मेरे सामने उसकी बेइज्जती करोगे।

भूतनाथ—हो सकता है, मगर·· (कुछ सोच के) अच्छा, तुम जाओ।

इतना सुनकर शान्ता वहाँ से उठी और बँगले की तरफ रवाना हुई। इस समय सूर्य अस्त हो चुका था और चारो तरफ से अँधेरी झुकी आती थी।

7

इन्द्रदेव का यह स्थान बहुत बडा था। इस समय यहाँ जितने आदमी आए हुए हैं उनमे से किसी को किसी तरह की भी तकलीफ नही हो सकती थी और इसके लिए प्रबन्ध भी बहुत अच्छा कर रक्खा गया था। औरतो के लिए एक खास कमरा मुकर्रर किया गया था मगर रामदेई (नानक की माँ) की निगरानी की जाती थी और इस बात का भी बन्दोबस्त कर रक्खा गया था कि कोई किसी के साथ दुश्मनी का बर्ताव न कर सके। महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह और दोनो कुमारो के कमरे के आगे पहरे का पूरा-पूरा इन्तजाम था और हमारे ऐयार लोग भी बराबर चौकन्ने रहा करते थे।

यद्यपि भूतनाथ एकान्त मे बैठा हुआ अपनी स्त्री से बातें कर रहा था, मगर यह बात इन्द्रदेव और देवीसिंह से छिपी हुई न थी जो इस समय बगीचे मे टहलते हुए बातें कर रहे थे। इन दोनो के देखते ही देखते नानक भूतनाथ की तरफ गया और लौट आया इसके बाद भूतनाथ की स्त्री अपने डेरे पर चली गई और फिर रामदेई, अर्थात् नानक की माँ, भूतनाथ की तरफ जाती हुई दिखाई पडी। उस समय इन्द्रदेव ने देवीसिंह से कहा, "सिंहजी, देखिये भूतनाथ अपनी पहली स्त्री से बातचीत कर चुका है, अब उसने नानक की माँ को अपने पास बुलाया है। शान्ता की जुबानी उसकी खुटाई का सारा हाल तो उसे जरूर मालूम हो ही गया होगा, इसलिए ताज्जुब नही कि वह गुस्से मे आकर रामदेई के हाथ-पैर तोड डाले।"

देवीसिंह—ऐसा हो तो कोई ताज्जुब की बात नही है, मगर उस औरत ने भी तो सजा पाने के ही लायक काम किया है।

इन्द्रदेव—ठीक है, मगर इस समय उसे बचाना चाहिए।

देवीसिंह—तो जाइए वहाँ छिप कर तमाशा देखिए और मौका पडने पर उसकी सहायता कीजिए। (मुस्कुराकर) आप ही आग लगाते हैं फिर आप ही बुझाने दौडते हैं।

इन्द्रदेव—(हँस कर) आप तो दिल्लगी करते हैं।

देवीसिंह—दिल्लगी काहे की? क्या आपने उसे गिरफ्तार नही कराया है और अगर गिरफ्तार कराया है तो क्या इनाम देने के लिए?

इन्द्रदेव—(मुस्कुराते हुए) तो आपकी राय है कि इसी समय उसकी मरम्मत की जाय?

देवीसिंह—वाजिब तो ऐसा ही है! जी मे आवे तो तमाशा देखा चाहिए। चलिए मै भी आपके साथ चलूँ।

इन्द्रदेव—नहीं-नहीं, ऐसा न होना चाहिए। भूतनाथ आखिर ऐयार है और अब [illegible] है। [illegible] और उसे [illegible], [illegible]।

देवीसिंह—(हँस कर) [illegible] कि मैं भी भूतनाथ के [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible]

मुझे सुनाई हैं इसलिए आपका अहसान भी तो मानना होगा।

इतना कहते हुए देवीसिंह पेडो की आड लेते हुए भूतनाथ की तरफ रवाना हुए और जब ऐसी जगह पहुँचे जहाँ से उन दोनो की बातें बखूबी सुन सकते थे, तब एक चट्टान पर बैठ गये और सुनने लगे कि वे दोनो क्या बातें करते हैं।

भूतनाथ— खैर, अच्छा ही हुआ जो तुम यहाँ तक आ गईं, मुझसे मुलाकात भी हो गई और मैं 'लामाघाटी' तक जाने से बच गया। मगर अब यह तो बताओ कि अपनी हेली 'नन्ही' को यहाँ तक क्यो न लेती आईं, मैं भी जरा उससे मिल के अपना कलेजा ठण्डा कर लेता?

रामदेई—नन्ही बेचारी पर क्यो आक्षेप करते हो, उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? और वह यहाँ आती ही काहे को? क्या तुम्हारी लौडी थी! व्यर्थ ही एक आदमी को बदनाम और दिक करने के लिए टूटे पडते हैं!

भूतनाथ—(उभडते हुए गुस्से को दबा कर) छी-छी, वह बेचारी हमारी लौडी क्यो होने लगी, लौंडी तो तुम उसकी थी जो झख मारने के लिए उसके घर गई थी।

रामदेई—(आँचल से आँसू पोछती हुई) अगर मैं उसके यहाँ गई तो क्या पाप किया? मैं पहले ही नानक से कहती थी कि जाकर पूछ आओ तब मैं नन्ही के यहाँ जाऊँ नही तो कही व्यर्थ ही बात का बतगड न बन जाय। मगर लडके ने न माना और आखिर वही नतीजा निकला। बदमाशो ने वहाँ पहुँच कर उसे भी बेइज्जत किया और मुझे भी बेइज्जत करके यहाँ तक घसीट लाये। उसके सिर झूठे ही कलक थोप दिया कि वह बेगम की सहेली है।

इतना कहकर रामदेई नखरे के साथ रोने लगी।

भूतनाथ—तुमने पहले भी कभी उसका जिक्र मुझसे किया था कि वह तुम्हारी नातेदार है, या मुझसे पूछ कर कभी उसके यहाँ गई थी?

रामदेई—एक दफा गई सो तो यह गति हुई, यदि और जाती तो न मालूम क्या होता!

भूतनाथ—जो लोग तुझे यहाँ ले आये हैं वे बदमाश थे?

रामदेई—बदमाश तो कहे ही जाएँगे! जो व्यर्थ दूसरो को दुःख दें वेही बदमाश होते हैं और क्या बदमाशो के सिर पर सीग होते हैं! तुम्हारी अक्ल पर तो पत्थर पड गया है कि जो लोग तुम्हारी बेइज्जती किये ही जाते हैं, उन्ही के लिए तुम जान दे रहे हो। न मालूम तुम्हे ऐसी क्या गरज पडी हुई है?

भूतनाथ—ठीक है, यही राय लेने के लिए तो मैंने तुम्हे यहाँ एकान्त मे बुलाया है। अगर तुम्हारी राय होगी तो मैं देखते-देखते इन लोगो से बदला ले लूँगा, क्या मैं कमजोर या दब्बू हूँ!

रामदेई—जरूर बदला लेना चाहिए, अगर तुम ऐसा नही करोगे तो मैं समझूँगी कि तुमसे बढकर कमीना कोई नही है।

इतना सुनकर भूतनाथ को बेहिसाब गुस्सा चढ आया मगर फिर भी उसने अपने क्रोध को दबाया और कहा—

भूतनाथ—अच्छा, तो अब मैं ऐसा ही करूँगा, मगर यह तो बताओ कि शेर की लड़की 'गौहर' से तुमसे क्या नाता है ?

रामदेई—उस मुसलमानिन से मुझसे क्या नाता होगा ! मैंने तो उसकी सूरत भी नहीं देखी।

भूतनाथ—लोग तो कहते हैं कि तुम उसके यहाँ भी आती-जाती हो और मेरे बहुत से भेद तुमने उसे बता दिये हैं।

रामदेई—सब झूठ है। ये लोग बात लगाने वाले जैसे ही धूर्त और पाजी हैं वैसे ही तुम सीधे और बेवकूफ हो।

अब भूतनाथ अपने गुस्से को बर्दाश्त न कर सका और उसने एक चपत रामदेई के गाल पर ऐसी जमाई कि वह तिलमिला कर जमीन पर लेट गई, मगर उसे चिल्लाने का साहस न हुआ। कुछ देर बाद वह उठ बैठी और भूतनाथ का मुँह देखने लगी।

भूतनाथ—कमीनी हरामजादी ! जिनके लिए मैं जान तक देने को तैयार हूँ उन्हीं लोगों की शान में तू ऐसी बातें कह रही है जो एक पराये को भी कहना उचित नहीं है और जिसे मैं एक सायत के लिए भी बर्दाश्त नहीं कर सकता ! ले समझ ले और कान खोल कर सुन ले कि तेरे हाथ की लिखी वह चिट्ठी मुझे मिल गई है जो तूने चाँद वाले दिन गौहर के यहाँ मिलने के लिए नन्हीं के पास भेजी थी और जिसमें तूने अपना परिचय 'करौंदा की छैये-छैये' दिया था। बस, इसी से समझ ले कि तेरी सब कलई खुल गई और तेरी बेईमानी लोगों को मालूम हो गई। अब तेरा नखरे के साथ रोना बातें बना कर अपने को बेकसूर साबित करना व्यर्थ है। अब तेरी मुहब्बत, एक रत्ती बराबर मेरे दिल में नहीं रह गई और तुझे उस जहरीली नागिन से भी हजार दर्जे बढ़ के समझने लग गया जिसे खूबसूरत होने पर भी कोई हाथ से छूने तक का साहस नहीं कर सकता। मुझे आज इस बात का सख्त रंज है कि मैंने तुझे इतने दिन तक प्यार किया और इस बात की तरफ कुछ भी ध्यान न दिया कि इस मुहब्बत, ऐयाशी और शौक का नतीजा एक-न-एक दिन जरूर भयानक होता है जिसे छिपाने की जरूरत समझी जाती है और जिसका जाहिर होना शर्मिन्दगी और बेहयाई का सबब समझा जाता है। मुझे इस बात का भारी अफसोस है कि तुझसे अनुचित सम्बन्ध रखकर मैंने उन उचित सम्बन्ध वालों का साथ छोड़ दिया जिनकी जूतियों की बराबरी भी तू नहीं कर सकती या यों कहना चाहिए कि मेरे नसीब का धब्बा। जिसको दुनिया में भी देखना मैं पसन्द नहीं कर सकता। मुझे इस [illegible] हुआ है कि नागर या मायारानी के पन्जे से तुझे छुड़ाने के लिए मैंने तरह-तरह [illegible] और [illegible] भी विचार न किया कि मैं उस श्यामा [illegible] [illegible] जिसे पहली ही अवस्था में ईश्वर की कृपा [illegible] था। [illegible] तू [illegible] न समझ, बल्कि अपने [illegible] [illegible] में उड़ गया और उसमें भी यह दे कि आज मैं [illegible] न करे। यदि मेरे पुराने विचार न बदल गये [illegible] आज [illegible] बात को पार न [illegible] तो आज [illegible] [illegible] देता, मगर खैर, अब इतना ही

कहता हूँ कि मेरे सामने से उठ जा और फिर कभी अपना काला मुँह मुझे मत दिखाना। जिस कुल को तू पहले कलक लगा चुकी है अब भी उसी कुल की बदनामी का सबब बन कर दुनिया की हवा खा।

रामदेई के पास भूतनाथ की बातों का जवाब न था। वह अपनी पुरानी चिट्ठी का सच्चा परिचय सुन कर बदहवास हो गई और समझ गई कि उसके अच्छे नसीब के पहिए की धुरी टूट गई जिसे अब किसी तरह भी नहीं बना सकती। वह अपने धड़कते हुए कलेजे और काँपते गए बदन के साथ भूतनाथ की बातें सुनती रही और अन्त मे उठने का साहस करने पर भी अपनी जगह से न हिल सकी। मगर भूतनाथ वहाँ से उठ खडा हुआ और बँगले की तरफ चल पडा। थोडी ही दूर गया होगा कि देवीसिंह से मुलाकात हुई जिसने उसका हाथ पकड लिया और कहा, "भूतनाथ, शाबाश! शाबाश! जो कुछ नेक और बहादुर आदमियो को करना चाहिए, इस समय तुमने वही किया। मैं छिप कर तुम्हारी सब बाते सुन रहा था। अगर तुम कुछ बेजा काम करना चाहते तो मैं तुम्हे जरूर रोकता, मगर ऐसा करने का मौका न हुआ। खैर, मैं बहुत ही खुश हूँ। अच्छा जाओ, अपने कमरे मे जाकर आराम करो, मैं अब इन्द्रदेव के पास जाता हूँ।"

8
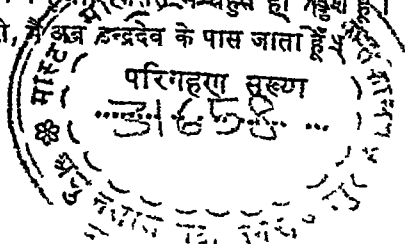
रात पहर भर से ज्यादा जा चुकी है, एक सुन्दर सजे हुए कमरे मे राजा गोपालसिंह और इन्द्रदेव बैठे हैं और उनके सामने नानक हाथ जोडे बैठा दिखाई देता है।

गोपालसिंह—(नानक से) ठीक है, यद्यपि इन बातो मे तुमने अपनी तरफ से कुछ नमक-मिर्च जरूर लगाया होगा, मगर फिर भी मुझे कोई ऐसी बात नही जान पडती जिससे भूतनाथ को दोषी ठहराऊँ। उसने जो कुछ तुम्हारी माँ से कहा सच कहा और उसके साथ जैसा बर्ताव किया वह उचित ही था। इस विषय मे मैं भूतनाथ को कुछ भी नही कह सकता और न अब तुम्हारी बातो पर भरोसा ही कर सकता हूँ। बडे अफसोस की बात है कि मेरी नसीहत ने तुम्हारे दिल पर कुछ भी असर न किया[1] और अगर कुछ किया भी तो वह दो-चार दिन बाद जाता रहा। अगर तुम अपनी माँ के साथ नन्ही के मकान मे गिरफ्तार न हुए होते तो कदाचित् मैं तुम्हारे धोखे मे आ जाता, मगर अब मैं किसी तरह भी तुम्हारा साथ नहीं दे सकता।

नानक—मगर आप मेरा कसूर माफ कर चुके हैं और···

इन्द्रदेव—(नानक से) अगर तुम उस माफी को पाकर खुश हुए थे तो फिर पुराने रास्ते पर क्यो गये और पुन अपनी माँ को लेकर नन्हीं के पास क्यो पहुँचे? तुम्हे बात करते शर्म नही आती!

---

1. देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, उन्नीसवाँ भाग, तीसरा बयान।

गोपालसिंह—फिर भी मैं अपनी जबान (माफी) का खयाल करूँगा और तुम्हें किसी तरह की तकलीफ न दूँगा, मगर अब भूतनाथ की तरह मैं भी तुम्हारी सूरत देखना पसन्द नहीं करता और न भूतनाथ को इस विषय में कुछ कहना चाहता हूँ। इन्द्रदेव ने तुम्हारे साथ इतनी ही रियायत की सो बहुत किया कि तुमको यहाँ से निकल जाने की आज्ञा दे दी, नहीं तो तुम इस लायक थे कि जन्म-भर कैद में पड़े सड़ा करते।

नानक—जो आज्ञा, मगर मेरे पिता से इतना तो दिला दीजिए कि मेरी माँ जन्म भर खाने-पीने की तरफ से बेफिक्र रहे।

इन्द्रदेव—अबे कमीने, तुझे यह कहते शर्म नहीं मालूम होती! इतना बड़ा हो के भी तू अपनी माँ के लायक खाना-पानी नहीं जुटा सकता? खैर, अब तुझे आखिरी मर्तबे कहा जाता है कि अब हम लोगों से किसी तरह की उम्मीद न रख और अपनी माँ को साथ लेकर यहाँ से जा। भूतनाथ ने भी मुझे यही कहने के लिए कहला भेजा है।

इतना कहकर इन्द्रदेव ने ताली बजाई और साथ ही अपने ऐयार सरयूसिंह को कमरे के अन्दर आते देखा।

इन्द्रदेव—(सरयू से) भूतनाथ कहाँ है?

सरयू—दूसरे कमरे में देवीसिंहजी से बातें कर रहे हैं। ये दोनों यहाँ आए भी थे मगर यह सुनकर कि नानक यहाँ बैठा हुआ है, पिछले पैर लौट गए।

इन्द्रदेव—अच्छा, तुम जाओ और उन्हें यहाँ बुला लाओ।

सरयूसिंह—जो आज्ञा! परन्तु मुझे आशा नहीं है कि वे लोग नानक के रहते यहाँ आवेंगे।

इन्द्रदेव—अच्छा, तो मैं खुद जाता हूँ।

गोपालसिंह—हाँ तुम्हारा ही जाना ठीक होगा, देवीसिंह को भी बुलाते आना।

इन्द्रदेव उठकर बाहर गए और थोड़ी ही देर में भूतनाथ तथा देवीसिंह को साथ लिए हुए आ पहुँचे।

गोपालसिंह—(भूतनाथ से) क्यों साहब, आप यहाँ तक आकर लौट क्यों गए?

भूतनाथ—जी, मैंने समझा कि आप लोग किसी खास बात में लगे हुए हैं।

गोपालसिंह—अच्छा, बैठिए और एक बात का जवाब दीजिए।

भूतनाथ—कहिए।

गोपालसिंह—रामदेई और नानक के बारे में आप क्या हुक्म देते हैं?

भूतनाथ—[illegible] ने क्या आज्ञा दी है?

गोपालसिंह—[illegible] इसका फैसला आप ही के ऊपर छोड़ा है।

भूतनाथ—फिर [illegible] इन दोनों के बारे में [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

भूतनाथ—वह क्या ?

गोपालसिंह—यही कि ये दोनो अगर खाली हाथ न होते तो वेचारी शान्ता को जान से मार डालते ।

इतने ही मे नानक वोल उठा, "नही-नही, यह आपके जासूसो ने हमारे ऊपर झूठा इलजाम लगाया है !"

भूतनाथ—अगर यह वात है तो मैं इसे हथकडी से खाली क्यो देखता हूँ ?

इन्द्रदेव—इसीलिए कि हमारे हाते के अन्दर ये लोग कुछ कर नही सकते । जव ये लोग यहाँ गिरफ्तार होकर आये तो कुछ दिन तक तो भलमनसी के साथ रहे, मगर आज इनकी नीयत विगडी हुई मालूम पडी ।

भूतनाथ—खैर, अव आप ही इनके लिए हुक्म सुनाइए । मगर इन्द्रदेव, आप यह न समझियेगा कि इन लोगो के वारे मे मुझे किसी तरह का रज है । मैं सच कहता हूँ कि इन दोनो का यहाँ आना मेरे लिए वहुत अच्छा हुआ ! मै इन लोगो के फेर मे वेतरह फँसा हुआ था । आज मालूम हुआ कि ये लोग जहरी हलाहल से भी वढे हुए है, अत आज इन लोगो से पीछा छुडाकर मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ । मेरे सिर से वोझा उतर गया और अव मेरी जिन्दगी खुशी के साथ वीतेगी । आपका कहना सच निकला अर्थात् इनका यहाँ आना मेरे लिए खुशी का सवव हुआ ।

इन्द्रदेव—अच्छा यह वताइए कि ये अगर इसी तरह छोड दिये जायँ तो आपके खजाने को तो किसी तरह का नुकसान नही पहुँचा सकते जो 'लामाघाटी' के अन्दर है ?

भूतन—कुछ भी नही, और 'लामाघाटी' के अन्दर जेवरो के अतिरिक्त और कुछ है भी नही, सो जेवरो को मैं वहाँ से मँगवा ले सकता हूँ ।

इन्द्रदेव—अगर सिर्फ नानक की माँ के जेवरो से आपका मतलव है तो वह अव मेरे कब्जे मे हैं क्योकि नन्हो के यहाँ वह विना जेवरो के नही गई थी ।

भूतनाथ—वस, तो मैं उस तरफ से वेफिक्र हो गया, यद्यपि उन जेवरो की मुझे कोई परवाह नही है मगर उसके पास मैं एक कौडी भी नही छोडना चाहता । इसके अतिरिक्त यह भी जरूर कहूँगा कि अब ये लोग सूखे छोड देने लायक नही रहे ।

इन्द्रदेव—खैर, जैसी राय होगी, वैसा ही किया जायगा ।

इतना कहकर इन्द्रदेव ने पुन सरयूसिंह को वुलाया और जव वह कमरे के अन्दर आ गया तो कहा—"थोडी देर के लिए नानक को वाहर ले जाओ ।"

नानक को लिए हुए सरयूसिह कमरे के वाहर चला गया और इसके वाद चारो आदमी विचार करने लगे कि नानक और उसकी माँ के साथ क्या वर्ताव करना चाहिए । देर तक सोच-विचार कर यही निश्चय किया कि उन दोनो को देश से निकाल दिया जाय और कह दिया जाय कि जिस दिन हमारे महाराज की अमलदारी मे दिखाई दोगे, उसी दिन मार डाले जाओगे ।

इस हुक्म पर महाराज से आज्ञा लेने की इन लोगो को कोई जरूरत नही थी, क्योकि उन्होने सव वाते सुन-सुनाकर पहले ही हुक्म दे दिया था कि भूतनाथ की आज्ञा-नुसार काम किया जाय, अत नानक कमरे के अन्दर वुलाया गया और इसके वाद राम-

लीजिये।

भूतनाथ ने दर्खास्त उतार कर पढी और उसके बाद कुछ देर तक उन लोगो मे बातचीत होती रही।

9

सुबह का सुहावना समय सब जगह एक सा नही मालूम होता, घर की खिडकियो मे उसका चेहरा कुछ और ही दिखायी देता है और बाग मे उसकी कैफियत कुछ और ही मस्तानी होती है, पहाड मे उसकी खूबी कुछ और ही ढग की दिखाई देती है और जगल मे उसकी छटा कुछ निराली ही होती है। आज इन्द्रदेव के इस अनूठे स्थान मे इसकी खूबी सबसे चढी-बढी है, क्योकि यहाँ जगल भी है, पहाड भी, अनूठा बाग तथा सुन्दर बँगला या कोठी भी है, फिर यहाँ के आनन्द का पूछना ही क्या। इसलिए हमारे महाराज, कुँअर साहब और ऐयार लोग भी यहाँ घूम-घूमकर सुबह के सुहावने समय का पूरा आनन्द ले रहे हैं, खास करके इसलिए कि आज ये लोग डेरा कूच करने वाले है।

बहुत देर घूमने-फिरने के बाद सब कोई बाग मे आकर बैठे और इधर-उधर की बातें होने लगी।

जीतसिह—(इन्द्रदेव से) भरतसिह वगैरह तथा औरतो को आपने चुनार रवाना कर दिया ?

इन्द्रदेव—जी हाँ, बडे सवेरे ही उन लोगो को बाहर की राह से रवाना कर दिया। औरतो के लिए सवारी का इन्तजाम कर देने के अतिरिक्त अपने दस-पन्द्रह मातकर आदमी भी साथ कर दिये हैं।

जीतसिह—अब हम लोग कुछ भोजन करके यहाँ से रवाना हुआ चाहते है।

इन्द्रदेव—जैसी मर्जी !

जीतसिह—भैरो और तारा जो आपके साथ यहाँ आए थे कहाँ चले गये, दिखाई नही पडते।

इन्द्रदेव—अब भी मैं उन्हें अपने साथ ही ले जाने की आज्ञा चाहता हूँ, क्योकि उनकी मदद की मुझे जरूरत है।

जीतसिह—तो क्या आप हम लोगो के साथ न चलेंगे ?

इन्द्रदेव—जी हाँ, उस बाग तक जरूर साथ चलूँगा, जहाँ से मैं आप लोगो को यहाँ तक ले आया हूँ, पर उसके बाद गुप्त हो जाऊँगा, क्योकि मैं आपको कुछ तिलिस्मी तमाशे दिखाना चाहता हूँ और इसके अतिरिक्त उन चीजो को भी तिलिस्म के अन्दर से निकलवा कर चुनार पहुँचाना है, जिनके लिए आज्ञा मिल चुकी है।

सुरेन्द्रसिह—नही-नहीं, गुप्त रीति पर हम तिलिस्म का तमाशा नही देखना चाहते, हमारे साथ रहकर जो कुछ दिखा सको, दिखा दो। बाकी रहा उन चीजो को

निकलवा कर चुनार पहुँचाना, सो यह काम दो दिन के वाद भी होगा तो कोई हर्ज नही।

इन्द्रदेव—जैसी आज्ञा।

इतना कहकर इन्द्रदेव थोडी देर के लिए कही चले गए और तव भैरोसिंह तथा तारासिंह को साथ लिए आकर वोले, "भोजन तैयार है।"

सव लोग वहाँ से उठे और भोजन इत्यादि से छुट्टी पाकर तिलिस्म की तरफ रवाना हुए। जिस तरह इन्द्रदेव इन लोगो को अपने स्थान मे ले आए थे, उसी तरह पुन उस ति॰ रमी वाग मे ले गए, जिसमे से लाए थे।

जव महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह उस वारहदरी मे पहुँचे, जिसमे पहले दिन आराम किया था और जहाँ वाजे की आवाज सुनी थी, तव दिन पहर भर से कुछ ज्यादा वाकी था। जीतसिंह ने इन्द्रदेव से पूछा, "अव क्या करना चाहिए?"

इन्द्रदेव—यदि महाराज आज की रात यहाँ रहना पसन्द करे, तो एक दूसरे वाग मे चलकर वहाँ की कुछ कैफियत दिखाऊँगा।

जीतसिंह—वहुत अच्छी वात है, चलिए।

इतना सुनकर इन्द्रदेव ने उस वारहदरी की कई आलमारियो मे से एक आलमारी खोली और उसके अन्दर जाकर सभी को अपने पीछे आने का इशारा किया। यहाँ एक गली की तौर पर रास्ता वना हुआ था, जिसमे सव कोई इन्द्रदेव की इच्छानुसार वेखौफ चले गए और थोडी दूर जाने के वाद जव इन्द्रदेव ने दूसरा दरवाजा खोला, तव उसके वाहर होकर सभी ने अपने को एक छोटे वाग मे पाया, जिसकी वनावट कुछ विचित्र ही ढग की थी। यह वाग जगली पौधो की सव्जी से हरा-भरा था और पानी का चश्मा भी वह रहा था, मगर चारदीवारी के अतिरिक्त और किसी तरह की वडी इमारत इसमें न थी, हाँ वीच मे एक वहुत वडा चवूतरा जरूर था, जिस पर धूप और वरसाती पानी के लिए सिर्फ मोटे-मोटे वारह खम्भो के सहारे पर छत वनी हुई थी और चवूतरे पर चढने के लिए चारो तरफ सीढियाँ थी।

यह चवूतरा कुछ अजीव ढग का वना हुआ था। लगभग चालीस हाथ के चौडा और इतना ही लम्वा होगा। इसके फर्श मे लोहे की वारीक नालियाँ जाल की तरह जडी हुई थी और वीच मे एक चौखूटा स्याह पत्थर इस अन्दाज का रखा था, जिस पर चार आदमी वैठ सकते थे। वस, इसके अतिरिक्त इस चवूतरे मे और कुछ भी न था।

थोडी देर तक सव कोई उस चवूतरे की वनावट देखते रहे, इसके वाद इन्द्रदेव ने महाराज से कहा, "तिलिस्म वनाने वालो ने यह वगीचा केवल तमाशा देखने के लिए वनाया था। यहाँ की कैफियत आपके साथ रहकर मैं नही दिखा सकता। हाँ, यदि आप मुझे दो-तीन पहर की छुट्टी दे तो !"

इन्द्रदेव की वात महाराज ने मजूर कर ली और तव वह (इन्द्रदेव) सभी के देखते देखते चौखूटे पत्थर के ऊपर चले गए जो चवूतरे के वीच मे जडा हुआ था। सवार होने के साथ ही वह पत्थर हिला और इन्द्रदेव को लिए हुए जमीन के अन्दर चला गया, मगर थोडी देर मे पुन ऊपर चला आया और अपने ठिकाने पर ज्यो का त्यों वैठ गया लेकिन इस समय इन्द्रसेन उस पर न थे।

इन्द्रदेव के चले जाने के वाद थोडी देर तक तो सव कोई उस चवूतरे पर खडे रहे, इसके वाद धीरे-धीरे वह चवूतरा गरम होने लगा और वह गर्मी यहाँ तक वढी कि लाचार उन सभी को चवूतरा छोड देना पडा, अर्थात् सव कोई चवूतरे के नीचे उतर आए और वाग में टहलने लगे। इस समय दिन घण्टे भर से कुछ कम वाकी था।

इस खयाल से देखें कि इसकी दीवार किस ढग की वनी हुई हैं, सव कोई घूमते हुए पूरव की तरफ वाली दीवार के पास जा पहुँचे और गौर से देखने लगे, मगर कोई अनूठी वात दिखाई न दी। इसके वाद उत्तर तरफ वाली और फिर पश्चिम तरफ वाली दीवार को देखते हुए सव कोई दक्खिन की तरफ गए और उधर की दीवार को आश्चर्य के साथ देखने लगे, क्योकि इसमें कुछ विचित्रता थी।

यह दीवार शीशे की मालूम होती थी और इसमे महाभारत की तस्वीरें वनी हुई थी। ये तस्वीरें उसी ढग की थी, जैसी कि उस तिलिस्मी वँगले मे चलती-फिरती तस्वीरें इन लोगो ने देखी थी। ये लोग तस्वीरो को वडी देर तक देखते रहे और सभी को विश्वास हो गया कि जिस तरह उस वँगले वाली तस्वीरो को चलते-फिरते और काम करते हम लोग देख चुके हैं उसी तरह इन तस्वीरो को भी देखेंगे, क्योकि दीवार पर हाथ फेरने से साफ मालूम होता था कि तस्वीरें शीशे के अन्दर हैं।

इन तस्वीरो को देखने से महाभारत की लडाई का जमाना आँखों के सामने फिर जाता था। कौरवो और पाण्डवो की फौज, उसके वडे-वडे सेनापति तथा रथ, हाथी, घोड़े इत्यादि जो कुछ वने थे, सभी अच्छे और दिल पर असर पैदा करने वाले थे। 'इस लडाई की नकल अपनी आँखो से देखेंगे' इस विचार से सव कोई प्रसन्न थे। वडी दिलचस्पी के साथ उन तस्वीरो को देख रहे थे, यहाँ तक कि सूर्य अस्त हो गया और धीरे-धीरे अन्धकार ने चारो तरफ अपना दखल जमा लिया। उस समय यकायक दीवार चमकने लगी और तस्वीरों मे हरकत पैदा हुई जिससे सभी ने समझा कि नकली लडाई शुरू हुआ चाहती है मगर कुछ ही देर वाद लोगो का यह विश्वास ताज्जुव के साथ वदल गया, जव यह देखा कि उसमे की तस्वीरें एक-एक करके गायव हो रही है, यहाँ तक कि घडी भर के अन्दर ही सव तस्वीरें गायव हो गईं और दीवार साफ दिखाई देने लगी। इसके वाद दीवार की चमक भी वन्द हो गई और फिर अन्धकार दिखाई देने लगा।

थोडी देर वाद उस चवूतरे की तरफ रोशनी मालूम हुई। यह देखकर सव कोई उसी तरफ रवाना हुए और जव उसके पास पहुँचे तो देखा कि उस चवूतरे की छत में जडे हुए शीशो के दस-वारह टुकडे इस तेजी के साथ चमक रहे हैं कि उनसे केवल चवूतरा ही नही वल्कि तमाम वाग मे उजाला हो रहा है। इसके अतिरिक्त सैकडो मूरतें भी उस चवूतरे पर इधर-उधर चलती-फिरती दिखाई दीं। गौर करने से मालूम हुआ कि ये मूरतें (या तस्वीरें) वेशक वे ही है, जिन्हें उस दीवार के अन्दर देख चुके हैं। ताज्जुव नही कि वह दीवार इन सभी का खजाना हो और वही यहाँ इस चवूतरे पर आकर तमाशा दिखाती हो।

इस समय जितनी मूरतें उस चवूतरे पर थीं, सव अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु की लडाई मे सम्वन्ध रखती थी। [illegible] कि अभि-

मन्यु की लडाई का तमाशा आँखो के सामने दिखाई देने लगा। जिस तरह कौरवो के रचे हुए व्यूह के अन्दर फँसकर कुमार अभिमन्यु ने वीरता दिखाई थी और अन्त मे अधर्म के साथ जिस तरह वह मारा गया था, उसी को आज नाटक स्वरूप मे देखकर सब कोई बडे प्रसन्न हुए और सभी के दिलो पर बहुत देर तक इसका असर रहा।

इस तमाशे का हाल खुलासा तौर पर हम इसलिए नही लिखते कि इसकी कथा बहुत प्रसिद्ध है और महाभारत मे विस्तार के साथ लिखी है।

यह तमाशा थोडी ही देर मे खत्म नही हुआ बल्कि देखते हुए तमाम रात बीत गई। सवेरा होने के कुछ पहले अधकार हो गया और उसी अधकार मे सब मूरते गायब हो गई। उजाला होने और आँखें ठहरने पर जब सभी ने देखा तो उस चबूतरे पर सिवाय इन्द्रदेव के और कुछ भी दिखाई न दिया।

इन्द्रदेव को देखकर सब कोई प्रसन्न हुए और साहब-सलामत के बाद इस तरह बातचीत होने लगी—

इन्द्रदेव—(चबूतरे से नीचे उतर कर और महाराज के पास आकर) मैं उम्मीद करता हूँ कि इस तमाशे को देखकर महाराज प्रसन्न हुए होगे।

महाराज—बेशक! क्या इसके सिवाय और भी कोई तमाशा यहाँ दिखाई दे सकता है?

इन्द्रदेव—जी हाँ, यहाँ पूरा महाभारत दिखाई दे सकता है, अर्थात् महाभारत ग्रन्थ मे जो कुछ लिखा है, वह सब इसी ढग पर और उसी चबूतरे पर आप देख सकते है मगर दो-चार दिन मे नही बल्कि महीनो मे! इसके साथ-साथ बनाने वाले ने इसकी भी तरकीब की है कि चाहे शुरू ही से तमाशा दिखाया जाए या बीच ही से कोई टुकडा दिखा दिया जावे अर्थात् महाभारत के अन्तर्गत जो कुछ चाहे देख सकते हैं।

महाराज—इच्छा तो बहुत कुछ देखने की थी, मगर इस समय हम लोग यहाँ ज्यादा ठहर नही सकते, अब फिर कभी जरूर देखेंगे। हाँ, हमे इस तमाशे के विषय मे कुछ समझाओ तो सही कि यह काम क्योंकर हो सकता है और तुमने यहाँ से कहाँ जाकर क्या किया?

उसी बाग मे ले आए, जिसमे उनसे मुलाकात हुई थी या जहाँ से इन्द्रदेव के स्थान मे जाने का रास्ता था।

10

इस बाग में पहले दिन जिस बारहदरी मे बैठकर सभी ने भोजन किया था, आज पुन उसी बारहदरी मे बैठने और भोजन करने का मौका मिला। खाने की चीजें ऐयार लोग अपने साथ ले आये थे और जल की वहाँ कमी ही न थी, अत स्नान-सन्ध्योपासन और भोजन इत्यादि से छुट्टी पाकर सब कोई उसी बारहदरी मे सो रहे क्योंकि रात के जागे हुए थे और बिना कुछ आराम किये आगे बढने की इच्छा न थी।

जब दिन पहर भर से कुछ कम बाकी रह गया, तब सब कोई उठे और चश्मे के जल से हाथ-मुंह धोकर आगे की तरफ बढने के लिए तैयार हुए।

हम ऊपर किसी बयान मे लिख आये हैं कि यहाँ तीनों तरफ की दीवारो मे कई आलमारियाँ भी थी, अत इस समय कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने उन्ही आलमारियो मे से एक आलमारी खोली, और महाराज की तरफ देखकर कहा, "चुनार के तिलिस्म मे जाने का यही रास्ता है, और हम दोनो भाई इसी रास्ते से वहाँ तक गये थे।"

रास्ता बिल्कुल अंधेरा था, इसलिए इन्द्रजीतसिंह तिलिस्मी खजर की रोशनी करते हुए आगे-आगे रवाना हुए और उनके पीछे महाराज सुरेन्द्रसिंह, राजा बीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, इन्द्रदेव वगैरह और ऐयार लोग रवाना हुए। सबसे पीछे कुंअर आनन्दसिंह तिलिस्मी खजर की रोशनी करते हुए जाने लगे, क्योंकि सुरग पतली थी, और केवल आगे की रोशनी से काम नही चल सकता था।

ये लोग उस सुरग मे कई घण्टे तक बराबर चलते गये और इस बात का पता न लगा कि कब सध्या या अब कितनी रात बीत चुकी है। जब सुरग का दूसरा दरवाजा इन लोगो को मिला और उसे खोलकर सब कोई बाहर निकले तो अपने को एक लम्बी-चौडी कोठरी मे पाया, जिसमे इस दरवाजे के अतिरिक्त तीनो तरफ की दीवारो मे और भी तीन दरवाजे थे, जिनकी तरफ इशारा करके कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने कहा, "अब हम लोग उस चबूतरे वाले तिलिस्म के नीचे आ पहुँचे हैं। इस जगह एक-दूसरे से मिली हुई सैकडो कोठरियाँ हैं जो भूल-भुलैये की तरह चक्कर दिलाती हैं और जिनमे फँसा हुआ अनजान आदमी जल्दी निकल ही नही सकता। जब पहले-पहल हम दोनो भाई यहाँ आये थे तो सब कोठरियो के दरवाजे बन्द थे जो तिलिस्मी किताब की सहायता से खोले गये और जिनका खुलासा हाल आपको तिलिस्मी किताब के पढने से मालूम होगा, मगर इनके खोलने मे कई दिन लगे और तकलीफ भी बहुत हुई। इन कोठरियो के मध्य मे एक चौखूंटा कमरा आप देखेंगे जो ठीक चबूतरे के नीचे है और उसी मे से बाहर निकलने का रास्ता है, बाकी सब कोठरियो मे असबाब और खजाना भरा हुआ है। इसके अतिरिक्त

छत के ऊपर एक और रास्ता उस चबूतरे में से बाहर निकलने के लिए बना हुआ है, जिसका हाल मुझे पहले मालूम न था, जिस दिन हम दोनों भाई उस चबूतरे की राह निकले हैं, उस दिन देखा कि इसके अतिरिक्त एक रास्ता और भी है।"

इन्द्रदेव—जी हाँ, दूसरा रास्ता भी जरूर है, मगर वह तिलिस्म के दारोगा के लिए बनाया गया था, तिलिस्म तोडने वाले के लिए नही। मुझे उस रास्ते का हाल बखूबी मालूम है।

गोपालसिंह—मुझे भी उस रास्ते का हाल (इन्द्रदेव की तरफ इशारा करके) इन्ही की जुबानी मालूम हुआ है, इसके पहले मैं कुछ भी नही जानता था और न ही मालूम था कि इस तिलिस्म के दारोगा यही है।

इसके बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने सबको तहखाने अथवा कोठरियों और कमरो की सैर कराई, जिसमें लाजवाब और हद दर्जे की फिजूलखर्ची को मात करने वाली दौलत भरी हुई थी, और एक-से-एक बढकर अनूठी चीजें लोगो के दिल को अपनी तरफ खीच रही थी। साथ ही इसके यह भी समझाया कि इन कोठरियो को हम लोगो ने कैसे खोला, और उस काम मे कैसी-कैसी कठिनाइयाँ उठानी पडी।

घूमते-फिरते और सैर करते हुए सब कोई उस मध्य वाले कमरे मे पहुँचे जो ठीक तिलिस्मी चबूतरे के नीचे था। वास्तव मे यह कमरा कल-पुर्जो से बिल्कुल भरा हुआ था। जमीन से छत तक बहुत-सी तारो और कल-पुर्जों का सम्बन्ध था और दीवार के अन्दर से ऊपर चढ जाने के लिए सीढियाँ दिखाई दे रही थी।

दोनों कुमारो ने महाराज को समझाया कि तिलिस्म टूटने के पहले वे कल-पुर्जे किस ढग पर लगे थे और तोडते समय उनके साथ कैसी कार्रवाई की गई। इसके बाद इन्द्रजीतसिंह ने सीढियो की तरफ इशारा करके कहा, "अब भी इन सीढियो का तिलिस्म कायम है, हर एक की मजाल नही कि इन पर पैर रख सके।"

बीरेन्द्रसिंह—यह सब कुछ है, मगर असल तिलिस्मी बुनियाद वही खोह वाला बँगला जान पडता है, जिसमे चलती-फिरती तस्वीरो का तमाशा देखा था, और जहाँ से तिलिस्म के अन्दर घुसे थे।

सुरेन्द्रसिंह—इसमें क्या शक है। वही चुनार, जमानिया और रोहतासगढ वगैरह के तिलिस्मो की नकेल है, और वहाँ रहने वाला तरह-तरह के तमाशे देख-दिखा सकता है और सबसे बढकर आनन्द ले सकता है।

जीतसिंह—वहाँ की पूरी-पूरी कैफियत अभी देखने मे नही आई।

इन्द्रजीतसिंह—दो-चार दिन मे वहाँ की कैफियत देख भी सकते हैं। जो कुछ आप लोगो ने देखा वह रुपये मे एक आना भी न था। मुझे भी अभी पुन वहाँ जाकर बहुत-कुछ देखना बाकी है।

सुरेन्द्रसिंह—इस समय तो जल्दी मे थोडा-बहुत देख लिया है, मगर काम से निश्चिन्त होकर पुन हम लोग वहाँ चलेंगे, और उसी जगह से रोहतासगढ के तहखाने की भी सैर करेंगे। अच्छा, अब यहाँ से बाहर होना चाहिए।

आगे-आगे कुँअर इन्द्रजीतसिंह रवाना हुए। पाँच-सात सीढियाँ चढ जाने के बाद

एक छोटा-सा लोहे का दरवाजा मिला, जिसे उसी हीरे वाली तिलिस्मी ताली से खोला, और तब सबको लिए हुए दोनों कुमार तिलिस्मी चबूतरे के बाहर हुए।

सब कोई तिलिस्म की सैर करके लौट आये और अपने-अपने काम-धंधे मे लगे। कैदियो के मुकदमे को थोडे दिन तक मुल्तवी रखकर कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की शादी पर सबने ध्यान दिया और इसी के इन्तजाम की फिक्र करने लगे। महाराज सुरेन्द्रसिंह ने जो काम जिसके लायक समझा, उसके सुपुर्द करके कुल कैदियो को चुनारगढ भजने का हुक्म दिया और यह भी निश्चय कर लिया कि दो-तीन दिन के बाद हम लोग भी चुनारगढ चले जायेंगे, क्योंकि बारात चुनारगढ ही से निकलकर यहाँ आयेगी।

भरतसिंह और दिलीपशाह वगैरह का डेरा बलभद्रसिंह के पडोस ही मे पडा और दूसरे मेहमानो के साथ-ही-साथ इनकी खातिरदारी का बोझ भी भूतनाथ के ऊपर डाला गया। इस जगह मक्षेप मे हम यह भी लिख देना उचित समझते है कि कौन काम किसके सुपुर्द किया गया।

(1) इस तिलिस्मी इमारत के इर्द-गिर्द जिन मेहमानो के डेरे पडे हैं, उन्हे किसी बात की तकलीफ तो नही होती, इस बात को बराबर मालूम करते रहने का काम भूतनाथ के सुपुर्द किया गया—

(2) मोदी, बनिए और हलवाई वगैरह किसी से किसी चीज का दाम तो नही लेते, इस बात की तहकीकात के लिए रामनारायण ऐयार मुकर्रर किए गए।

(3) रसद वगैरह के काम मे कही किसी तरह की बेईमानी तो नही होती, या चोरी का नाम तो किसी की जुबान से नही सुनाई देता, इसको जानने और शिकायतो के दूर करने पर चुन्नीलाल ऐयार तैनात किए गए।

(4) इस तिलिस्मी इमारत से लेकर चुनारगढ तक की सडक और उसकी सजावट का काम पन्नालाल और पण्डित बद्रीनाथ के जिम्मे किया गया।

(5) चुनारगढ मे बाहर से न्यौते मे आए हुए पण्डितो की खातिरदारी और पूजा-पाठ इत्यादि के सामान की दुरुस्ती का बोझ जगन्नाथ ज्योतिषी पर डाला गया।

(6) बारात और महफिल वगैरह की सजावट तथा उसके सम्बन्ध मे जो कुछ काम हो, उसके जिम्मेवार तेजसिंह बनाये गये।

(7) आतिशबाजी और अजायबातो के तमाशे तैयार करने के साथ-ही-साथ उसी तरह की एक इमारत के बनवाने का हुक्म इन्द्रदेव को दिया गया, जैसी इमारत के अन्दर हँसते-हँसते इन्द्रजीतसिंह वगैरह एक दफे कूद गये थे, और जिसका भेद अभी तक खोला नही गया है।[1]

(8) पन्नालाल वगैरह के बदले मे रणधीरसिंहजी के डेरे की हिफाजत तथा किशोरी, कामिनी वगैरह की निगरानी के जिम्मेवार देवीसिंह बनाये गये।

(9) ब्याह-सम्बन्धी खर्च की तहवील (रोकड) राजा गोपालसिंह के हवाले की गई।

---

1 देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, पांचवां भाग, चौथा बयान।

(10) कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के साथ रहकर उनके विवाह-सम्बन्धी शान-शौकत और जरूरतो को कायदे के साथ निभाने के लिए भैरोसिंह और तारासिंह छोड दिये गये।

(11) हरनामसिंह को अपनी मातहती मे लेकर जीतसिंह ने यह काम अपने जिम्मे ले लिया कि हर एक के कामो की जाँच और निगरानी रखने के अतिरिक्त कुछ कैदियो को भी किसी उचित ढग से इस विवाहोत्सव के तमाशे दिखा देंगे, ताकि वे लोग भी देख लें, कि जिस शुभ दिन के हम वाधक थे, वह आज किस खुशी और खूबी के साथ बीत रहा है और सर्वसाधारण भी देख ले, कि धन-दौलत और ऐश-आराम के फेर मे पडकर अपने पैर मे आप कुल्हाडी मारने वाले, छोटे होकर बडो के साथ पैर बाँध के नतीजा भोगने वाले, मालिक के साथ मे नमकहरामी और उग्र पाप करने का कुछ फल इस जन्म मे भी भोग लेने वाले, और बदनीयती तथा पाप के साथ ऊँचे दर्जे पर पहुँचकर यकायक रसातल मे पहुँच जानेवाले, धर्म और ईश्वर से सदा विमुख रहने वाले ये ही प्रायश्चित्ती लोग है।

इन सबके साथ मातहती मे काम करने के लिए आदमी भी काफी तौर पर दिए गये।

इनके अतिरिक्त और लोगो को भी तरह-तरह के काम सुपुर्द किए गए और सब कोई बडी खूबी के साथ अपना-अपना काम करने लगे।

अब हम थोडा-सा हाल कुँअर इन्द्रजीतसिंह का बयान करेंगे, जिन्हे इस बात का बहुत ही रज है कि कमलिनी की शादी किसी दूसरे के साथ हो गई, और वे उम्मीद ही मे बैठे रह गये।

रात पहर भर से ज्यादा,जा चुकी है और कुँअर इन्द्रजीतसिंह अपने कमरे मे बैठे भैरोसिंह से धीरे-धीरे बाते कर रहे है। इन दोनो के सिवाय कोई तीसरा आदमी इस कमरे मे नही है और कमरे का दरवाजा भी भिडवाया हुआ है।

भैरोसिंह—तो आप साफ-साफ कहते क्यो नही कि आपकी उदासी का सबब क्या है? आपको तो आज खुश होना चाहिए, कि जिस काम के लिए आप बरसो परेशान रहे, जिसकी उम्मीद मे तरह-तरह की तकलीफ उठाई, जिसके लिए हथेली पर जान रखकर बडे-बडे दुश्मनो से मुकाबला करना पडा और जिसके होने या मिलने पर ही तमाम दुनिया की खुशी समझी जाती थी, आज वही काम आपकी इच्छानुसार हो रहा है, और उसी खुशी के साथ आपकी शादी का इन्तजाम हम अपनी आँखो से देख रहे हैं, फिर भी ऐसी अवस्था मे आपको उदास देखकर कौन ऐसा है जो ताज्जुब न करेगा?

इन्द्रजीतसिंह—वेशक, मेरे लिए आज यह बडी खुशी का दिन है, और मैं खुश हूँ भी, मगर कमलिनी की तरफ से जो रज मुझे हुआ है, उसे हजार कोशिश करने पर भी मेरा दिल बर्दाश्त नही कर पाता।

भैरोसिंह—(ताज्जुब का चेहरा बनाकर) हैं, कमलिनी की तरफ से और आपको रज! जिसके अहसानो के बोझ से आप दबे हुए हैं, उसी कमलिनी से रज! यह आप क्या कह रहे हैं?

इन्द्रजीतसिंह—इस बात को तो मैं खुद ही कह रहा हूँ, कि उसके अहसानो के बोझ से मैं जिन्दगी-भर हलका नही हो सकता और अब तक उसके जी मे मेरी भलाई का ध्यान बँधा ही हुआ है, मगर रंज इस बात का है कि अब मैं उसे उस मुहब्बत की निगाह से नही देख सकता जिसमे पहले देखता था।

भैरोसिंह—सो क्यो? क्या इसलिए कि अब वह अपनी ससुराल चली जायेगी, और फिर उसे आप पर अहसान करने का मौका न मिलेगा?

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, करीब-करीब यही बात है।

भैरोसिंह—मगर अब आपको उसकी मदद की जरूरत भी तो नही है। हाँ, इस बात का खयाल बेशक हो सकता है कि अब आप उसके तिलिस्मी मकान पर कब्जा न कर सकेंगे।

इन्द्रजीतसिंह—नही-नही, मुझे इस बात की कुछ जरूरत नही है, और न इसका कुछ खयाल ही है!

भैरोसिंह—तो इस बात का खयाल है कि उसने अपनी शादी मे आपको न्यौता नही दिया? मगर वह एक हिन्दू लडकी की हैसियत से ऐसा कर भी तो नही सकती थी! हाँ, इस बात की शिकायत आप राजा गोपालसिंहजी से जरूर कर सकते है, क्योंकि उस काम के कर्ता-धर्ता वे ही हैं।

इन्द्रजीतसिंह—उनसे तो मुझे बहुत ही शिकायत है, मगर मैं शर्म के मारे कुछ कह नहीं सकता।

भैरोसिंह—(चौंककर) शर्म तो तब होती, जब आप इस बात की शिकायत करते कि मैं खुद उससे शादी करना चाहता था।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, बात तो ऐसी ही है। (मुस्कराकर) मगर तुम तो पागलो की-सी बातें करते हो।

भैरोसिंह—(हँसकर) यह कहिए न कि आप दोनो हाथ लड्डू चाहते थे! तो इस चोर को आप इतने दिनो तक छिपाए क्यो रहे?

इन्द्रजीतसिंह—तो यही कब उम्मीद हो सकती थी कि इस तरह यकायक गुमसुम उसकी शादी हो जायेगी।

भैरोसिंह—खैर, अब तो जो कुछ होना था सो हो गया, मगर आपको इस बात का खयाल न करना चाहिए। इसके अतिरिक्त क्या आप समझते हैं, कि किशोरी इस बात को पसन्द करती? कभी नही, बल्कि आये दिन का झगडा पैदा हो जाता।

इन्द्रजीतसिंह—नही, किशोरी से मुझे ऐसी उम्मीद नही हो सकती। खैर, अब इस विषय पर बहस करना व्यर्थ है, मगर मुझे इसका रंज जरूर है। अच्छा, यह तो बताओ, तुमने उन्हे देखा है जिनके साथ कमलिनी की शादी हुई?

भैरोसिंह—कई दफे, बातें भी अच्छी तरह कर चुका हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—कैसे हैं?

भैरोसिंह—बडे लायक, पढे-लिखे, पण्डित, बहादुर, दिलेर, हँसमुख और सुन्दर।

इस अवसर पर आवेंगे ही, आप भी देख लीजिएगा। आपने कमलिनी से इस बारे मे कुछ बातचीत नही की ?

इन्द्रजीतसिंह—इधर तो नही, मगर तिलिस्म की सैर को जाने से पहले मुलाकात हुई थी, उसने खुद मुझे बुलाया था, बल्कि उसी की जुबानी उसकी शादी का हाल मुझे मालूम हुआ था। मगर उसने मेरे साथ विचित्र ढग का बर्ताव किया।

भैरोसिंह—सो क्या ?

इन्द्रजीतसिंह—(जो कुछ कैफियत हो चुकी थी, उसे बयान करने के बाद)तुम इस बर्ताव को कैसा समझते हो ?

भैरोसिंह—बहुत अच्छा और उचित।

इसी तरह की बातचीत हो रही थी कि पहले दिन की तरह बगल वाले कमरे का दरवाजा खुला, और एक लौंडी ने आकर सलाम करने के बाद कहा, "कमलिनीजी आपसे मिलना चाहती हैं, आज्ञा हो तो •।"

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा, मैं चलता हूं, तू दरवाजा बन्द कर दे।

भैरोसिंह—अब मैं भी जाकर आराम करता हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—अच्छा, जाओ, फिर कल देखा जायेगा।

लौडी—इनसे (भैरोसिंह से) भी उन्हे कुछ कहना है।

यह कहती हुई लौंडी ने दरवाजा बन्द कर दिया, तब तक स्वय कमलिनी इस कमरे मे आ पहुँची, और भैरोसिंह की तरफ देखकर बोली, (जो उठकर बाहर जाने के लिए तैयार था) "आप कहाँ चले ? आप ही से तो मुझे बहुत-सी शिकायत करनी है।"

भैरोसिंह—सो क्या ?

कमलिनी—अब उसी कमरे मे चलिये, वही बातचीत होगी।

इतना कहकर कमलिनी ने कुमार का हाथ पकड लिया, और अपने कमरे की तरफ ले चली, पीछे-पीछे भैरोसिंह भी गये। लौडी दरवाजा बन्द करके दूसरी राह से बाहर चली गई और कमलिनी ने इन दोनो को उचित स्थान पर बैठाकर पानदान आगे रख दिया और भैरोसिंह से कहा, "आप लोग तिलिस्म की सैर कर आये और मुझे पूछा भी नही।"

भैरोसिंह—महाराज खुद कह चुके है कि शादी के बाद औरतो को भी तिलिस्म की सैर करा दी जाये और फिर तुम्हारे लिए तो कहना ही क्या है। तुम तो जब भी चाहो, तभी तिलिस्म की सैर कर सकती हो।

कमलिनी—ठीक है, मानो यह मेरे हाथ की बात है।

भैरोसिंह—ऐसा ही है।

कमलिनी—(हँसकर) टालने के लिए यह अच्छा ढग है। खैर, जाने दीजिये, मुझे कुछ ऐसा शौक भी नही है। हाँ, यह बताइए कि वहाँ क्या-क्या कैफियत देखने मे आई ? मैंने सुना कि भूतनाथ वहाँ बडे चक्कर मे पड गया था और उसकी पहली स्त्री भी वहाँ दिखाई पड गई।

भैरोसिंह—बेशक ऐसा ही हुआ।

इतना कहकर भैरोसिंह ने कुल हाल खुलासा बयान किया और इसके बाद कमलिनी ने इन्द्रजीतसिंह से कहा, "खैर, आप बताइए कि शादी की खुशी मे मुझे क्या इनाम मिलेगा ?"

इन्द्रजीतसिंह—(हँसकर) गालियो के सिवाय और किसी चीज की तुम्हे कमी ही क्या है जो मैं दूँ ?

कमलिनी—(भैरोसिंह से)सुन लीजिये, मेरे लिए कैसा अच्छा इनाम सोचा गया है ! (कुमार से हँसकर) याद रखियेगा, इस जवाब के बदले मैं आपको ऐसा छकाऊँगी कि खुश हो जाइयेगा !

भैरोसिंह—इन्हें तो तुम छका चुकी हो, अब इससे बढकर क्या होगा कि चुपचाप दूसरे के साथ शादी कर ली, और इन्हे अँगूठा दिखा दिया। अब तुम्हे ये गालियाँ न दें तो क्या करें !

कमलिनी—(मुस्कराती हुई) आपकी राय भी यही है ?

भैरोसिंह—बेशक !

कमलिनी—तो बेचारी किशोरी के साथ आप यह अच्छा सलूक करते हैं !

भैरोसिंह—इसका इल्जाम तो कुमार के ऊपर हो सकता है !

कमलिनी—हाँ, साहब, आज के मर्दों की मुरौवत जो कुछ न कर दिखाए थोडा है मैं किशोरी बहिन से इसका जिक्र करूँगी।

भैरोसिंह—तब तो अहसान पर अहसान करोगी।

इन्द्रजीतसिंह—(भैरोसिंह से) तुम भी व्यर्थ की छेडछाड मचा रहे हो, भला इन बातो से क्या फायदा ?

भैरोसिंह—ब्याह-शादी मे ऐसी बातें हुआ ही करती हैं !

इन्द्रजीतसिंह—तुम्हारा सिर हुआ करता है !(कमलिनी से)अच्छा, यह बताओ कि इस समय तुमने मुझे क्यो याद किया ?

कमलिनी—हरे राम ! अब क्या मैं ऐसी भारी हो गई कि मुझसे मिलना भी बुरा मालूम होता है ?

इन्द्रजीतसिंह—नही-नही, अगर मिलना बुरा मालूम होता तो मैं यहाँ आता ही क्यो ? पूछता हूँ कि आखिर कोई काम भी है या • ?

कमलिनी—हाँ, है तो सही।

इन्द्रजीतसिंह—कहो !

कमलिनी—आपको शायद मालूम होगा कि मेरे पिता जब से यहाँ आये हैं, उन्होंने अपने खाने-पीने का इन्तजाम अलग रखा है, अर्थात् आपके यहाँ का अन्न नही खाते और न कुछ अपने लिए खर्च कराते हैं।

इन्द्रजीतसिंह—हाँ, मुझे मालूम है।

कमलिनी—अब उन्होने इस मकान मे रहने से भी इनकार किया है। उनके एक मित्र ने खेमे वगैरह का इन्तजाम कर दिया है, और वे उसी मे अपना डेरा उठाकर

जाने वाले हैं।

इन्द्रजीतसिंह—यह भी मालूम है।

कमलिनी—मेरी इच्छा है कि यदि आप आप आज्ञा दे, तो लाडिली को साथ लेकर मैं भी उनी डेरे मे चली जाऊँ।

इन्द्रजीतसिंह—क्यो ? तुम्हे यहाँ रहने मे परहेज ही क्या हो सकता है ?

कमलिनी—नही-नही, मुझे किस बात का परहेज होगा, मगर यो ही जी चाहता है कि मैं दो-चार दिन अपने बाप के साथ ही रहकर उनकी खिदमत करूँ।

इन्द्रजीतसिंह—यह दूसरी बात है, इसकी इजाजत तुम्हे अपने मालिक से लेनी चाहिए। मैं कौन हूँ जो इजाजत दूँ ?

कमलिनी—इस समय वे तो यहाँ है, नही अत उनके बदले मे मैं आप ही को अपना मालिक समझती हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—(मुस्कराकर) फिर तुमने वही रास्ता पकडा ? खैर, मै इस बात की इजाजत न दूंगा।

कमलिनी—तो मै आज्ञा के विरुद्ध कुछ न करूँगी।

इन्द्रजीतसिंह—(भैरोसिह मे) इनकी बातचीत का ढग देखते हो ?

भैरोसिह—(हंसकर) शादी हो जाने पर भी ये आपको नही छोडना चाहती, तो मैं क्या करूँ ?

कमलिनी—अच्छा, मुझे एक बात की इजाजत तो जरूर दीजिए।

इन्द्रजीतसिंह—वह क्या ?

कमलिनी—आपकी शादी मे मैं आपसे एक विचित्र दिल्लगी करना चाहती हूँ।

इन्द्रजीतसिंह—वह कौन-सी दिल्लगी होगी ?

कमलिनी—यह बता दूंगी तो उसमे मजा ही क्या रह जायेगा ? बस, आप इतना कह दीजिए कि उस दिल्लगी से रज न होगे, चाहे वह कैसी गहरी क्यो न हो।

इन्द्रजीतसिंह—(कुछ सोचकर) खैर, मैं रज न करूँगा।

इसके बाद थोडी देर तक हँसी की बातें होती रही, और फिर सब उठकर अपने-अपने ठिकाने चले गये।

12

ब्याह की तैयारी और हँसी-खुशी मे ही कई सप्ताह बीत गये और किसी को कुछ मालूम न हुआ। हाँ, कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को खुशी के साथ ही रज और उदासी से भी मुकाबला करना पडा। यह रज और उदासी क्यो ? शायद कमलिनी और लाडिली के सबब से हो। जिस तरह कुँअर इन्द्रजीतसिंह कमलिनी से मिलकर और उनकी जुबानी उनके ब्याह का हो जाना सुनकर दुःखी हुए, उसी तरह आनन्दसिंह को भी लाडिली

से मिलकर दु खी होना पडा या नही सो हम नही कह सकते क्योंकि लाडिली मे और आनन्दसिंह मे जो बातें हुईं, उसमे और कमलिनी की बातो मे बडा फर्क है। कमलिनी ने तो खुद इन्द्रजीतसिंह को अपने कमरे मे बुलवाया था, मगर लाडिली ने ऐसा नही किया। लाड़िली का कमरा भी आनन्दसिंह के कमरे के बगल मे ही था। जिस रात कमलिनी मे और इन्द्रजीतसिंह मे दूसरी मुलाकात हुई थी, उसी रात को आनन्दसिंह ने भी अपने बगल वाले कमरे मे लाड़िली को देखा था, मगर दूसरे ढंग से। आनन्दसिंह अपने कमरे मे मसहरी पर लेटे हुए तरह-तरह की बातें सोच रहे थे कि उसी समय बगल वाले कमरे मे से कुछ खटके की आवाज आई जिससे आनन्दसिंह चौंके और उन्होंने घूमकर देखा तो उस कमरे का दरवाजा कुछ खुला हुआ नजर आया। इन्हे यह जरूर मालूम था कि हमारे बगल ही मे लाडिली का कमरा है, और उससे मिलने की नीयत से इन्होंने कई दफे दरवाजा खोलना भी चाहा था, मगर बन्द पाकर लाचार हो गये थे। अब दरवाजा खुला पाकर बहुत खुश हुए और मसहरी पर से उठकर धीरे-धीरे दरवाजे के पास गये। हाथ के सहारे दरवाजा कुछ विशेष खोला और अन्दर की तरफ झाँककर देखा। लाडिली पर निगाह पडी जो एक शमादान के आगे बैठी हुई कुछ लिख रही थी। शायद उसे इस बात की कुछ खबर ही न थी कि मुझे कोई देख रहा है।

भीतर सन्नाटा पाकर अर्थात् किसी गैर को न देखकर आनन्दसिंह बेधडक कमरे के अन्दर चले गये। पैर की आहट पाते ही लाडिली चौंकी तथा आनन्दसिंह को अपनी तरफ आते देख उठ खडी हुई और बोली, "आपने दरवाजा कैसे खोल लिया?"

आनन्दसिंह—(मुस्कराते हुए) किसी हिकमत से।

लाडिली—क्या आज के पहले वह हिकमत मालूम न थी? शायद सफाई के लिए किसी लौंडी ने दरवाजा खोला हो और बन्द करना भूल गई हो।

आनन्दसिंह—अगर ऐसा ही हो तो क्या कुछ हर्ज है?

लाड़िली—नही, हर्ज काहे का है, मैं तो खुद ही आपसे मिलना चाहती थी, मगर लाचारी

आनन्दसिंह—लाचारी कैसी? क्या किसी ने मना कर दिया था?

लाडिली—मना ही समझना चाहिए, जबकि मेरी बहिन कमलिनी ने जोर देकर कह दिया कि "या तो तू मेरी इच्छानुसार शादी कर ले या इस बात की कसम खा जा कि किसी गैर मर्द से कभी बातचीत न करेगी।" जिस समय उनकी (कमलिनी की) शादी होने लगी थी, उस समय भी लोगो ने मुझ पर शादी कर लेने के लिए दबाव डाला था, मगर मैं इस समय जैसी हूँ, वैसी ही रहने के लिए कसम खा चुकी हूँ। मतलब यह है कि इसी बखेडे मे मुझमे और उनमे कुछ तकरार भी हो गई है।

आनन्दसिंह—(घबराहट और ताज्जुब के साथ) क्या कमलिनीजी की शादी हो गई?

लाडिली—जी हाँ।

आनन्दसिंह—किसके साथ?

लाडिली—सो तो मैं नही कह सकती, आपको खुद मालूम हो जायेगा।

आनन्दसिंह—यह बहुत बुरा हुआ।

लाडिली—बेशक, बहुत बुरा हुआ, मगर क्या किया जाये! जीजाजी (गोपालसिंह) की मर्जी ही ऐसी थी, क्योंकि किशोरी ने ऐसा करने के लिए उन पर बहुत जोर डाला था, अत कमलिनी बहिन दबाव मे पड गईं, मगर मैंने साफ इनकार कर दिया, कि जैसी हूँ वैसी ही रहूँगी।

आनन्दसिंह—तुमने बहुत अच्छा किया।

लाडिली—और मैं ऐसा करने के लिए सख्त कसम खा चुकी हूँ।

आनन्दसिंह—(ताज्जुब से) क्या तुम्हारे इस कहने का यह मतलब लगाया जाय कि अब तुम शादी करोगी ही नही?

लाडिली—बेशक!

आनन्दसिंह—यह तो कोई अच्छी बात नही!

लाडिली—जो हो, अब तो मैं कसम खा चुकी हूँ और बहुत जल्द यहाँ से चली जाने वाली भी हूँ, सिर्फ कामिनी बहिन की शादी हो जाने का इन्तजार कर रही हूँ।

आनन्दसिंह—(कुछ सोचकर) कहाँ जाओगी?

लाडिली—आप लोगो की कृपा से अब तो मेरा बाप भी प्रकट हो गया है, अब इसकी चिन्ता ही क्या है?

आनन्दसिंह—मगर जहाँ तक मैं समझता हूँ, तुम्हारे बाप तुम्हें शादी करने के लिए जरूर जोर देंगे।

लाडिली—इस विषय मे उनकी कुछ न चलेगी।

लाडिली की बातो से आनन्दसिंह को ताज्जुब के साथ-ही-साथ रज भी हुआ और ज्यादा रज तो इस बात का था कि अब तक लाडिली ने खडे-ही-खडे बातचीत की और कुमार को बैठने तक के लिए नही कहा। शायद इसका यह मतलब हो कि 'मैं ज्यादा देर तक आपसे बात नही कर सकती।' अत आनन्दसिंह को क्रोध और दु ख के साथ लज्जा ने भी घर दबाया और वे यह कहकर कि 'अच्छा मैं जाता हूँ' अपने कमरे की तरफ लौट चले।

आनन्दसिंह के दिल मे जो बातें घूम रही थी, उनका अन्दाजा शायद लाडिली को भी मिल गया और जब वे लौटकर जाने लगे तब उसने पुन इस ढग पर कहा मानो उसकी आखिरी बात अभी पूरी नही हुई थी—"क्योंकि जिनकी मुझ पर कृपा रहती थी, अब वे और ही ढग के हो गए।'

इस बात ने कुमार को तरद्दुद मे डाल दिया। उन्होने घूमकर एक तिरछी निगाह लाडिली पर डाली और कहा, "इसका क्या मतलब?"

लाडिली—सो कहने की सामर्थ्य मुझ मे नही है। हाँ, जब आपकी शादी हो जायगी तब मैं साफ-साफ आपसे कह दूँगी। उस समय जो कुछ आप राय देंगे, उसे मैं कबूल भी कर लूँगी।

इस आखिरी बात से कुमार को कुछ हिम्मत बँध गई, मगर बैठने की या और कुछ कहने की हिम्मत न पडी और 'अच्छा' कहकर वे वे अपने कमरे मे चले आये।

13

विवाह का सब सामान ठीक हो गया, मगर हर तरह की तैयारी हो जाने पर भी लोगो की मेहनत मे कमी नही हुई। सब कोई उसी तरह दौड-धूप और काम-काज मे लगे हुए दिखाई दे रहे हैं। महाराज सुरेन्द्रसिंह सभी को लिए हुए चुनारगढ चले गए। अब इस तिलिस्मी मकान मे सिर्फ जरूरत की चीजो के ढेर और इन्तजामकार लोगो के डेरे भर ही दिखाई दे रहे हैं। इस मकान मे से उन लोगो के लिए भी रास्ता बनाया गया है जो हँसते-हँसते उस तिलिस्मी इमारत मे कूदा करेंगे जिसके बनाने की आज्ञा इन्द्रदेव को दी गई थी और जो इस समय बनकर तैयार हो गई है।

यह इमारत बीस गज लम्बी और इतनी ही चौडी थी। ऊँचाई इसकी लगभग चालीस हाथ से कुछ ज्यादा होगी। चारो तरफ की दीवार साफ और चिकनी थी तथा किसी तरफ कोई दरवाजे का निशान दिखाई नही देता था। पूरब की तरफ ऊपर चढ जाने के लिए छोटी सीढियाँ बनी हुई थी जिनके दोनो तरफ हिफाजत के लिए लोहे के सीखचे लगा दिए गये थे। उसी पूरब की तरफ वाली दीवार पर बडे-बडे हरफो मे यह भी लिखा हुआ था—

"जो आदमी इन सीढियो की राह ऊपर जायगा और एक नजर अन्दर की तरफ झाँक वहाँ की कैफियत देखकर इन्ही सीढियो की राह नीचे उतर आवेगा, उसे एक लाख रुपये इनाम मे दिए जायेंगे।"

इस इमारत ने चारो तरफ एक अनूठा रग पैदा कर दिया था। हजारो आदमी उस इमारत के ऊपर चढ जाने के लिए तैयार थे और हर एक आदमी अपनी-अपनी लालसा पूरी करने के लिए जल्दी मचा रहा था, मगर सीढी का दरवाजा बन्द था। पहरेदार लोग किसी को ऊपर जाने की इजाजत नही देते थे और यह कह कर सभी को सन्तोष करा देते थे कि बारात वाले दिन यह दरवाजा खुलेगा और पन्द्रह दिन तक बन्द न होगा।

यहाँ से चुनारगढ की सडक के दोनो तरफ जो सजावट की गई थी, उसमे भी एक अनूठापन था। दोनों तरफ रोशनी के लिए जाफरी बनी हुई थी और उनमे अच्छे-अच्छे नीति के श्लोक दरसाए गये थे। बीच-बीच मे थोडी-थोडी दूर पर नौबतखाने के बगल मे एक-एक मचान था जिस पर एक या दो कैदियो के बैठने के लिए जगह बनी हुई थी। जाफरी के दोनो तरफ दस हाथ चौडी जमीन मे बाग का नमूना तैयार किया गया था और इसके बाद आतिशबाजी लगाई गई थी। आध-आध कोस की दूरी पर सर्व-साधारण और गरीब तमाशबीनो के लिए महफिल तैयार की गई थी और उसके लिए अच्छी-अच्छी गाने वाली रडियाँ और भाँड मुकर्रर किए गए थे। रात अँधेरी होने के कारण रोशनी का सामान ज्यादा तैयार किया गया था और वह तिलिस्मी चन्द्रमा[1] जो

---

1. देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति इक्कीसवाँ भाग, आठवाँ बयान।

दोनो राजकुमारो को तिलिस्म के अन्दर से मिला था, चुनारगढ किले के ऊँचे कँगूरे पर लगा दिया गया था जिसकी रोशनी इस तिलिस्मी मकान तक वडी खूवी और सफाई के साथ पड रही थी।

पाठक, दोनो कुमारो की वारात की सजावट, महफिलो की तैयारी, रोशनी और आतिशवाजी की खूवी, मेहमानदारी की तारीफ और खैरात की वहुतायत इत्यादि का हाल विस्तारपूर्वक लिखकर पढने वालो का समय नष्ट करना हमारी आत्मा और आदत के विरुद्ध है। आप खुद समझ सकते हैं कि दोनो कुमारो की शादी का इन्तजाम किस खूवी के साथ किया गया होगा, नुमाइश की चीजे कैसी अच्छी होगी, वडप्पन का कितना वडा खयाल किया गया, और वारात किस धूमधाम से निकली होगी। हम आज तक जिस तरह सक्षेप मे लिखते आए हैं अव भी उसी तरह लिखेंगे, तथापि हमारी उन लिखावटो से जो व्याह के सम्वन्ध मे ऊपर कई दफे मौके-मौके पर लिखी जा चुकी हैं आपको अन्दाज के साथ-साथ अनुमान करने का हौसला भी मिल जायगा और विशेष सोच-विचार की जरूरत न रहेगी। हम इस जगह पर केवल इतना ही लिखेंगे कि—

वारात वडे धूम-धाम से चुनारगढ के वाहर हुई। आगे-आगे नौवत, निशान और उसके वाद सिलसिले से फौजी सवार, पैदल और तोपखाने वगैरह थे, जिसके वाद ऐसी फुलवारियाँ थी जिनके देखने से खुशी और लूटने से दौलत हासिल हो। इसके वाद वडे सजे हुए अम्वारीदार हाथी पर दोनो कुमार हाथी पर ही सवार अपने वडे वुजुर्गो, रिश्तेदारो और मेहमानो से घिरे हुए धीरे-धीरे दोतर्फी वहार लूटते और दुश्मनो के कलेजो को जलाते हुए जा रहे थे और उनके वाद तरह-तरह की सवारियो और घोडो पर वैठे हुए वडे-वडे सरदार लोग दिखाई दे रहे थे। अन्त मे फिर फौजी सिपाहियो का सिलसिला था। आगे वाले नौवत-निशान से लेकर कुमारो के हाथी तक कई तरह के वाजे वाले अपने मौके से अपना इल्म और हुनर दिखा रहे थे।

कुशलपूर्वक वारात ठिकाने पहुँची और शास्त्रानुसार कर्म तथा रीति होने के वाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह का विवाह किशोरी से और आनन्दसिंह का कामिनी के साथ हो गया और इस काम मे रणधीरसिंह ने भी वित्त के अनुसार दिल खोलकर खर्च किया। दूसरे रोज पहर भर दिन चढने के पहले ही दोनो वहुओ की रुखसती कराके महाराज चुनार की तरफ लौट पडे।

चुनारगढ पहुँचने पर जो कुछ रस्मे थी वे पूरी होने लगी और मेहमान तथा तमाशवीन लोग तरह-तरह के तमाशो और महफिलो का आनन्द लूटने लगे। उधर तिलिस्मी मकान की सीढियो पर लाख रुपया इनाम पाने की लालसा से लोगो ने चढना आरम्भ किया। जो कोई दीवार के ऊपर पहुँचकर अन्दर की तरफ झाँकता, वह अपने दिल को किसी तरह न सम्हाल सकता और एक दफे खिलखिलाकर हँसने के वाद अन्दर की तरफ कूद पडता तथा कई घण्टे के वाद उस चवूतरे वाली वहुत वडी तिलिस्मी इमारत की राह से वाहर निकल जाता।

वस, विवाह का इतना ही हाल सक्षेप मे लिखकर अव हम इस वयान को पूरा करते है और इसके वाद सोहागरात की एक वहुत ही अनूठी घटना का उल्लेख करके

इस बाईसवे भाग को समाप्त करेंगे क्योकि हम दिलचस्प घटनाओ का लिखना ही पसन्द करते हैं।

14

आज कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की खुशी का कोई ठिकाना नही है क्योकि तरह-तरह की तकलीफें उठाकर एक मुद्दत के बाद इन दोनो को दिली मुरादे हासिल हुई है।

रात आधी से कुछ ज्यादा जा चुकी है और एक सुन्दर सजे हुए कमरे मे ऊँची और मुलायम गद्दी पर किशोरी और कुँअर इन्द्रजीतसिंह बैठे हुए दिखाई देते हैं। यद्यपि कुँअर इन्द्रजीतसिंह की तरह किशोरी के दिल मे भी तरह-तरह की उमगे भरी हुई है और वह आज इस ढग पर कुँअर इन्द्रजीतसिंह की पहली मुलाकात को सौभाग्य का कारण समझती हैं मगर उस अनोखी लज्जा के पाले मे पडी हुई किशोरी का चेहरा घूँघट की ओट से बाहर नही होता जिसे प्रकृति अपने हाथो से औरत की बुद्धि मे जन्म ही से दे देती है। यद्यपि आज से पहले कुँअर इन्द्रजीतसिंह को कई दफे किशोरी देख चुकी है और उनसे बाते भी कर चुकी है तथापि आज पूरी स्वतन्त्रता मिलने पर भी एकायक सूरत दिखाने की हिम्मत नही पडती। कुमार तरह-तरह की बाते कहकर और समझाकर उसकी लज्जा दूर किया चाहते हैं मगर कृतकार्य नही होते। बहुत-कुछ कहने-सुनने पर कभी-कभी किशोरी दो-एक शब्द बोल देती है मगर वह भी धडकते हुए कलेजे के साथ। कुमार ने सोच लिया कि यह स्त्रियो की प्रकृति है अतएव उसके विरुद्ध जोर न देना चाहिए, यदि इस समय इसकी हिम्मत नही खुलती तो क्या हुआ, घण्टे-दो-घण्टे, पहरदो-पहर या एक-दो दिन मे खुल ही जायगी! आखिर ऐसा ही हुआ।

इसके बाद किस तरह की छेडछाड शुरू हुई या क्या हुआ, सो हम नही लिख सकते, हाँ उस समय का हाल जरूर लिखेंगे, जब धीरे-धीरे सुबह की सफेदी आसमान पर फैलने लग गई थी और नियमानुसार प्रात काल बजाई जाने वाली नफीरी की आवाज ने कुँअर इन्द्रजीतसिंह और किशोरी को नीद से जगा दिया था। किशोरी जो कुँअर इन्द्रजीतसिंह के बगल मे सोई हुई थी, घबरा कर उठ बैठी और मुँह धोने तथा बिखरे बालो को सुधारने की नीयत से उस सुनहरी चौकी की तरफ बढी, जिस पर सोने के बर्तन मे गगाजल भरा हुआ था और जिसके पास ही जल गिराने के लिए एक बडा-सा चाँदी का आफताबा भी रखा हुआ था। हाथ मे जल लेकर चेहरे पर लगाने और पुन अपना हाथ देखने के साथ ही किशोरी चौंक पडी और घबरा कर बोली, "है! यह क्या मामला है?"

इन शब्दो ने इन्द्रजीतसिंह को चौंका दिया। वे घबडा कर किशोरी के पास चले गए और पूछा, "क्यो, क्या हुआ?"

किशोरी—मेरे साथ यह क्या दिल्लगी की गई है ?"

इन्द्रजीतसिंह—कुछ कहो भी तो क्या हुआ ?

किशोरी—(हाथ दिखा कर) देखिए यह रग कैसा है, जो चेहरे पर से पानी लगने के साथ ही छूट रहा है।

इन्द्रजीतसिंह—(हाथ देख कर) हाँ है तो सही। मगर मैंने तो कुछ भी नहीं किया, तुम खुद सोच सोच सकती हो कि मैं भला तुम्हारे चेहरे पर रग क्यो लगाने लगा, मगर तुम्हारे चेहरे पर यह रग आया ही कहाँ से ?

किशोरी—(पुन चेहरे पर जल लगाकर) यह देखिए, है या नही।

इन्द्रजीतसिंह—सो तो मै खुद कह रहा हूँ कि रग जरूर है, मगर जरा मेरी तरफ देखो तो सही।

किशोरी ने जो अव समयानुकूल लज्जा के हाथो से छूट कर ढिठाई का पल्ला पकड चुकी थी और जो कई घण्टो की कशमकश और चाल-चलन की बदौलत बातचीत करने लायक समझी जाती थी, कुमार की तरफ देखा और फिर कहा, "देखिए और कहिए, यह किसकी सूरत है ?"

इन्द्रजीतसिंह—(और भी हैरान होकर) बडे ताज्जुब की बात है। और इस रग छूटने से तुम्हारा चेहरा भी कुछ बदला हुआ सा मालूम पडता है। अच्छा, जरा अच्छी तरह से मुँह धो डालो।

किशोरी ने 'अच्छा' कह मुँह धो डाला और रूमाल से पोछने के बाद कुमार की तरफ देख कर बोली, "बताइए, अब कैसा मालूम पडता है ? रग अब छूट गया या अभी नही ?"

इन्द्रजीतसिंह—(घबराकर) हैं। अब तो तुम साफ कमलिनी मालूम पडती हो। यह क्या मामला है ?

किशोरी—मैं कमलिनी तो नही हुई हूँ। क्या पहले कोई दूसरी मालूम पडती थी ?

इन्द्रजीतसिंह—बेशक। पहले तुम किशोरी मालूम पडती थी, कम रोशनी और कुछ लज्जा के कारण यद्यपि बहुत अच्छी तरह तुम्हारी सूरत रात को देखने मे नही आई, तथापि मौके-मौके पर कई दफे निगाह पड ही गई थी। अत किशोरी के सिवाय दूसरी औरत होने का गुमान भी नहीं हो सकता था। मगर सच तो यह है कि तुमने मुझे बडा धोखा दिया।

कमलिनी—(जिसे अब इसी नाम से लिखना उचित है) मैंने धोखा नही दिया, बल्कि आप मुझे इस बात का जवाब तो दीजिए कि अगर आपने मुझे किशोरी समझा था तो इतनी ढिठाई करने की हिम्मत कैसे पडी ? क्योकि किशोरी आपकी स्त्री नही थी।

इन्द्रजीतसिंह—क्या पागलपने की-सी बाते कर रही हो। अगर किशोरी मेरी स्त्री नहीं थी तो क्या तुम मेरी स्त्री थी ?

कमलिनी—अगर आपने मुझे किशोरी समझा था तो आपको मेरे पास से उठ जाना चाहिए था। जब कि आप जानते है कि किशोरी कुमार के साथ ब्याही गई है तो

आपको उसके पास बैठने या उससे बातचीत करने का क्या हक था ?

इन्द्रजीतसिंह—तो क्या मैं इन्द्रजीत नही हूँ ? बल्कि उचित तो यह था कि तुम मेरे पास से उठ जाती। जब तुम कमलिनी थी तो तुम्हे पराये मर्द के पास बैठना भी न चाहिए था।

कमलिनी—(ताज्जुब और कुछ क्रोध का चेहरा बना कर) फिर आप वही बातें कहे जाते हैं ? आप अपने को समझ ही क्या रहे हैं ? पहले आप आईने मे अपनी सूरत देखिए और तब कहिए कि आप किशोरी के पति हैं या कमलिनी के। (आले पर से आईना उठा और कुमार को दिखाकर) अब बताइये, आप कौन है ? और मैं क्यो आपके पास से उठ जाती ?

अब तो कुमार के ताज्जुब की कोई हद न रही, क्योकि आईने मे उन्होने अपनी सूरत मे फर्क पाया। यह तो नही कह सकते थे कि किस आदमी की सूरत मालूम पडती है। क्योकि ऐसे आदमी को कभी देखा भी न था, मगर इतना जरूर कह सकते थे कि सूरत बदल गई और अब मैं इन्द्रजीतसिंह नही मालूम पडता। इन्द्रजीत सिंह समझ गए कि किसी ने मेरे और कमलिनी के साथ चालबाजी करके दोनो का धर्म नष्ट किया और इसमे बेचारी कमलिनी का कोई कसूर नही है। मगर फिर भी कमलिनी को आज का सामान देख कर चौंकना चाहिए था। हाँ, ताज्जुब की बात यह है कि इस घर मे आने के पहले मुझे किसी ने टोका भी नही ! तो क्या इस घर मे आने के बाद मेरी सूरत बदली गई ? मगर ऐसा भी क्योकर हो सकता है ?—इत्यादि बातें सोचते हुए कुमार कमलिनी का मुँह देखने लगे। कमलिनी ने आईना हाथ से रख दिया और पूछा, "अब बताइये, आप कौन हैं ?" इसके जवाब मे इन्द्रजीतसिंह ने कहा, "अब मैं भी अपना मुँह धो डालूं तो कहूँ।"

यह कहकर कुमार ने भी जल से अपना चेहरा साफ किया और रूमाल से पोछने के बाद कमलिनी की तरफ देखकर कहा—"अब तुम ही बताओ कि मैं कौन हूँ ?"

कमलिनी—अरे, यह क्या हुआ ! तुम तो बेशक बडे कुमार हो ? मगर तुमने मेरे साथ ऐसा क्यो किया ? तुम्हे जरा भी धर्म का विचार न हुआ ? बताओ, अब मैं किस लायक रह गई और क्या कर सकती हूँ ? लोगो को कैसे अपना मुँह दिखाऊँगी और इस दुनिया मे क्योकर रहूँगी ?

इन्द्रजीतसिंह—जिसने ऐसा किया वह बेशक मारे जाने लायक है। मैं उसे कभी न छोडूंगा क्योंकि ऐसा होने से मेरा भी धर्म नष्ट हुआ है। और इस बदमाशी को मैं कभी बर्दाश्त नही कर सकता, मगर यह तो बताओ कि आज का सामान देखकर तुम्हारे दिल मे किसी प्रकार का शक पैदा न हुआ ?

कमलिनी—क्योकर शक पैदा हो सकता था, जब कि आप ही की तरह मेरे लिए भी 'सोहागरात' आज ही तय गई थी ! मैं नही कह सकती थी कि दूसरी तरफ का क्या हाल है ! ताज्जुब नही कि जिस तरह मैं धोखे मे डाली गई, उसी तरह किशोरी के साथ भी बेईमानी की गई हो और आपके बदले मे किशोरी मेरे पति के पास पहुँचाई गई हो !

ओ हो ! कमलिनी की इस बात ने तो कुमार की रही-सही अक्ल भी खो दी !

जिस बात का अब तक कुमार के दिल मे ध्यान भी न था, उसे समझा कर तो कमलिनी ने अनर्थ कर दिया। ब्याह हो जाने पर भी किशोरी किसी दूसरे मर्द के पास भेजी जाय, क्या इस बात को कुमार बर्दाश्त कर सकते थे ? कभी नही ! सुनने के साथ ही मारे क्रोध के उनका शरीर काँपने लगा और वे घबरा कर कमलिनी से बोले, "यह तो तुमने ठीक कहा ! ताज्जुब नही कि ऐसा हुआ हो। लेकिन अगर ऐसा हुआ होगा तो मैं उन दोनो को इस दुनिया से उठा दूँगा !"

इतना कहकर कुमार ने अपनी तलवार उठा ली जो गद्दी पर पडी हुई थी और कमरे के बाहर जाने लगे। उस समय कमलिनी ने कुमार का हाथ पकड लिया और कहा, "कृपानिधान, जरा मेरी एक बात का जवाब दे दीजिये तो यहाँ से जाइये।"

इन्द्रजीतसिंह—कहो।

कमलिनी—आपका धर्म नष्ट हुआ, खैर, कोई चिन्ता नही, क्योकि धर्मशास्त्र मे मर्दो के लिए कोई कडी पाबन्दी नही लगाई गई है, मगर औरतो को तो किसी लायक नही छोडा है। आपके लिए तो प्रायश्चित्त है, मगर मेरे लिए तो कोई प्रायश्चित्त भी नही जिसे करके मैं सुधार जाऊँगी, इतना जानकर भी मेरा धर्म नष्ट होने पर आपको उतना रज या क्रोध नही हुआ, जितना यह सोच कर हुआ कि किशोरी की भी ऐसी ही दशा हुई होगी ! ऐसा क्यो ? क्या मेरा पति कमजोर और नामर्द है ? क्या वह भी आपकी ही तरह क्रोध मे न आया होगा ? क्या इसी तरह वह भी तलवार लेकर मेरी और आपकी खोज मे न निकला होगा ? आप जल्दी क्यो करते है, वह खुद यहाँ आता होगा क्योकि वह आपसे ज्यादा क्रोधी है, मैं तो खुद उसके सामने अपनी गर्दन झुका दूँगी !

कुमार को क्रोध-पर-क्रोध, रज-पर-रज और अफसोस-पर-अफसोस होता ही जाता था। कमलिनी की इस आखिरी बात ने कुमार के दिल मे दूसरा ही रग पैदा कर दिया। उन्होंने घबरा कर एक लम्बी साँस ली और ऊपर की तरफ मुँह करके कहा, "विधाता ! तूने यह क्या किया ? मैंने कौन-सा ऐसा पाप किया था, जिसके बदले मे इस खुशी को ऐसे रज के साथ तूने बदल दिया ! अब मैं क्या करूँ ? क्या अपने हाथ से अपना गला काटकर निश्चिन्त हो जाऊँ ? मुझ पर आत्मघात का दोष तो नही लगाया जायगा !"

इन्द्रजीतसिंह ने इतना ही कहा था कि कमरे का वह दरवाजा, जिसे कुमार बन्द समझते थे, खुला और किशोरी तथा कमला अन्दर आती हुई दिखाई पडी। कुमार ने समझा कि बेशक किशोरी इसी ढग का उलाहना लेकर आई होगी, मगर उन दोनो के चेहरो पर हँसी देख कर कुमार को ताज्जुब हुआ और यह देख कर उनका ताज्जुब और भी बढ गया कि किशोरी और कमला को देख कर कमलिनी खिलखिला कर हँस पडी और किशोरी से बोली—"लो बहिन, आज मैंने तुम्हारे पति को अपना बना लिया।" इसके जवाब मे किशोरी बोली, "तुमने पहले ही अपना बना लिया था, आज की बात ही क्या है !"

चन्द्रकान्ता सन्तति

तेईसवाँ भाग

1

सोहागरात के दिन कुंअर इन्द्रजीतसिंह जैसे तरद्दुद और फेर मे पड गये थे, ठीक वैसा तो नही मगर करीव उसी ढग का वखेडा कुंअर आनन्दसिंह के साथ भी मचा, अर्थात् उसी दिन रात के समय जव आनन्दसिंह और कामिनी का एक कमरे मे मेल हुआ तो आनन्दसिंह छेडछाड करके कामिनी की शर्म को तोडने और कुछ वातचीत करने के लिए उद्योग करने लगे मगर लज्जा और सकोच के वोझ से कामिनी हर तरह दवी जाती थी। आखिर थोडी देर की मेहनत, चालाकी तथा वुद्धिमानी की वदौलत आनन्द-सिंह ने अपना मतलव निकाल ही लिया और कामिनी भी, जो वहुत दिनो से दिल के खजाने मे आनन्दसिंह की मुहव्वत को हिफाजत के साथ छिपाये हुए थी, लज्जा और डर को विदाई का वीडा दे कुमार से वातचीत करने लगी।

जव रात लगभग दो घण्टे के वाकी रह गई तो कामिनी जाग पडी और घवराहट के साथ चारो तरफ देख के सोचने लगी कि कही सवेरा तो नही हो गया क्यों कि कमरे के सभी दरवाजे वन्द रहने के कारण आसमान दिखाई नहीं देता था। उस समय आनन्दसिंह गहरी नीद मे सो रहे थे और उनके खर्राटो की आवाज से मालूम होता था कि वे अभी दो-तीन घटे तक विना जगाये नही जाग सकते अत कामिनी अपनी जगह से उठी और कमरे की कई छोटी-छोटी खिडकियो (छोटे दरवाजो) मे से, जो मकान के पिछली तरफ पडती थी, एक खिडकी खोलकर आसमान की तरफ देखने लगी। इस तरफ से पतित-पावनी भगवती जाह्नवी की तरल तरगो की सुन्दर छटा दिखाई देती थी जो उदास से उदास और वुझे दिल को भी एक दफे प्रसन्न करने की सामर्थ्य रखती थी, परन्तु इस समय अधकार के कारण कामिनी उस छटा को नहीं देख सकती थी और इस सवव से आसमान की तरफ देखकर भी वह इस वात का पता न लगा सकी कि अव रात कितनी वाकी है, मगर सवेरा होने मे अभी देर है इतना जान कर उसके दिल को कुछ भरोसा हुआ। उसी समय सरकारी पहरे वाले ने घटा वजाया जिसे सुनकर कामिनी ने निश्चय कर लिया कि रात अभी दो घटे से कम वाकी नही है। उसने उसी तरफ की एक और खिडकी खोल दी और तव यह उस जगह चली गई जहाँ चौकी के ऊपर गंगा-

जमुनी लोटे मे जल रखा हुआ था। उसी चौकी पर से एक रूमाल उठा लिया और उसे गीला करके अपना मुँह अच्छी तरह पोछने अथवा धोने के बाद रूमाल खिडकी के बाहर फेंक दिया। और तब उस जगह चली आई जहाँ आनन्दसिंह गहरी नींद मे सो रहे थे।

कामिनी ने आँचल के कपडे से एक मामूली बत्ती बनाई और नाक मे डाल कर उसके जरिये से दो-तीन छींकें मारी, जिनकी आवाज से आनन्दसिंह की आँख खुल गई और उन्होने अपने पास कामिनी को बैठे हुए देखकर ताज्जुब से कहा, "हैं, तुम बैठी क्यो हो ? खैरियत तो है !"

कामिनी—जी हां, मेरी तबीयत तो अच्छी है मगर तरद्दुद और सोच के मारे नींद नही आ रही है। बहुत देर से जाग रही हूँ।

आनन्दसिंह—(उठकर) इस समय भला कौन से तरद्दुद और सोच ने तुम्हे आ घेरा ?

कामिनी—क्या कहूँ, कहते हुए भी शर्म मालूम पडती है ?

आनन्दसिंह—आखिर कुछ कहो तो सही, शर्म कहाँ तक करोगी ?

कामिनी—खैर मै कहती हूँ, मगर आप बुरा तो न मानेंगे ?

आनन्दसिंह—मैं कुछ भी बुरा न मानूंगा, तुम्हे जो कुछ कहना है कहो।

कामिनी—बात केवल इतनी ही है कि मै छोटे कुमार से एक दिल्लगी कर बैठी हूँ मगर आज उस दिल्लगी का भेद जरूर खुल गया होगा, इसलिए सोच रही हूँ कि अब क्या करूँ ? इस समय कामिनी बहिन से भी मुलाकात नही हो सकती, जो उनको कुछ समझा-बुझा देती।

आनन्दसिंह—(ताज्जुब मे आकर) तुमने कोई भयानक सपना तो नही देखा जिसका असर अभी तक तुम्हारे दिमाग मे घुसा हुआ है ? यह मामला क्या है ? तुम कैसी बाते कर रही हो !

कामिनी—नहीं-नहीं, कोई विशेष बात नही है और मैंने कोई भयानक सपना भी नही देखा, बात केवल इतनी ही है कि मैं हँसी-हँसी मे छोटे कुमार से कह चुकी हूँ कि 'मेरी शादी अभी तक नही हुई है और मैं प्रतिज्ञा कर चुकी हूँ कि ब्याह कदापि न करूँगी।' अब आज ताज्जुब नही कि कामिनी बहिन ने मेरा सच्चा भेद खोल दिया हो और कह दिया हो कि 'लाडिली की शादी तो कमलिनी की शादी के साथ-ही-साथ अर्थात् दोनो की एक ही दिन हो चुकी है और आज उसकी भी सोहागरात है।' अगर ऐसा हुआ तो मुझे बडी शर्म

आनन्दसिंह—(ताज्जुब और घबराहट से) तुम तो पागलो की सी बातें कर रही हो। आखिर तुमने अपने को और मुझको समझा ही क्या है ? जरा घूंघट हटा कर बातें करो। तुम्हारा मुंह तो दिखाई ही नही देता।

कामिनी—नही, मुझे इसी तरह बैठे रहने दीजिए। मगर आपने क्या कहा सो मैं कुछ भी नहीं समझी, इसमे पागलपने की भला कौन सी बात है ?

आनन्दसिंह—तुमने जरूर कोई सपना देखा है जिसका असर अभी तक तुम्हारे

दिमाग मे बसा हुआ है और तुम अपने को लाडिली समझ रही हो, ताज्जुब नही कि लाडिली ने तुमसे वे बातें कही हो जो उसने मुझसे दिल्लगी के ढग पर की थी।

कामिनी—मुझे आपकी बातो पर ताज्जुब मालूम पडता है। मैं समझती हूँ कि आप ही ने कोई अनूठा स्वप्न देखा है और शायद यह भी देखा है कि कामिनी आपके बगल में पडी हुई है जिसका खयाल अभी तक बना हुआ है और मुझे आप कामिनी समझ रहे हैं। भला सोचिए तो सही कि छोटे कुमार (आनन्दसिंह) को छोडकर कामिनी आपके पास आने ही क्यो लगी ? कही आप मुझसे दिल्लगी तो नही कर रहे है ?

कामिनी की आखिरी बात को सुनकर आनन्दसिंह बहुत बेचैन हो गये और उन्होंने घबरा कर कामिनी के मुँह से घूँघट हटा दिया, मगर शमादान की रोशनी मे उसका खूबसूरत चेहरा देखते ही वे चौंक पडे और बोले—"हैं ! यह मामला क्या है ? लाडिली को मेरे पास आने की क्या जरूरत थी ? बेशक तुम लाडिली मालूम पडती हो ? कही तुमने अपना चेहरा रँगा तो नही है ?"

कामिनी—(घबराहट के ढग पर) आपकी बातें तो मेरे दिल मे हौल पैदा करती हैं ! न मालूम आप क्या कह रहे हैं और इस बात को क्यो नही सोचते कि कामिनी को आपके पास आने की जरूरत ही क्या थी !

आनन्दसिंह—(बेचैनी के साथ) पहले तुम अपना चेहरा धो डालो तो मैं तुमसे बातें करूँ ! तुम मुझे जरूर धोखा दे रही हो और अपनी सूरत लाडिली की सी बनाकर मेरी जान को साँसत मे डाल रही हो ! मैं अभी तक तुम्हे कामिनी समझ रहा था और समझता हूँ।

कामिनी—(ताज्जुब से आनन्दसिंह की सूरत देखकर) आपकी बातें तो कुछ विचित्र ढग की हो रही हैं। जब आप मुझे कामिनी समझते है तो अपने को भी जरूर आनन्दसिंह समझते होगे ?

आनन्दसिंह—इसमे शक ही क्या है ? क्या मैं आनन्दसिंह नही हूँ ?

कामिनी—(अफसोस से हाथ मलकर) हे परमेश्वर ! आज इनको क्या हो गया है !

आनन्द—बस, अब तुम अपना चेहरा धो डालो तब मुझसे बातें करो, तुम नही जानती कि इस समय मेरे दिल की कैसी अवस्था है !

कामिनी—ठहरिये-ठहरिये, मैं बाहर जाकर सभी को इस बात की खबर कर देती हूँ कि आपको कुछ हो गया है। मुझे आपके पास बैठते डर लगता है ! हे परमेश्वर !

आनन्दसिंह—तुम नाहक मेरी जान को दु ख दे रही हो ! पास ही तो पानी पडा है, अपना चेहरा क्यो नही धो डालती ? मुझे ऐसी दिल्लगी अच्छी नही मालूम होती, खैर, अब बहुत हो गया, तुम उठो !

कामिनी—मेरे चेहरे मे क्या लगा है जो धो डालूँ ? आप ही क्यो नहीं अपना चेहरा धो डालते ! क्या मुँह मे पानी लगाकर मैं लाडिली से कोई दूसरी ही औरत बन जाऊँगी ? या आप मुँह धोकर छोटे कुमार बन जायँगे ?

आनन्द—(बेचैनी से बिगडकर) बस-बस, अब मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता और

न ज्यादे देर तक ऐसी दिल्लगी सह सकता हूँ। मेरा हुक्म है कि तुम तुरत अपना चेहरा धो डालो, नही तो तुम्हारे साथ जबर्दस्ती की जायगी, फिर पीछे दोष न देना !

यह सुनते ही कामिनी घबडाकर उठ खडी हुई और यह कहती हुई कि 'आज भोर-ही-भोर ऐसी दुर्दशा मे फँसी हूँ, न मालूम दिन कैसा बीतेगा, उस चौकी के पास चली गई जिस पर जल से भरा गगाजमनी लोटा हुआ रक्खा था और पास ही मे एक बडा सा आफतावा भी था। पानी से अपना चेहरा साफ किया और दो-चार कुल्ला भी करने के बाद रूमाल से मुँह पोछ आनन्दसिह से बोली, "कहिये, मैं वही हूँ कि बदल गई ?"

कामिनी के साथ-ही-साथ आनन्दसिह भी बिछावन पर से उठकर वहाँ तक चले आये थे जहाँ पानी और आफतावा रक्खा हुआ था। जब कामिनी ने मुँह धोकर उनकी तरफ देखा तो कुमार के ताज्जुब की कोई हद न रही और वह पत्थर की मूरत बनकर एकटक उसकी तरफ देखते खडे रह गये। इस समय खिडकियों मे से आसमान पर सुबह की सुफेदी फैली हुई दिखाई दे रही थी और कमरे मे भी रोशनी की कमी न थी।

कामिनी— (कुछ चिढी हुई आवाज से) कहिये-कहिये, क्या मैं मुँह धोने से कुछ बदल गई ? आप बोलते क्यो नही ?

आनन्दसिह—(एक लम्बी साँस लेकर) अफसोस ! तुम्हारे घूँघट ने मुझे धोखा दिया। अगर मिलाप के पहले तुम्हारी सूरत देख लेता तो धर्म नष्ट क्यो होता !

कामिनी—(जिसे अब हम लाडिली लिखेगे, क्योकि यह वास्तव मे लाडिली ही है) फिर भी आप उसी ढग की बातें कर रहे हैं और अभी तक अपने को छोटे कुमार समझते हैं। इतना हिलने-डोलने पर भी आपके दिमाग से स्वप्न का गुबार न निकला। (कमरे मे लटकते हुए एक बडे आईने की तरफ उँगली से इशारा करके) अब आप उसमे अपना चेहरा देख लीजिये तो मुझसे बाते कीजिये !

कुँअर आनन्दसिह भी यही चाहते थे, अत वे उस आईने के सामने चले गये और बडे गौर से अपनी सूरत देखने लगे। लाडिली भी उनके साथ-ही-साथ उस आईने के पास चली गई और जब वे ताज्जुब के साथ आईने मे अपना चेहरा देख रहे थे तो बोली, "कहिये, अब भी आप अपने को छोटे कुमार ही समझते हैं या और कोई ?"

क्रोध के साथ-ही-साथ शर्मिन्दगी ने भी आनन्दसिह पर अपना कब्जा कर लिया और वे घबडा कर अपनी पोशाक पर ध्यान देने लगे, मगर उसमे किसी तरह की खराबी न पाकर उन्होने पुन लाडिली की तरफ देखा और कहा, "यह क्या मामला है ? मेरी सूरत किसने बदली ?"

लाडिली—(ताज्जुब और घबराहट के ढग पर) क्या आप अपनी सूरत बदली हुई समझते हैं ?

आनन्दसिह—बेशक !

लाडिली—(अफसोस के साथ हाथ मलकर) अफसोस ! अगर यह बात ठीक है तो बडा ही गजब हुआ !

आनन्दसिह—जरूर ऐसा ही है, मैं अभी अपना चेहरा धोता हूँ।

इतना कहकर कुँअर आनन्दसिह उस चौकी के पास चले गये जिस पर पानी

रक्खा हुआ था और अपना चेहरा धोने लगे। पानी पडते ही हाथ पर रग उतर आया जिस पर निगाह पडते ही लाडिली चौंकी और रज के साथ बोली, "बेशक चेहरा रँगा हुआ है! हाय बडा ही गजब हो गया! मैं बेमौत मारी गई! मेरा धर्म नष्ट हुआ! अब मैं अपने पति के सामने किस मुंह से जाऊंगी और अपनी हमजोलियो की बातो का क्या जवाब दूंगी! औरतो के लिए यह बडे ही शर्म की बात है, नही-नही, बल्कि औरतो के लिए यह घोर पातक है कि पराये मर्द का सग करें। सच तो यह है कि पराये मर्द का शरीर छू जाने मे भी प्रायश्चित्त लगता है, और बात का तो कहना ही क्या है! हाय, मैं बर्बाद हो गई और कही की भी न रही। इसमे कोई शक नही कि आपने जान-बूझकर मुझे मिट्टी मे मिला दिया!

आनन्दसिह—(अच्छी तरह चेहरा धोने के बाद रूमाल से मुंह पोछकर) क्या कहा? क्या जानबूझकर मैंने तुम्हारा धर्म नष्ट किया?

लाडिली—बेशक ऐसा ही है, मैं इस बात की दुहाई दूंगी और लोगो से इन्साफ चाहूंगी।

आनन्दसिह—क्या मेरा धर्म नष्ट नही हुआ?

लाडिली—मर्दो के धर्म का क्या कहना है और उसका बिगडना ही क्या, जो दस-दस पन्द्रह-पन्द्रह ब्याह से भी ज्यादा कर सकते हैं! बर्बादी तो औरतो के लिए है। इसमें कोई शक नही कि आपने जान-बूझकर मेरा धर्म नष्ट किया। जब आप छोटे कुमार ही थे तो आपको मेरे पास से उठ जाना चाहिए था या मेरे पास बैठना ही मुनासिब न था।

आनन्दसिह—मैं कसम खाकर कह सकता हूं कि मैंने तुम्हारी सूरत घूंघट के सबब से अच्छी तरह नही देखी, एक दफे ऐंचातानी मे निगाह पड भी गयी थी तो तुम्हे कामिनी ही समझा था, और इसके लिए भी मैं कसम खाता हूं कि मैंने तुम्हे धोखा देने के लिए जान-बूझकर अपनी सूरत नही रँगी है बल्कि मुझे इस बात की खबर भी नही कि मेरी सूरत किसने रँगी या क्या हुआ।

लाडिली—अगर आपका यह कहना ठीक है तो समझ लीजिये कि और भी गजब हो गया! मेरे साथ-ही-साथ कामिनी भी बर्बाद हो गई होगी। जिस धर्मात्मा ने धोखा देकर मेरा सग आपके साथ करा दिया है, उसने कामिनी को भी, जो आपके साथ ब्याही गई है, जरूर धोखा देकर मेरे पति के पलग पर सुला दिया होगा!

यह एक ऐसी बात थी जिसे सुनते ही आनन्दसिह का रग बदल गया। रज और अफसोस की जगह क्रोध ने अपना दखल जमा लिया और कुछ सुस्त तथा ठडी रगो मे बेमौके हरारत पैदा हो गई जिससे बदन कांपने लगा और उन्होने लाल आँखें करके लाडिली की तरफ देख के कहा—"क्या कहा? तुम्हारे पति के पलग पर कामिनी! यह किसकी मजाल है कि· ·

लाडिली—ठहरिये-ठहरिये, आप गुस्से मे न आ जाइये। जिस तरह आप अपनी और कमलिनी की इज्जत समझते है, उसी तरह मेरी और मेरे पति की इज्जत पर भी आपको ध्यान देना चाहिए। मेरी बर्बादी पर तो आपको गुस्सा न आया और कमलिनी

का भी मेरा ही सा हाल सुनकर आप जोश मे आकर उछल पडे, अपने आपे से वाहर हो गये और आपको वदला लेने की धुन सवार हो गई। सच है, दुनिया मे किसी विरले ही महात्मा को हमदर्दी और इन्साफ का ध्यान रहता है, दूसरे पर जो कुछ बीती है उसका अन्दाजा किसी को तव तक नही लग सकता, जव तक उस पर भी वैसी ही न वीते। जिसने कभी एक उपवास भी नही किया है, वह अकाल के मारे भूखे गरीवो पर उचित और सच्ची हमदर्दी नही कर सकता, यो उनके उपकार के लिए भले ही वहुत-कुछ जोश दिखाये और कुछ कर भी वैठे। ताज्जुव नही कि हमारे बुजुर्ग और वडे लोग इसी खयाल से वहुत से व्रत चला गये और इससे उनका मतलव यह भी हो कि स्वय भूखे रहकर देख लो, तव भूखो की कदर कर सकोगे। दूसरे के गले पर छुरी चला देना कोई वडी वात नही है, मगर अपने गले पर सूई से भी निशान नही किया जाता। जो दूसरो की वहू-वेटियो को झाँका करते है, वे अपनी वहू-वेटियो का झाँका जाना सहन नही कर सकते। वस, इसी से समझ लीजिये कि मेरी वर्वादी पर आपको अगर कुछ खयाल हुआ तो केवल इतना ही कि वस, कसम खाकर अफसोस करने लगे और सोचने लगे कि मेरे दिल से किसी तरह इस बात का रज निकल जाय, मगर कामिनी का भी मेरे ही ऐसा हाल सुन-कर म्यान के वाहर हो गये! क्या यही इन्साफ है और यही हमदर्दी है! इसी दिल को लेकर आप राजा वनेंगे और राज-काज करेंगे!

लाडिली की जोश-भरी बातें सुनकर आनन्दसिह सहम गये और शर्म ने उनकी गर्दन झुका दी। वह सोचने लगे कि क्या करूँ और इसकी वातो का क्या जवाव दूँ! इसी समय कमरे का दरवाजा खुला (जो शायद धोखे मे खुला रह गया होगा) और इन्द्रदेव की लडकी इन्दिरा को साथ लिए हुए कामिनी आती दिखाई पडी।

लाडिली—लीजिये, कामिनी वहिन भी आ पहुँची! कुछ ताज्जुव नही कि ये भी अपना हाल कहने के लिए आई हो। (कामिनी से) लो वहिन, आज हम तुम्हारे वरावर हो गये!

कामिनी – वरावर नही, वल्कि वढ के!

2

रात पहर भर से ज्यादा जा चुकी है। महल के अन्दर एक सजे हुए कमरे मे एक तरफ रानी चन्द्रकान्ता, चपला और चम्पा वैठी हुई है और उनसे थोडी ही दूर पर राजा वीरेन्द्रसिह, गोपालसिह और भैरोसिह वैठे आपस मे कुछ वातचीत कर रहे हैं।

चन्द्रकान्ता—(वीरेन्द्रसिह से) सच्चा-सच्चा हाल मालूम होना तो दूर रहा मुझे इस वात का किसी तरह कुछ गुमान भी न गुआ। इस समय मैं दुल्हिनो की सोहागरात का इन्तजाम देख-सुनकर यहाँ आई और दिन भर की थकावट से सुस्त होकर पड रही, जी मे आया कि घटे दो घटे सो रहूँ, मगर इसी वीच मे चपला वहिन आ पहुँची और वोली, "लो वहिन, मैं तुम्हे एक अनूठा हाल सुनाती हूँ जिसकी अव तक हम लोगो को

कुछ खबर ही न थी !" बस इतना कहकर बैठ गई और कहने लगी कि 'कमलिनी और लाडिली की शादी तिलिस्म के अन्दर ही इन्द्रजीत और आनन्द के साथ भी हो चुकी है जिसके बारे मे अब तक हम लोगो को किसी ने कुछ भी नही कहा। इसी समय लडके (भैरोसिंह) ने मुझसे कहा है।' सुनते ही मैं सन्न हो गई कि हे राम, यह कौन-सी बात थी जिसे अभी तक सब कोई छिपाये बैठे रहे!

चपला—(भैरोसिंह की तरफ इशारा करके) सामने तो बैठा हुआ है, पूछिये कि इस समय के पहले ही कभी कुछ कहा था। यद्यपि दोनो की शादियाँ इसके सामने ही तिलिस्म के अन्दर हुई थी।

वीरेन्द्रसिंह—मुझे भी इस विषय मे किसी ने कुछ नही कहा था, अभी थोडी देर हुई कि गोपालसिंह ने यह सब हाल पिताजी से बयान किया तब मालूम हुआ।

चन्द्रकान्ता—यही सुन के तो मैंने आपको तकलीफ दी, क्योकि आपकी जुबानी सुने बिना मेरी दिलजमई नही हो सकती।

वीरेन्द्रसिंह—जो कुछ तुमने सुना, सब ठीक है।

चन्द्रकान्ता—मजा तो यह है कि लडको ने भी मुझसे इस बात की कुछ चर्चा नही की।

वीरेन्द्रसिंह—लडको को तो खुद ही इस बात की खबर नही है कि उनकी शादी कमलिनी और लाडिली के साथ हुई थी।

चन्द्रकान्ता—यह तो आप और भी ताज्जुब की बात कहते हैं। यह भला कैसे हो सकता है कि उनकी शादी हो, उन्ही को पता न लगे कि हमारी शादी हो गई है? इस पर कौन विश्वास करेगा!

वीरेन्द्रसिंह—बात ही कुछ ऐसी हो गई थी और यह शादी जान-बूझकर किसी मतलब से छिपाई गई थी। (गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) अब ये खुलासा हाल तुमसे बयान करेंगे, तब तुम समझ जाओगी कि ऐसा क्यो हुआ।

गोपालसिंह—मैं सब हाल आपसे खुलासा बयान करता हूँ और आशा करता हूँ कि आप मेरा कसूर माफ करेंगी, क्योकि यह सब मेरी ही करतूत है और मैंने ही यह शादी कराई है।

चन्द्रकान्ता—अगर तुमने ऐसा किया तो छिपाने की क्या जरूरत थी? क्या हम लोग तुमसे रंज हो जाते? या हम लोग इस बात को नही समझते कि जो कुछ भी तुम करोगे, अच्छा ही समझ के करोगे!

गोपालसिंह—ठीक है, मगर किया क्या जाय! इस बात को छिपाये बिना काम नही चलता था, यही तो सबब हुआ कि खुद दोनो कुमारों को भी इस बात का पता न लगा कि उनकी शादी फलाँ के साथ हो गई है।

चन्द्रकान्ता—आखिर ऐसा क्यो किया गया, सो तो कहो!

गोपालसिंह—इसका सबब यह है कि एक दिन कमला मेरे पास आई और बोली कि 'मैं आपसे एक जरूरी बात कहती हूँ जिस पर आपको विशेष ध्यान देना होगा।' मैंने पूछा—'क्या?' इस पर उसने जवाब दिया कि 'कमलिनी ने जो कुछ अहसान हम लोगो

पर, खास करके दोनो कुमारो तथा किशोरी और कामिनी पर किये हैं, वह किसी से छिपे नही हैं। किशोरी का खयाल है कि इसका वदला किसी तरह अदा हो ही नही सकता, और वात भी ऐसी ही है, अब किशोरी ने वात-ही-वात मे अपने दिल का हाल मुझसे भी कह दिया और इस वारे मे जो कुछ उसने सोच रखा था, वह भी वयान किया, किशोरी कहती है कि अगर मैं शादी न करूँ या शादी होने के पहले ही इस दुनिया से उठ जाऊँ तो उसके अहसान और ताने से कुछ वच सकती हूँ। इस विषय पर जब मैंने किशोरी को वहुत-कुछ समझाया तो वोली कि खैर, अगर मेरी शादी के पहले कमलिनी की शादी कुँअर इन्द्रजीतसिंह के साथ हो जायेगी तब मैं सुख से जिंदगी विता सकूँगी और उसके अहसान से भी हलकी हो जाऊँगी, क्योकि ऐसा होने से कमलिनी को पटरानी की पदवी मिलेगी और उसी का लडका गद्दी का मालिक समझा जायेगा। मैं छोटी और कमलिनी की लौडी होकर रहूँगी, तभी मेरे दिल को तस्कीन होगा और मैं समझूँगी कि कमलिनी के अहसान का वोझ मेरे सिर से उतर गया।'

चन्द्रकान्ता—शावाश! शावाश!

वीरेन्द्रसिंह—वेशक, किशोरी ने वडे हौसले की और लासानी वात सोची!

चपला—वेशक, यह साधारण वात नही है, यह वडे कलेजे वाली औरतो का काम है, और इससे वढकर किशोरी कुछ कर ही नही सकती थी।

गोपालसिंह—मैंने जब कमला की जुवानी यह वात सुनी तो दग हो गया और मन मे किशोरी की तारीफ करने लगा। सच तो यो है कि यह वात मेरे दिल मे भी जम गई। अब मैंने कमला से वादा तो कर दिया कि 'ऐसा ही होगा', मगर तरद्दुद मे पड गया कि यह काम क्योकर पूरा होगा, क्योकि यह वात वडी ही कठिन वल्कि असम्भव थी कि इन्द्रजीतसिंह और कमलिनी इस राय को मजूर करें। इसके अतिरिक्त यह भी उम्मीद नही हो सकती थी कि हमारे महाराज इस वात को स्वीकार कर लेंगे।

भैरोसिंह—वेशक, यह कठिन काम था, इन्द्रजीतसिंह इस वात को कभी मजूर न करते।

गोपालसिंह—कई दिन के सोच-विचार के वाद मैंने और भैरोसिंह ने मिलकर एक तरकीव निकाल ली और किसी न किसी तरह कमलिनी और लाडिली को इन्द्रानी और आनन्दी वनाकर दोनो की शादी इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के साथ करा दी। उन दिनो कमलिनी के पिता वलभद्रसिंहजी, भूतनाथ की मदद से छूटकर यहाँ (अर्थात् वगुले वाले तिलिस्मी मकान मे) आ चुके थे। अब मैं तिलिस्म के अन्दर ही अन्दर यहाँ आया और वलभद्रहिजी को कन्यादान करने के लिए समझा-बुझाकर जमानिया ले गया।[1] उस दिन भूतनाथ वहुत परेशान हुआ था और भैरोसिंह मेरे साथ था। हम लोग पहले जव इस मकान मे आये थे, तो भूतनाथ और वलभद्रसिंहजी के नाम की एक-एक चिट्ठी दोनो की चारपाई पर रख के चले गये थे। वलद्रसिंहजी की चिट्ठी मे उनकी दिलजमई के लिए एक अंगूठी भी रखी थी जो उन्होने व्याह के पहले मुझे वतौर सगुन के दी थी। इसके वाद दूसरे दिन फिर पहुँचे और भूतनाथ को अपना पूरा-पूरा निश्चय देकर वलभद्र-

1 देखिए, चन्द्रकान्ता सन्तति, अठारहवाँ भाग, आठवाँ वयान।

सिहजी को ले गये। उनके जाने का सबब भूतनाथ को ठीक-ठीक कह दिया था। मगर साथ इसके इस बात की भी ताकीद कर दी थी कि यह हाल किसी को मालूम न होवे।

इतना कहते-कहते गोपालसिह कुछ देर के लिए रुके और फिर इस तरह कहने लगे—

"पहले तो मुझे इस बात की चिन्ता थी कि बलभद्रसिह मेरा कहना मानेंगे या नही, मगर उन्होने इस बात को बडी खुशी से मजूर कर लिया। अपनी लडकियो से मिल कर वे बहुत ही प्रसन्न हुए और हम लोगो पर जो कुछ आफतें बीत चुकी थी, उन्हे सुन-सुनाकर अफसोस करते रहे, फिर अपनी बीती सुनाकर प्रसन्नतापूर्वक हम लोगो के काम मे शरीक हुए, अर्थात् हँसी-खुशी के साथ उन्होने कमलिनी और लाडिली का कन्यादान कर दिया।[1] इस काम मे भैरोसिह को भी कम तरद्दुद नही उठाना पडा, बल्कि दोनो कुमार इनसे रज भी हो गये थे, क्योकि इनकी जुबानी असल बातो का पता उन्हे नही लगता था, अत शादी हो जाने के बाद इस बात का बन्दोबस्त किया गया कि इन्द्रजीत-सिह और आनन्दसिह इस अनूठे व्याह को भूल जायें तथा इन्द्रानी और आनन्दी से मिलने की उम्मीद न रखें।

इसके बाद राजा गोपालसिह ने भी बहुत-सा हाल बयान किया जो हम सन्तति के अठारहवें भाग मे लिख आये है और सब बातें सुनकर अन्त मे चन्द्रकान्ता ने कहा, "खैर, जो हुआ अच्छा हुआ, हम लोगो के लिए तो जैसे किशोरी और कामिनी हैं, वैसे ही कमलिनी और लाडिली हैं। मगर किशोरी के नाना को यदि इस बात का कुछ रज हो तो ताज्जुब नही।"

वीरेन्द्रसिह—पिताजी भी यही कहते थे। मगर इसमे कोई शक नही कि किशोरी ने परले सिरे की हिम्मत दिखलाई।

गोपालसिह—साथ ही इसके यह भी समझ लीजिए कि कमलिनी ने भी इस बात को सहज ही मे स्वीकार नही कर लिया, इसके लिए भी हम लोगो को बहुत-कुछ उद्योग करना पडा। बात यह है कि कमलिनी भी किशोरी को जान से ज्यादा चाहती है और मानती है।

चन्द्रकान्ता—मगर मुझे इस बात का अफसोस जरूर है कि इन दोनो की शादी मे किसी तरह की तैयारी नही की गई और न कुछ धूमधाम ही हुई।

इसके बाद बहुत देर तक इन सभी मे बातचीत होती रही।

3

अब हम कुँअर इन्द्रजीतसिह की तरफ चलते और देखते हैं कि उधर क्या हो रहा है।

---

1 देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, अठारहवां भाग, बारहवां बयान।

किशोरी और कमलिनी की वातचीत सुनकर कुंअर इन्द्रजीतसिंह से न रहा गया और उन्होंने वेचैनी के साथ उन दोनो की तरफ देखकर कहा, "क्या तुम लोगो ने मुझे सताने और दु ख देने के लिए कसम ही खा ली है ? क्यो मेरे दिल मे हौल पैदा कर रही हो ? असल वात क्यो नही वताती ?"

किशोरी—(मुस्कुराती हुई) यद्यपि मुझे आपसे शर्म करनी चाहिए, मगर कमला और कमलिनी वहिन ने मुझे वेहया वना दिया, तिस पर आज की दिल्लगी मुझे हँसाते-हँसाते वेहाल कर रही है। आप विगडे क्यो जाते है। ठहरिये-ठहरिये, जल्दी न कीजिए और समझ लीजिए कि मेरी शादी आपके साथ नही हुई वल्कि कमलिनी की शादी आपके साथ हुई है।

कुमार—सो कैसे हो सकता है ! और मै क्योकर ऐसी अनहोनी वात मान लूं ?

कमलिनी—अव आपकी हालत वहुत ही खराव हो गई ! क्या कहूँ, मैं तो आप को अभी और छकाती, मगर दया आती है इसलिए छोड देती हूँ। इसमे कोई शक नही कि मैंने आपसे दिल्लगी की है, मगर इसके लिए मैं आपसे इजाजत ले चुकी हूँ ! अपनी तर्जनी उँगली की अँगूठी दिखाकर) आप इसे पहचानते हैं ?

कुमार—हां-हां, मैं इस अँगूठी को खूव पहचानता हूं। तिलिस्म के अन्दर यह अँगूठी मैंने इन्द्रानी को दी थी, मगर अफसोस !

कमलिनी—अफसोस न कीजिए, आपकी इन्द्रानी मरी नही, वल्कि जीती-जागती आपके सामने खडी है।

कमलिनी की इस आखिरी वात ने कुमार के दिल से आश्चर्य और दु:ख को धोकर साफ कर दिया और उन्होने खुशी-खुशी कमलिनी और किशोरी का हाथ पकडकर कहा, "क्या यह सच है ?"

किशोरी—जी हां, सच है।

कुमार—और जिन दोनो को मैंने मरी हुई देखा था, वे कौन थीं ?

किशोरी—वे वास्तव मे माधवी और मायारानी थी जो तिलिस्म के अन्दर ही अपनी वदकारियो का फल भोगकर मर चुकी थी। आपके दिल से उस शादी का खयाल उठा देने के लिए ही उनकी लाशें इन्द्रानी और आनन्दी वनाकर दिखा दी गई थी, मगर वास्तव में इन्द्रानी यही मौजूद है और आनन्दी, यही लाडिली थी जो आनन्दसिह के साथ व्याही गई थी—इस समय उधर भी कुछ ऐसा ही रग मचा हुआ है।

कुमार—तुम्हारी वातो ने इस समय मुझे प्रसन्न कर दिया। विशेष प्रसन्नता तो इस वात से होती है कि तुम खुले दिल से इन वातो को वयान कर रही हो और कमलिनी मे तथा तुममे पूरे दर्जे की मुहव्वत मालूम होती है। ईश्वर इस मुहव्वत को वरावर इसी तरह वनाए रहे। (कमलिनी से) मगर तुमने मुझे वडा ही धोखा दिया, ऐसी दिल्लगी भी कभी किसी ने नही सुनी होगी ! आखिर ऐसा किया ही क्यो !

कमलिनी—अव क्या सव वातें खडे-खडे ही खतम होगी और वैठने की इजाजत न दी जायगी ?

कुमार—क्यो नही, अव वैठकर हँसी-दिल्लगी करने और खुशी मनाने के सिवाय

और हम लोगो को करना ही क्या है ।

इतना कहकर कुंअर इन्द्रजीतसिंह गद्दी पर बैठ गये और हाथ पकडकर किशोरी और कमलिनी को अपने दोनो बगल बैठा लिया । कमला आज्ञा पाकर बैठा ही चाहती थी कि दरवाजे पर ताली बजने की आवाज आई जिसे सुनते ही वह बाहर चली गई और तुरन्त लौटकर बोली, "पहरे वाली लौंडी कहती है कि भैरोसिंह खडे है ।"

कुमार—(खुश होकर) हाँ-हाँ, उन्हे जल्द ले आओ, इन हजरत ने मेरे साथ कम दिल्लगी की है ? अब तो मैं सब बातें समझ गया । भला आज उन्हे इत्तिला कराके मेरे पास आने का दिन तो नसीब हुआ ।

कुमार की बाते सुनकर कमला पुन बाहर चली गई और कमलिनी तथा किशोरी, कुमार के बगल से कुछ हटकर बैठ गईं, इतने ही मे भैरोसिंह भी आ पहुँचे ।

कुमार—आइए-आइए ! आपने भी मुझे बहुत छकाया है । पर क्या चिन्ता है, समय मिलने पर समझ लूंगा ।

भैरोसिंह—(हँसकर)जो कुछ किया (किशोरी की तरफ बताकर)इन्होंने किया, मेरा कोई कसूर नही ।

कुमार—खैर, जो कुछ हुआ सो हुआ, अब मुझे सच्चा-सच्चा हाल तो सुना दो कि तिलिस्म के अन्दर इस तरह की रूखी-फीकी शादी क्यो कराई गई और इस काम के अगुआ कौन महापुरुष थे ?

भैरोसिंह—(किशोरी की तरफ इशारा करके)जो कुछ किया सब इन्होंने किया, यही सब काम मे अगुआ थीं और राजा गोपालसिंह इस काम मे इनकी मदद कर रहे थे । उन्ही की आज्ञानुसार मुझे भी मजबूर होकर इन लोगो का साथ देना पडा था । इसका खुलासा हाल आप कमला से पूछिये, यही ठीक-ठीक बतावेगी ।

कुमार—(कमला से) खैर, तुम्ही बताओ कि क्या हुआ ?

कमला—(किशोरी से) कहो बहिन, अब तो मै साफ-ही-साफ कह दूं ?

किशोरी—अब छिपाने की जरूरत ही क्या है ?

कमला ने इस तरह से कहना शुरू किया, "किशोरी बहिन ने मुझसे कई दफे कहा कि 'तू इस बात का बन्दोबस्त कर कि किसी तरह मेरी शादी के पहले ही कमलिनी की शादी कुमार के साथ हो जाय ।' मगर मेरे किये इसका कुछ भी बन्दोबस्त न हो सका और कमलिनी रानी भी इस बात पर राजी होती दिखाई न दी, अत मैं बात टाल कर चुपकी हो बैठी, मगर मुझे इस काम मे सुस्त देखकर किशोरी ने फिर मुझसे कहा कि 'देख कमला, तू मेरी बात पर कुछ ध्यान नही देती, मगर इसे खूब समझ रखना कि अगर मेरा इरादा पूरा न हुआ अर्थात् मेरी शादी के पहले ही कमलिनी की शादी कुमार के साथ न हो गई तो मैं कदापि ब्याह न करूँगी, बल्कि अपने गले मे फाँसी लगाकर जान दे दूंगी । कमलिनी ने जो कुछ अहसान मुझ पर किये हैं, उनका बदला मैं किसी तरह चुका नही सकती, अगर कुछ चुका सकती हूँ तो इसी तरह कि कमलिनी को पटरानी बनाऊँ और आप उसकी लौंडी होकर रहूँ, मगर अफसोस है कि तू मेरी बातो पर कुछ भी ध्यान नहीं देती जिसका नतीजा यह होगा कि एक दिन तू रोयेगी और पछताएगी ।'

"किशोरी की इस आखिरी बात से मेरे कलेजे पर एक चोट-सी लगी और मैंने सोचा कि जो कुछ यह कहती है, बहुत ठीक है, ऐसा होना ही चाहिए। आखिर मैंने राजा गोपालसिंह से यह सब हाल कहा और उन्हे अपनी तरफ से भी बहुत-कुछ समझाया जिसका नतीजा यह निकला कि वे दिलोजान से इस काम के लिए तैयार हो गये। जब वे खुद तैयार हो गये तो फिर क्या था? सब काम खूबी के साथ होने लगा।

"राजा गोपालसिंह ने इस विषय मे कमलिनीजी से कहा और इन्हे बहुत समझाया, मगर ये राजी न हुईं और बोली कि 'आपकी आज्ञानुसार मैं कुमार से ब्याह करने के लिए तैयार हूँ, मगर यह नही हो सकता कि किशोरी से पहले ही अपनी शादी करके उसका हक मार दूं। हाँ, किशोरी की शादी हो जाने के बाद जो कुछ आप आज्ञा देंगे मैं करूंगी।" यह जवाब सुनकर गोपालसिंहजी ने फिर कमलिनी को समझाया और कहा कि 'अगर तुम किशोरी की इच्छा पूरी न करोगी तो वह अपनी जान दे देगी, फिर तुम ही सोच लो कि उसके मर जाने पर कुमार की क्या हालत होगी और तुम्हारी इस जिद का क्या नतीजा निकलेगा?'

"गोपालसिंहजी की इस बात ने इन्हे (कमलिनी की तरफ बता कर) लाजवाब कर दिया और ये लाचार हो शादी करने पर राजी हो गईं। तब राजा साहब ने भैरोसिंह को मिलाया और ये भी इस बात पर राजी हो गये। इसके बाद यह सोचा गया कि कुमार इस बात को स्वीकार न करेंगे अत उन्हे धोखा देकर जहाँ तक जल्द हो तिलिस्म के अन्दर ही कमलिनी के साथ उनकी शादी कर देनी चाहिए, क्योकि तिलिस्म के बाहर हो जाने पर हम लोग स्वाधीन न रहेंगे और अगर बड़े महाराज इस बात को सुनकर अस्वीकार कर देंगे तो फिर हम लोग कुछ भी न कर सकेंगे, इत्यादि।

"बस यही सबब हुआ कि तिलिस्म के अन्दर आपसे तरह-तरह की चालबाजियाँ खेली गईं और भैरोसिंह ने भी आप से सब भेद छिपा रक्खा। खुद राजा गोपालसिंहजी तिलिस्म के अन्दर आये और बुड्ढे दारोगा बनकर इस काम मे उद्योग करने लगे।"

कुमार—(बात रोक कर ताज्जुब के साथ) क्या खुद गोपालसिंह बुड्ढे दारोगा बने थे?

कमला—जी हाँ, वह बुड्ढी मैं बनी थी, तथा किशोरी और इन्दिरा आदि ने लड़कों का रूप धरा था।

कमला—(हँसकर) यह बुड्ढी भैरोसिंह की जोरू बनी थी। अब इस बात को सच कर दिखाना चाहिए, अर्थात् इस बुड्ढी को भैरोसिंह के गले मढ़ना चाहिए।

कुमार—जरूर! (कमला से) तब तो मैं समझता हूँ कि 'मकरन्द' इत्यादि के बारे मे जो भैरोसिंह ने बयान किया था, वह सब झूठ था?

कमलिनी—हाँ, बेशक उसमे बारह आने से ज्यादा झूठ था।

कुमार—खैर, तब क्या हुआ? तुम आगे बयान करो।

कमला ने फिर इस तरह बयान करना शुरू किया—

"भैरोसिंह जान बूझ कर इसलिए पागल बनाकर आपको दिखाये गये थे जिसमे एक तो आप धोखे मे पड़ जायें और समझें कि हमारे विपक्षी लोग भी यहाँ रहते हैं, दूसरे

आपसे मिलाप हो जाने पर यदि भैरोसिंह से कुछ भूल भी हो जाय तो आप यही समझें कि अभी तक इनके दिमाग मे पागलपन का कुछ धुआँ बचा हुआ है। जिस समय हम लोग तिलिस्म के अन्दर पहुँचाए गये थे, उस समय राजा गोपालसिंह ने अपनी खास तिलिस्मी किताब कमलिनीजी को दे दी थी जिससे तिलिस्म का बहुत-कुछ हाल मालूम हो गया था और इनकी मदद से हम लोग जो चाहते थे करते थे तथा हमे किसी बात की तकलीफ भी नही होती थी और खाने-पीने की सभी चीजे राजा गोपालसिंहजी पहुँचाया करते थे।

"भैरोसिंह जब पागल बनने के बाद आपसे मिले थे तो अपना ऐयारी का बटुआ जान-बूझ कर कमलिनी के पास रख गये थे। फिर जब भैरोसिंह को बुलाने की इच्छा हुई तो उन्ही का बटुआ और पीले मकरन्द की लडाई दिखा कर वे आपसे अलग कर लिए गये, कमलिनी पीछे मकरन्द की सूरत मे थी और मैं उनका मुकाबला कर रही थी, कही-बदी और मेल की लड़ाई थी इसलिए आपने समझा होगा कि हम दोनो बडे बहादुर और लडाके हैं। अत. इस मामले के बाद जब इन्द्रानी और आनन्दी वाले बाग मे भैरोसिंह आपसे मिले तब भी इन्होने बहुत-सी झूठी बातें बनाकर आपसे कही और जब आप इनसे रज हुए तो आपका सग छोड कर ये फिर हम लोगो की तरफ चले आये।[1] आप दोनो भाई उस शादी करने से इन्कार करते थे, मगर मजबूरी और लाचारी ने आपका पीछा न छोडा, इसके अतिरिक्त खुद इन्द्रानी और आनन्दी ने भी आप दोनो को किशोरी और कामिनी की चिट्ठी दिखा कर खुश कर लिया था। यहाँ आकर आपने सुना ही है कि कमलिनीजी के पिता बलभद्रसिहजी, जिन्हे भूतनाथ छुडा लाया था, यकायक गायब हो गए और कई दिनो के बाद लौट कर आये।"

कुमार—हाँ, सुना था।

कमला—बस, उन्हे राजा गोपालसिंह ही यहाँ आकर ले गये थे और खुद बलभद्रसिहजी ने ही अपनी दोनो लडकियो का कन्या-दान किया था।

कुमार—(हँसते हुए) ठीक है, अब मैं सब बातें समझ गया और यह भी मालूम हो गया कि केवल धोखा देने के लिए ही माधवी और मायारानी, जो पहले ही मर चुकी थी, इन्द्रानी और आनन्दी बनाकर दिखाई गई थी।

भैरोसिंह—जी हाँ।

कुमार—मगर नानक वहाँ क्योकर पहुँचा था ?

भैरोसिंह—आप सुन चुके हैं कि तारासिंह ने नानक को कैसा छकाया था, अत वह हम लोगो से बदला लेने की नीयत करके वहाँ गया और मायारानी से मिल गया था। कमलिनीजी ने वहाँ का रास्ता उसे बता दिया था, उसी का यह नतीजा निकला। जब मायारानी राजा गोपालसिंह के कब्जे मे पड गई तब राजा साहब ने नानक को बहुत कुछ बुरा-भला कहा, यहाँ तक कि नानक उनके पैरो पर गिर पडा और उनसे अपने कसूर की माफी माँगी। उस समय राजा साहब ने उसका कसूर माफ करके उसे अपने साथ रख लिया। तब से वह उन्ही के कब्जे मे रहा और उन्ही की आज्ञानुसार आपको धोखे मे

1 देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, अठारहवाँ भाग, ग्यारहवाँ बयान।

डालने की नीयत से मायारानी और माधवी की लाश के पास दिखाई दिया था। वे दोनो पहले ही मारी जा चुकी थी, मगर आपको भुलावा देने की नीयत से उनकी लाश इन्द्रानी और आनन्दी बना कर दिखाई गई थी। इसके अतिरिक्त और जो कुछ हाल है, वह आपको राजा गोपालसिंहजी की जुबानी मालूम होगा।

कुमार—ठीक है, मैं ईश्वर को धन्यवाद देता हूँ कि मायारानी और माधवी की लाश को इन्द्रानी और आनन्दी की सूरत मे देखकर जो कुछ रंज मुझे हुआ था और आज तक इस घटना का जो कुछ असर मेरे दिल पर था वह जाता रहा अब मैं अपने को खुश-नसीब समझने लगा। (कमलिनी से) अच्छा यह बताओ कि रात की दिल्लगी तुमने किस तौर पर की? मेरी समझ मे कुछ नही आया और न इसी बात का पता लगा कि मेरी सूरत क्योंकर बदल गई?

कमलिनी—इस बात का जवाब आपको कमला से मिलेगा।

कमला—यह तो एक मामूली बात है। समझ लीजिये कि जब आप सो गए तो इन्ही (कमलिनी) ने आपको बेहोश करके आपकी सूरत बदल दी।[1]

कुमार—ठीक है मगर ऐसा क्यो किया?

कमला—एक तो दिल्लगी के लिए और दूसरे किशोरी के इस खयाल से कि जिसकी शादी पहले हुई है, उसी की सुहागरात भी पहले होनी चाहिए।

कुमार—(हँस कर और किशोरी की तरफ देखकर) अच्छा, तो यह सब आपकी बहादुरी है। खैर, आज आपकी पारी होगी ही, समझ लूंगा।

किशोरी ने शरमाकर सिर नीचा कर लिया और कुमार की बात का कुछ भी जवाब न दिया।

इसके बाद वे लोग कुछ देर तक हँसी-खुशी की बातें करते रहे और तब अपने-अपने ठिकाने चले गये।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की शादी के बाद कई दिनो तक हँसी-खुशी का जलसा बराबर बना रहा क्योंकि इस शादी के आठवे ही दिन कमला की शादी भैरोसिंह के साथ और तारासिंह की शादी इन्दिरा के साथ हो गई और इस नाते को भूतनाथ तथा इन्द्रदेव ने बडी खुशी के साथ मंजूर कर लिया।

इन सब कामों से छुट्टी पाकर महाराज ने निश्चय किया कि अब पुन उसी बंगुले वाले तिलिस्मी मकान मे चल कर कैदियो का मुकदमा सुना जाय, अत आज्ञानुसार बाहर के आये हुए मेहमान लोग हँसी-खुशी के साथ विदा किए गये और फिर कई दिनो तक तैयारी करने के बाद सभी का डेरा कूच हुआ और पहले की तरह पुन वह तिलिस्मी मकान हरा-भरा दिखाई देने लगा। कैदी भी उसी मकान के तहखानो मे पहुँचाये गये और सब का मुकदमा सुनने की तैयारी होने लगी।

---

1 यही काम उधर मालिनी ने किया था। खुद तो पहले ही से कामिनी बनी हुई थी मगर जब कुमार सो गये तब उन्हें बेहोश करके उनकी सूरत बदल दी और सुबह को उनके जागने के पहले ही अपना चेहरा साफ कर लिया।

4

अब हम थोड़ा-सा हाल नानक और उसकी मां का बयान करते हैं जो हर तरफ से कसूरवार होने पर भी महाराज की आज्ञानुसार कैद किये जाने से बच गये और उन्हें केवल देश-निकाले का दण्ड दिया गया।

यद्यपि महाराज ने उन दोनों पर दया की और उन्हें छोड़ दिया, मगर यह बात सर्वसाधारण को पसन्द न आई। लोग यही कहते रहे कि 'यह काम महाराज ने अच्छा नहीं किया और इसका नतीजा बहुत बुरा निकलेगा।' आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् नानक ने उस अहसान को भूल कर फसाद करने और लोगों की जान लेने पर ही कमर बांधी।

जब नानक की मां और नानक को देश-निकाले का हुक्म हो गया और इन्द्रदेव के आदमी इन दोनों को सरहद के पार करके लौट आये तब ये दोनों बहुत ही दुःखी और उदास हो एक पेड़ के नीचे बैठ कर सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिए। उस समय सवेरा हो चुका था और सूर्य की लालिमा पूरब में आसमान पर फैल रही थी।

रामदेई—कहो, अब क्या इरादा है? हम लोग तो बड़ी मुसीबत में फँस गए!

नानक—बेशक मुसीबत में फँस गए और बिल्कुल कंगाल कर दिये गए। तुम्हारे जेवरों के साथ ही साथ मेरे हर्बे भी छीन लिए गये और हम इस लायक भी न रहे कि किसी ठिकाने पहुँच कर रोजी के लिए कुछ उद्योग कर सकते।

रामदेई—ठीक है, मगर मैं समझती हूँ कि अगर हम लोग किसी तरह नन्हीं के यहाँ पहुँच जायेंगे तो खाने का ठिकाना हो जायेगा और उससे किसी तरह की मदद भी ले सकेंगे।

नानक—नन्हीं के यहाँ जाने में क्या फायदा होगा? वह तो खुद गिरफ्तार होकर कैद की हवा खा रही होगी। हाँ, उसका भतीजा बेशक बचा हुआ है जिसे उन लोगों ने छोड़ दिया और जो नन्हीं की जायदाद का मालिक बन बैठा होगा, मगर उससे किसी तरह की उम्मीद मुझको नहीं हो सकती।

रामदेई—ठीक है, मगर नन्हीं की लौंडियों में से दो-एक ऐसी हैं जिनसे मुझे मदद मिल सकती है।

नानक—मुझे इस बात की भी उम्मीद नहीं है, इसके अतिरिक्त वहाँ तक पहुँचने के लिए भी तो समय चाहिए, यहाँ तो शाम की भूख बुझाने को पल्ले में कुछ नहीं है।

रामदेई—ठीक है मगर क्या तुम अपने घर भी मुझे नहीं ले जा सकते? वहाँ तो तुम्हारे पास रुपये-पैसे की कमी नहीं होगी!

नानक—हाँ, यह हो सकता है, वहाँ पहुँचने पर फिर मुझे किसी तरह की तकलीफ नहीं हो सकती, मगर इस समय तो वहाँ तक पहुँचना भी कठिन हो रहा है। (लम्बी साँस लेकर) अफसोस, मेरा ऐयारी का बटुआ भी छीन लिया गया और हम लोग इस लायक भी नहीं रह गये कि किसी तरह सूरत बदल कर अपने को लोगों की आँखों से छिपा लेते।

रामदेई—खैर, जो होना था सो हो गया, अब इस समय अफसोस करने से काम नही चलेगा। सब जेवर छिन जाने पर भी मेरे पास थोडा-सा सोना बचा हुआ है, अगर इससे कुछ काम चले तो

नानक—(चौंक कर) क्या कुछ है ?

रामदेई—हाँ !

इतना कहकर रामदेई ने धोती के अन्दर से छिपी हुई सोने की एक करधनी निकाली और नानक के आगे रख दी।

नानक—(करधनी को हाथ मे लेकर) बहुत है, हम लोगो घर तक पहुँचा देने के लिए काफी है, और वहाँ पहुंचने पर किसी तरह की तकलीफ न रहेगी, क्योंकि वहाँ मेरे पास खाने-पीने की कमी नही है।

रामदेई—तो क्या वहाँ चलकर इन बातो को भूल

नानक—(बात काट कर) नही-नही, यह न समझना कि वहाँ पहुँच कर हम इन बातो को भूल जायँगे और बेकार बैठे टुकडे तोडेंगे, बल्कि वहाँ पहुँच कर इस बात का बन्दोबस्त करेंगे कि अपने दुश्मनो से बदला लिया जाय।

रामदेई—हां, मेरा भी यही इरादा है, क्योकि मुझे तुम्हारे बाप की बेमुरौवती का बडा रज है जिसने हम लोगो को दूध की मक्खी की तरह एकदम निकाल कर फेंक दिया और पिछली मुहब्बत का कुछ खयाल न किया। शान्ता और हरनामसिंह को पाकर ऐंठ गया और इस बात का कुछ भी खयाल न किया कि आखिर नानक भी तो उसका ही लडका है और वह ऐयारी भी जानता है।

नानक—(जोश के साथ) बेशक यह उसकी बेईमानी और हरामजदगी है ! अगर वह चाहता तो हम लोगो को बचा सकता था।

रामदेई—बचा लेना क्या, यह जो कुछ किया सब उसी ने तो किया। महाराज ने तो हुक्म दे ही दिया था कि 'भूतनाथ की इच्छानुसार इन दोनो के साथ वर्ताव किया जाय।'

नानक—बेशक ऐसा ही है ! उसी कम्बख्त ने हम लोगो के साथ ऐसा सलूक किया। मगर क्या चिन्ता है, इसका बदला लिये विना मैं कभी न छोड़ूँगा।

रामदेई—(आँसू बहाकर) मगर तेरी बातो पर मुझे विश्वास नही होता क्योंकि तेरा जोश थोडी ही देर का होता है।

नानक—(क्रोध के साथ रामदेई के पैरो पर हाथ रख के) मैं तुम्हारे चरणो की कसम खाकर कहता हूँ कि इसका बदला लिए बिना कभी न रहूँगा।

रामदेई—भला मैं भी तो सुनूँ कि तू क्या बदला लेगा ? मेरे ख्याल से तो वह जान से मार देने लायक है।

नानक—ऐसा ही होगा, ऐसा ही होगा ! जो तुम कहती हो वही करूँगा बल्कि उसके लडके हरनामसिंह को भी यमलोक पहुँचाऊँगा !

रामदेह—शाबाश ! मगर मेरा चित्त तब तक प्रसन्न नही होगा जब तक शान्ता का सिर अपने तलवो से न रगडने पाऊँगी !

नानक—मैं उसका सिर भी काटकर तुम्हारे सामने लाऊँगा और तब तुमसे आशीर्वाद लूँगा।

रामदेई—शाबाश, ईश्वर तेरा भला करे! मैं समझती हूँ कि इन बातों के लिए तू एक दफा फिर कसम खा जिसमें मेरी पूरी दिलजमई हो जाय।

नानक—(सूर्य की तरफ हाथ उठाकर) मैं त्रिलोकीनाथ के सामने हाथ उठाकर कसम खाता हूँ कि अपनी माँ की इच्छा पूरी करूँगा और जब तक ऐसा न कर लूँगा, अन्न न खाऊँगा।

रामदेई—(नानक की पीठ पर हाथ फेरकर) बस-बस, अब मैं प्रसन्न हो गई और मेरा आधा दुःख जाता रहा।

नानक—अच्छा, तो फिर यहाँ से उठो। (हाथ का इशारा करके) किसी तरह उस गाँव में पहुँचना चाहिए, फिर सब बन्दोबस्त होता रहेगा।

दोनों उठे और एक गाँव की तरफ रवाना हुए जो वहाँ से दिखाई दे रहा था।

5

पाठक, आपने सुना कि नानक ने क्या प्रण किया? अब अब यहाँ पर हम यह कह देना उचित समझते हैं कि नानक अपनी माँ को लिये हुए जब घर पहुँचा तो वहाँ उसने एक दिन के लिए भी आराम न किया। ऐयारी का बटुआ तैयार करने के बाद हर तरह का इन्तजाम करके और चार-पाँच शागिर्दों और नौकरों को साथ लेकर वह उसी दिन घर से बाहर निकला और चुनार की तरफ रवाना हुआ। जिस दिन कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की बारात निकलने वाली थी उस दिन वह चुनार की सरहद में मौजूद था। बारात की कैफियत उसने अपनी आँखों से देखी थी और उस बात की फिक्र में भी लगा हुआ था कि किसी तरह दो-चार कैदियों को कैद से छुड़ाकर अपना साथी बना लेना चाहिए और मौका मिलने पर राजा गोपालसिंह को भी इस दुनिया से उठा देना चाहिए।

अब हम कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का हाल बयान करते हैं।

दोपहर दिन का समय है और सब कोई भोजन इत्यादि से निश्चिन्त हो चुके हैं। एक सजे हुए कमरे में राजा गोपालसिंह, भरतसिंह, कुँअर आनन्दसिंह, भैरोसिंह और तारासिंह बैठे हुए हँसी-खुशी की बातें कर रहे हैं।

गोपालसिंह—(भरतसिंह से) क्या मुझे स्वप्न में भी इस बात की उम्मीद हो सकती थी कि आपसे किसी दिन मुलाकात होगी? कदापि नहीं, क्योंकि लोगों के कहने पर मुझे विश्वास हो गया कि आप जंगल में डाकुओं के हाथ से मारे गए…

भरतसिंह—और इसका बहुत बड़ा सबब यह था कि तब तक दारोगा की बेईमानी का आपको पता न लगा था, उसे आप ईमानदार समझते थे और उसी ने मुझे कैद किया था।

गोपालसिंह—बेशक यही बात है मगर खैर, ईश्वर जिसका सहायक रहता है वह किसी के बिगाडे नही बिगड सकता। देखिए, मायारानी ने मेरे साथ क्या कुछ नही किया, मगर ईश्वर ने मुझे बचा लिया और साथ ही इसके बिछुडे हुओ को भी मिला दिया।

भरतसिंह—ठीक है, मगर मेरे प्यारे दोस्त, मैं कह नही सकता कि कम्बख्त दारोगा ने मुझे कैसी-कैसी तकलीफें दी हैं और मजा तो यह है कि इतना करने पर भी वह बराबर अपने को निर्दोष ही बताता रहा। अत जब मैं अपना हाल बयान करूँगा तब आपको मालूम होगा कि दुनिया मे कैसे-कैसे नमकहराम और सगीन लोग होते है और बदो के साथ नेकी करने का नतीजा बहुत बुरा होता है।

गोपालसिंह—ठीक है, ठीक है, इन्ही बातो को सोचकर तो भैरोसिंह बार-बार मुझसे कहते हैं कि 'आपने नानक को सूखा छोड दिया सो अच्छा नही किया, वह बद है और बदो के साथ नेकी करना वैसा ही है जैसा नेको के साथ बदी करना।'

भरतसिंह—भैरोसिंह का कहना वाजिब है, मैं उनका समर्थन करता हूँ।

भैरोसिंह—कृपानिधान, सच तो यह है कि नानक की तरफ से मुझे किसी तरह बेफिक्री होती ही नही। मैं अपने दिल को कितना ही समझाता हूँ मगर वह जरा भी नही मानता। ताज्जुब नही कि

भैरोसिंह इतना कह ही रहा था कि सामने से भूतनाथ आता हुआ दिखाई पडा।

गोपालसिंह—अजी वाह जी भूतनाथ, चार-चार दफा बुलाने पर भी हमे आपके दर्शन नही होते!

भूतनाथ—(मुस्कुराता हुआ) अभी क्या हुआ है, दो-चार दिन बाद तो मेरे दर्शन और भी दुर्लभ हो जायेंगे।

गोपालसिंह—(ताज्जुब से) सो क्यो?

भूतनाथ—यही कि मेरा सपूत नानक शहर मे आ पहुँचा है और मेरी अन्त्येष्टि क्रिया करके बहुत जल्द अपने सिर का बोझ हलका करने की फिक्र मे लगा है। (बैठ कर) कृपा कर आप भी जरा होशियार रहियेगा।

गोपालसिंह—तुम्हे कैसे मालूम हुआ कि वह इस बदनीयती के साथ यहाँ पर आ गया है?

भूतनाथ—मुझे अच्छी तरह मालूम हो गया है। इसी से तो मुझे यहाँ आने मे देर हो गई क्योकि मैं यह हाल कहने और तीन-चार दिन की छुट्टी लेने के लिए महाराज के पास चला गया था, वहाँ से लौटा हुआ आपके पास आ रहा हूँ।

गोपालसिंह—तो क्या महाराज से छुट्टी ले आये?

भूतनाथ—जी हाँ, अब आपसे यह पूछना है कि आप अपने लिए क्या बन्दोबस्त करेंगे?

गोपालसिंह—तुम तो इस तरह की बाते करते हो जैसे उसकी तरफ से कोई बहुत बडा नन्दद्रुद हो गया हो! वह बेचारा कल का लौंडा हम लोगो के साथ क्या कर सकता है?

भूतनाथ—सो तो ठीक है, मगर दुश्मन को कभी छोटा और कमजोर नही

समझना चाहिए।

गोपालसिंह—तुम्हे ऐसा ही डर है तो कहो बैठे-ही-बैठे चौबीस घण्टे के अन्दर उसे गिरफ्तार कराकर तुम्हारे हवाले कर दूं ?

भूतनाथ—यह मुझे विश्वास है और आप ऐसा कर सकते हैं, मगर मुझे यह मजूर नही है, क्योकि मैं जरा दूसरे ढग से उसका मुकाबला करना चाहता हूँ। आप जरा बाप-बेटे की लडाई देखिए तो! हाँ, अगर वह आपकी तरफ झुके, तो जैसा मौका देखिये, कीजियेगा।

गोपालसिंह—खैर, ऐसा ही सही! मगर तुमने क्या सोचा है, जरा अपना मनसूबा तो सुनाओ!

इसके बाद उन लोगो मे देर तक बातें होती रही और दो घण्टे के बाद भूतनाथ उठकर अपने डेरे की तरफ चला गया।

6

नानक जब चुनारगढ की सरहद पर पहुँचा, तब सोचने लगा कि दुश्मनो से क्योकर बदला लेना चाहिए। वह पाँच आदमियो को अपना शिकार समझे हुए था और उन्ही पाँचो की जान लेने का विचार करता था। एक तो राजा गोपालसिंह, दूसरे इन्द्रदेव, तीसरा भूतनाथ, चौथा हरनामसिंह और पाँचवी शान्ता। बस, ये ही पाँच उसकी आँखो मे खटक रहे थे, मगर इनमे से दो अर्थात् राजा गोपालसिंह और इन्द्रदेव के पास फटकने की तो उसकी हिम्मत नही पडती थी और वह समझता था कि ये दोनो तिलिस्मी आदमी हैं, इनके काम जादू की तरह हुआ करते हैं और इनमे लोगो के दिल की बात समझ जाने की कुदरत है। मगर बाकी तीनो को वह निरा शिकार ही समझता था और विश्वास करता था कि इन तीनो को किसी न किसी तरह फँसा लेंगे। अत चुनारगढ की सरहद मे आ पहुँचने के बाद उसने गोपालसिंह और इन्द्रदेव का खयाल तो छोड दिया और भूतनाथ की स्त्री और उसके लडके हरनामसिंह की जान लेने के फेर मे पडा। साथ ही इसके यह भी समझ लेना चाहिए कि नानक यहाँ अकेला नही आया था, बल्कि समय पर मदद पहुँचाने के लायक सात-आठ आदमी और भी अपने साथ लाया था, जिसमे से चार-पाँच तो उसके शागिर्द ही थे।

दोनो कुमारो की शादी मे जिस तरह दूर-दूर के मेहमान और तमाशबीन लोग आये थे, उसी तरह साधु-महात्मा तथा साधु वेषधारी पाखण्डी लोग भी बहुत से इकट्ठे हो गये थे, जिन्हें सरकार की तरफ से खाने-पीने को भरपूर मिलता था और इस लालच मे पडे हुए उन लोगो ने अभी तक चुनारगढ का पीछा नही छोडा था तथा तिलिस्मी मकान के चारो तरफ तथा आस-पास के जगलो मे डेरा डाले हुए पडे थे। नानक और उसके साथी लोग भी साधुओ ही के वेष मे वहाँ पहुँचे और उसी मडली मे मिल-जुलकर रहने लगे।

नानक को यह बात मालूम थी कि भूतनाथ का डेरा तिलिस्मी इमारत के अन्दर है और वह वहाँ बडी कडी हिफाजत के साथ रहता है। इसलिए वह कभी-कभी यह सोचता था कि मेरा काम सहज ही मे नही हो जायेगा, बल्कि उसके लिए बडी भारी मेहनत करनी पडेगी। मगर वहाँ पहुँचने के कुछ ही दिन बाद (जब शादी-व्याह से सब कोई निश्चिन्त होकर तिलिस्मी इमारत मे आ गए) उसने सुना और देखा कि महाराज की आज्ञानुसार भूतनाथ ने स्त्री और लडके सहित तिलिस्मी इमारत के बाहर एक बहुत बडे और खूबसूरत खेमे मे डेरा डाला है, अतएव वह बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसे विश्वास हो गया कि मैं अपना काम शीघ्र और सुभीते के साथ निकाल लूँगा।

नानक ने और भी दो-तीन रोज तक इन्तजार किया और इस बीच मे यह भी जान लिया कि भूतनाथ के खेमे की कुछ विशेष हिफाजत नही होती और पहरे वगैरह का इन्तजाम भी साधारण-सा ही है तथा उसके शागिर्द लोग भी आजकल मौजूद नही है।

रात आधी से कुछ ज्यादा जा चुकी थी। यद्यपि चन्द्रदेव के दर्शन नही होते थे, मगर आसमान साफ होने के कारण टुटपूँजिया तारागण अपनी नामवरी पैदा करने का उद्योग कर रहे और नानक जैसे बुद्धिमान लोगो से पूछ रहे थे कि यदि हम लोग इकट्ठे हो जायें तो क्या चन्द्रमा से चौगुनी और पाँचगुनी चमक-दमक नही दिखा सकते तथा जवाब मे यह भी सुनना चाहते थे कि 'नि सन्देह !' ऐसे समय मे एक आदमी स्याह लबादा ओढे रहने पर भी लोगो की निगाहो से अपने को बचाता हुआ भूतनाथ के खेमे की तरफ जा रहा है। पाठक समझ ही गए होगे कि यह नानक है, अत जब वह खेमे के पास पहुँचा तो अपने मतलब का सन्नाटा देखकर खडा हो गया और किसी के आने का इन्तजार करने लगा। थोडी ही देर मे एक दूसरा आदमी भी उसके पास आया और दो-चार सायत तक बातें करके चला गया। उस समय नानक जमीन पर लेट गया और धीरे-धीरे खिसकता हुआ खेमे की कनात के पास जा पहुँचा, तब उसे धीरे से उठाकर अन्दर चला गया। यहाँ उसने अपने को गुलामगर्दिश मे पाया, मगर यहाँ बिल्कुल ही अधकार था, हाँ यह जरूर मालूम होता था कि आगे वाली कनात के अन्दर अर्थात् खेमे मे कुछ रोशनी हो रही है। नानक फिर वहाँ लेट गया और पहले की तरह यह दूसरी कनात भी उठाकर खेमे के अन्दर जाने का विचार कर ही रहा था कि दाहिनी तरफ से कुछ खडखडाहट की आवाज मालूम पडी। वह चौंका और उसी अँधेरे मे तीन-चार कदम बाईं तरफ हटकर पुन कोई आवाज सुनने और उसे जाँचने की नीयत से ठहर गया। जब थोडी देर तक किसी तरह की आहट नही मालूम हुई तो पहले की तरह ही जमीन पर लेट गया और कनात उठाकर अन्दर जाना ही चाहता था कि दाहिनी तरफ फिर किसी के पैर पटक-पटक कर चलने की आहट मालूम हुई। वह खडा हो गया और पुन चार-पाँच कदम पीछे की तरफ (बाईं तरफ) हट गया, मगर इसके बाद फिर किसी तरह की आहट मालूम न हुई। कुछ देर तक इन्तजार करने के बाद वह पुन जमीन पर लेट गया और कनात के अन्दर सिर डाल कर देखने लगा। कोने की तरफ एक मामूली शमादान जल रहा था, जिसकी मद्धिम रोशनी मे दो चारपाई बिछी हुई दिखाई पडी। कुछ देर तक गौर करने पर नानक को निश्चय हो गया कि इन दोनो चारपाइयो पर भूतनाथ तथा उसकी स्त्री

शान्ता सोई हुई है। परन्तु उनका लडका हरनामसिंह खेमे के अन्दर दिखाई न दिया और उसके लिए नानक को कुछ चिन्ता हुई, तथापि वह साहस करके खेमे के अन्दर चला ही गया।

डरता-काँपता नानक धीरे-धीरे चारपाई के पास पहुँच गया, चाहा कि खजर से इन दोनो का गला काट डाले, मगर फिर यह सोचने लगा कि पहले किस पर वार करूँ, भूतनाथ पर या शान्ता पर? वे दोनो सिर से पैर तक चादर ताने पडे हुए थे, इसमे यह मालूम करने की जरूरत थी कि किस चारपाई पर कौन सो रहा है, साथ ही इसके नानक इस बात पर भी गौर कर रहा था कि रोशनी बुझा दी जाये या नही। यद्यपि वह वार करने के लिए खजर हाथ मे ले चुका था, मगर उसकी दिली कमजोरी ने उसका पीछा नही छोडा था और उसका हाथ काँप रहा था।

7

किशोरी, कामिनी, कमलिनी और लाडिली ये चारो बडी मुहब्बत के साथ अपना दिन बिताने लगी। इनकी मुहब्बत दिखावा नही थी, बल्कि दिली और सचाई के साथ थी। चारो ही जमाने के ऊँच-नीच को अच्छी तरह समझ चुकी थी और खूब जानती थी कि दुनिया मे हर एक के साथ दुःख और सुख का चरखा लगा ही रहता है, खुशी तो मुश्किल से मिलती है, मगर रज और दुःख के लिए किसी तरह का उद्योग नही करना पडता, यह आप से आप पहुँचता है, और एक साथ दस को लपेट लेने पर भी जल्दी नही छोडता, इसलिए बुद्धिमान का काम यही है कि जहाँ तक हो सके खुशी का पल्ला न छोडे और न कोई काम ऐसा करे, जिसमे दिल को किसी तरह का रज पहुँचे। इन चारो औरतो का दिल उन नादान और कमीनी औरतो का सा नही था, जो दूसरो को खुश देखते ही जलभुन कर कोयला हो जाती हैं और दिन-रात कुप्पे की तरह मुँह फुलाये आँखो से पाखण्ड के आँसू बहाया करती है अथवा घर की औरतो के साथ मिल-जुलकर रहना अपनी बेइज्जती समझती हैं।

इन चारो का दिल आईने की तरह साफ था। नही-नही, हम भूल गये, हमे दिल के साथ आईने की उपमा देना पसन्द नही। न मालूम लोगो ने इस उपमा को किस लिए पसन्द कर रखा है। उपमा मे उसी वस्तु का व्यवहार करना चाहिए जिसकी प्रकृति मे उपमेय से किसी तरह का फर्क न पड़े, मगर आईने (शीशे) मे तो यह बात पाई नही जाती, हरएक आईना बेऐब, साफ और बिना धब्बे के नही होता और वह हर एक की सूरत एक सी भी नही दिखाता बल्कि जिसकी जैसी सूरत होती है, उसके मुकाबले मे वैसा ही बन जाता है। इसलिए आईना उन लोगों के दिल को कहना उचित है जो नीति-कुशल हैं या जिन्होंने यह बात ठान ली है कि जो जैसा करे उसके साथ वैसा ही करना चाहिए, चाहे वह अपना हो या पराया, छोटा हो या बडा। मगर इन चारो मे यह बात न थी, ये बडो की झिडकी को आशीर्वाद और छोटो की ऐंठ को उनकी नादानी समझती

थी। जब कोई हमजोली या आपस वाली क्रोध भरी हुई अपना मुंह बिगाडे इनके सामने आती तो यदि मौका होता तो ये हँसकर कह देती कि 'वाह, ईश्वर ने अच्छी सूरत बनाई है!' या 'बहिन, हमने तो तुम्हारा जो कुछ बिगाडा सो बिगाडा मगर तुम्हारी सूरत ने तुम्हारा क्या कसूर किया है जो तुम उसे बिगाड रही हो?' बस, इतने ही मे उसका रग बदल जाता। इन बातो को विचार कर हम इनके दिल का आईने के साथ मिलान करना पसन्द नही करते बल्कि यह कहना मुनासिब समझते है कि 'इनका दिल समुद्र की तरह गम्भीर था।'

इन चारो को इस का खयाल ही न था कि हम अमीर हैं, हाथ-पैर हिलाना या घर का कामकाज करना हमारे लिए पाप है। ये खुशी से घर का काम जो इनके लायक होता करती औरी खाने-पीने क चीजो पर विशेष ध्यान रखती। सबसे बडा खयाल इन्हे इस बात का रहता था कि इनके पति इनसे किसी तरह रज न होने पावें और घर के किसी बडे बुजुर्ग को इन्हे बेअदब कहने का मौका न मिले। महारानी चन्द्र-कान्ता की तो बात ही दूसरी है, ये चपला और चम्पा को भी सास की तरह समझती और इज्जत करती थी। घर की लौडियाँ तक इनसे प्रसन्न रहती और जब किसी लौडी से कोई कसूर हो जाता तो झिडकी और गालियो के बदले नसीहत के साथ समझाकर ये उसे कायल और शर्मिन्दा कर देती और उसके मुँह से कहला देती कि 'बेशक मुझसे भूल हुई, आइन्दा कभी ऐसा न होगा!' सबसे विचित्र बात तो यह थी कि इनके चेहरे पर रज क्रोध या उदासी कभी दिखाई देती ही न थी और जब कभी ऐसा होता तो किसी भारी घटना का अनुमान किया जाता था। हाँ, उस समय इनके दु ख और चिन्ता कोई ठिकाना नही रहता था जब ये अपने पति को किसी कारण दु खी देखती। ऐसी अवस्था मे इनकी सच्ची भक्ति के कारण इनके पति को अपनी उदासी छिपानी पडती या इन्हे प्रसन्न करने और हँसाने के लिए और किसी तरह का उद्योग करना पडता। मतलब यह है कि इन्होने घर भर का दिल अपने हाथ मे कर रक्खा था और ये घर भर की प्रसन्नता का कारण समझी जाती थी।

भूतनाथ की स्त्री शान्ता का इन्हे बहुत बडा खयाल रहता और ये उसकी पिछली घटनाओ को याद करके उसकी पति-भक्ति की सराहना किया करती।

इसमे कोई सन्देह नही कि इन्हें अपनी जिन्दगी मे दु खो के बडे-बडे समुद्र पार करने पडे थे परन्तु ईश्वर की कृपा से जब ये किनारे लगी, तब इन्हे कल्पवृक्ष की छाया मिली और किसी बात की परवाह न रही।

इस समय सध्या होने मे घण्टे भर की देर है। सूर्य भगवान् अस्ताचल की तरफ तेजी के साथ झुके चले जा रहे है और उनकी लाल-लाल पिछली किरणो से बडी-बडी अटारियाँ तथा ऊँचे-ऊँचे वृक्षो के ऊपरी हिस्सो पर ठहरा हुआ सुनहरा रग बडा ही सुहा-वना मालूम पडता है। ऐसा जान पडता है मानो प्रकृति ने प्रसन्न होकर अपना गौरव बढाने के लिए अपनी सहचरियो और सहायको को सुनहरा ताज पहना दिया है।

ऐसे समय मे किशोरी, कामिनी, लाडिली और कमला अटारी पर एक सजे हुए बँगले के अन्दर बैठी जालीदार खिडकियो से उस जगल की शोभा देख रही हैं जो इस

तिलिस्मी मकान से थोड़ी दूर पर है और साथ ही इसके मीठी बातें भी करती जाती हैं।

कमलिनी—(किशोरी से) बहिन एक दिन वह था कि हमें अपनी इच्छा के विरुद्ध ऐसे बल्कि इससे भी बढ़कर भयानक जंगलों में घूमना पड़ता था और उस समय यह सोचकर डर मालूम पड़ता था कि कोई शेर इधर-उधर से निकलकर हम पर हमला न करे, और एक आज का दिन है कि इस जंगल की शोभा भली मालूम पड़ती है और इसमें घूमने को जी चाहता है।

किशोरी—ठीक है, जो काम लाचारी के साथ करना पड़ता है वह चाहे अच्छा ही क्यों न हो परन्तु चित्त को बुरा लगता है, फिर भयानक तथा कठिन कामों का तो कहना ही क्या! मुझे तो जंगल में शेर और भेड़ियों का इतना ख्याल न होता था जितना दुश्मनों का, मगर वह समय और ही था ईश्वर न करे किसी दुश्मन को दिखे। उस समय हम लोगों की किस्मत बिगड़ी हुई थी और अपने साथी लोग भी दुश्मन बनकर सताने के लिए तैयार हो जाते थे। (कमला की तरफ देखकर) भला तुम्हीं बताओ कि उस चमेला छोकरी का मैंने क्या बिगाड़ा था जिसने मुझे हर तरह से तबाह कर दिया? अगर वह मेरी मुहब्बत का हाल मेरे पिता से न कह देती तो मुझ पर वैसी भयानक मुसीबत क्यों आ जाती?

कमला—बेशक ऐसा ही है, मगर उसने जैसी नमकहरामी की, वैसी ही सजा पाई। मेरे हाथ के कोड़े[1] वह जन्म भर न भूलेगी।

किशोरी—मगर इतना होने पर भी उसने मेरे पिता के जी का ठीक-ठीक भेद न बताया।

कमला—बेशक वह बहुत ही जिद्दी निकली, मगर तुमने भी यह बड़ी नादानी दिखाई कि अन्त में उसे छोड़ देने का हुक्म दे दिया। अब भी वह जहाँ जायगी, दुःख ही भोगेगी।

किशोरी—इसके अतिरिक्त उस जमाने में धनपत के भाई ने क्या मुझे कम तकलीफ दी थी जब मैं नागर के यहाँ कैद थी! उस कम्बख्त की तो सूरत देखने से मेरा खून खुश्क हो जाता था।

लाडिली—वही जिसे भूतनाथ ने जहन्नुम में पहुँचा दिया? मगर नागर इस मामले को बिल्कुल ही छिपा गई, मायारानी से उसने कुछ भी न कहा और इसी में उसका भला भी था।

किशोरी—(लाडिली से) बहिन, तुम तो बड़ी नेक हो और तुम्हारा ध्यान भी धर्म-विषयक कामों में विशेष रहता है, मगर उन दिनों तुम्हें क्या हो गया था कि माया-रानी के साथ बुरे कामों में अपना दिन बिताती थी और हम लोगों की जान लेने के लिए तैयार रहती थीं?

लाडिली—(लज्जा और उदासी के साथ) फिर तुमने वही चर्चा छेड़ी! मैं कई दफे हाथ जोड़कर तुमसे कह चुकी हूँ कि अब उन बातों की याद दिलाकर मुझे शर्मिन्दा

1. देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, पाँचवाँ भाग, चौदहवें बयान का अन्त।
   ,, ,, आठवाँ भाग, नौवाँ बयान।

करो दुःख न दो, मेरे मुंह मे बार-बार स्याही न लगाओ। उन दिनो मैं पराधीन थी मेरा कोई सहायक न था, मेरे लिए कोई और ठिकाना न था, और उस दुष्टा का साथ छोडकर मैं अपने को कही छिपा भी नही सकती थी और डरती थी कि वहाँ से निकल भागने पर कही मेरी इज्जत पर न आ बने! मगर बहिन, तुम जान-बूझकर बार-बार उन बातो की याद दिलाकर मुझे सताती हो, कहो बैठूं या यहाँ से उठ जाऊँ?

किशोरी—अच्छा-अच्छा जाने दो, माफ करो, मुझसे भूल गई, मगर मेरा मतलब वह न था जो तुमने समझा है, मैं दो-चार बातें नानक के विषय मे पूछना चाहती थी जिसका पता अभी तक नही लगा और जो भेद की तरह हम लोगो

लाडिली—(बात काटकर) वे बातें भी तो मेरे लिए वैसी ही दुःखदायी है।

किशोरी—नही-नही, मैं यह न पूछूंगी कि तुमने नानक के साथ रामभोली बनकर क्या-क्या किया, बल्कि यह पूछूंगी कि उस टीन के डिब्बे मे क्या था जो नानक ने चुरा लाकर तुम्हें बजरे मे दिया था? कुएँ मे से हाथ कैसे निकला था? नहर के किनारे वाले बँगले मे पहुँचकर वह क्योकर फंसा लिया गया? उस बँगले मे वह तस्वीरें कैसी थी? असली रामभोली कहाँ गई और क्या हुई? रोहतासगढ तहखाने के अन्दर तुम्हारी तस्वीर किसने लटकाई और तुम्हे वहाँ का भेद कैसे मालूम हुआ था इत्यादि बातें मैं कई दफे कई तरह से सुन चुकी हूँ मगर उनका असल भेद अभी तक कुछ मालूम न हुआ।[1]

लाडिली—हाँ, इन सब बातो का जवाब देने के लिए मैं तैयार हूँ। तुम जानती हो और अच्छी तरह सुन और समझ भी चुकी हो कि वह तिलिस्मी बाग तरह-तरह के अजायबातो से भरा हुआ है, विशेष नही तो भी वहाँ का बहुत-कुछ हाल मायारानी और दारोगा को मालूम था। वहाँ या उसकी सरहद मे ले जाकर किसी को डराने, धमकाने या तकलीफ देने के लिए कोई ताज्जुब का तमाशा दिखाना कौन बडी बात थी!

किशोरी—हाँ, सो तो ठीक ही है।

लाडिली—और फिर नानक जान-बूझकर काम निकालने के लिए ही तो गिरफ्तार किया गया था। इसके अतिरिक्त तुम पहले यह भी सुन चुकी हो कि दारोगा के बँगले या अजायबघर से खास बाग तक नीचे-नीचे रास्ता बना हुआ है, ऐसी अवस्था मे नानक के साथ वैसा बर्ताव करना कौन-सी बडी बात थी!

किशोरी—बेशक ऐसा ही है, अच्छा उस डिब्बे वगैरह का भेद तो बताओ!

लाडिली—उस गठरी मे जो कलमदान था, वह तो हमारे विशेष काम का न था मगर उस डिब्बे मे वही इन्दिरा वाला कलमदान था जिसके लिए दारोगा साहब बेताब हो रहे थे और चाहते थे कि वह किसी तरह पुन. उनके कब्जे मे आ जाय। असल मे उसी कलमदान के लिए मुझे रामभोली बनना पडा था। दारोगा ने असली रामभोली को तो गिरफ्तार करवा के इस तरह मरवा डाला कि किसी को कानो-कान खबर भी न हुई और मुझे रामभोली बनकर यह काम निकालने की आज्ञा दी। लाचार मैं रामभोली बनकर नानक से मिली और उसे अपने वश मे करने के बाद इन्द्रदेव जी के मकान मे से यह कलमदान तथा उसके साथ और भी कई तरह के कागज नानक की मार्फत चुरा

1 देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, चौथा भाग, नानक का बयान।

मँगवाये। मुझे तो उस कलमदान की सूरत देखने से भी डर मालूम होता था क्योकि मैं जानती थी कि वह कलमदान हम लोगो के खून का प्यासा और दारोगा के वडे-वडे भेदो से भरा हुआ है। इसके अतिरिक्त उस पर इन्दिरा की बचपन की तस्वीर भी वनी हुई थी और सुन्दर अक्षरो मे इन्दिरा का नाम लिखा हुआ था, जिसके विषय मे मैं उन दिनो जानती थी कि वे माँ-वेटी वडी वेदर्दी के साथ मारी गईं। यही सवव था कि उस कलमदान की सूरत देखते ही मुझे तरह-तरह की वातें याद आ गईं, मेरा कलेजा दहल गया और मैं डर के मारे काँपने लगी। खैर, जब मैं नानक को लिए हुए जमानिया की सरहद मे पहुँची तो उसे धनपत के हवाले करके खास वाग मे चली गई, अपना दुपट्टा नहर मे फेंकती गई। दूसरी राह से उस तिलिस्मी कुएँ के नीचे पहुँच कर पानी का प्याला और बनावटी हाथ निकालने के वाद मायारानी से जा मिली और फिर बचा हुआ काम धनपत और दारोगा ने पूरा किया। दारोगा वाले वँगले मे जो तस्वीर रक्खी हुई थी वह केवल नानक को धोखा देने के लिए थी, उसका और कोई मतलव न था, और रोहतासगढ के तहखाने मे जो मेरी तस्वीर[1] आप लोगो ने देखी थी, वह वास्तव मे दिग्विजयसिंह की बुआ ने मेरे सुभीते के लिए लटकाई थी और तहखाने की वहुत-सी वातें समझाकर वता दिया था कि 'जहाँ तू अपनी तस्वीर देखना समझ लेना कि उसके फलाँ तरफ फलाँ वात है' इत्यादि। बस, वह तस्वीर इतने ही काम के लिए लटकाई गई, थी। वह बुढिया वडी नेक थी, और उस तहखाने का हाल वनिस्वत दिग्विजयसिंह के वहुत ज्यादा जानती थी, मैं पहले भी महाराज के सामने वयान कर चुकी हूँ कि उसने मेरी मदद की थी। वह कई दफे मेरे डेरे पर आई थी और तरह-तरह की वातें समझा गई थी। मगर न तो दिग्विजयसिंह उसकी कदर करता था और न वही दिग्विजयसिंह को चाहती थी। इसके अतिरिक्त यह भी कह देना आवश्यक है कि मैं तो उस बुढिया की मदद से तहखाने के अन्दर चली गई थी मगर कुन्दन अर्थात् धनपत ने वहाँ जो कुछ किया वह मायारानी के दारोगा की वदौलत था। घर लौटने पर मुझे मालूम हुआ कि दारोगा वहाँ कई दफे छिपकर गया और कुन्दन से मिला था मगर उसे मेरे वारे मे कुछ खबर न थी, अगर खबर होती तो मेरे और कुन्दन के वीच जुदाई न रहती। मगर मुझे इस वात का ताज्जुब जरूर है कि वापस घर पहुँचने पर भी धनपत ने वहाँ की वहुत-सी वातें मुझसे छिपा रक्खी।

किशोरी—अच्छा, यह तो वताओ कि रोहतासगढ मे जो तस्वीर तुमने कुन्दन को दिखाने के लिए मुझे दी थी, वह तुम्हे कहाँ से मिली थी और तुम्हे तथा कुन्दन को उसका असली हाल क्योकर मालूम हुआ था ?

लाडिली—उन दिनो मैं यह जानने के लिए वेताव हो रही थी कि कुन्दन असल मे कौन हैं। मुझे इस वात का भी शक हुआ था कि वह राजा साहव (वीरेन्द्रसिंह) की कोई ऐयारा होगी और यही शक मिटाने के लिए मैंने वह तस्वीर खुद वनाकर उसे दिखाने के लिए तुम्हें दी थी। असल मे उस तस्वीर का भेद हम लोगों को मनोरमा की

1 देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, चौथा भाग, दसवाँ वयान।

जुबानी मालूम हुआ था और मनोरमा ने इन्दिरा से उस समय सुना था जब मनोरमा को माँ समझ के वह उसके फेर मे पड गई थी।[1]

किशोरी—ठीक है मगर इसमे भी कोई शक नही कि इन सब बखेडो की जड वही कम्बख्त दारोगा है। यदि जमानिया के राज्य मे दारोगा न होता तो इन सब बातो मे से एक भी न सुनाई देती और न हम लोगो की दुखमय कहानी का कोई अश लोगो के कहने सुनने के लिए पैदा होता। (कमलिनी से) मगर बहिन, यह तो बताओ कि इस हरामी के पिल्ले (दारोगा) का कोई वारिस या रिश्तेदार भी दुनिया मे है या नही ?

कमलिनी—सिवाय एक के और कोई नही। दुनिया का कायदा है कि जब आदमी भलाई या बुराई कुछ सीखता है तो पहले अपने घर ही से उसे आरम्भ करता है। माँ-बाप के अनुचित लाड-प्यार और उनकी असावधानी से बुरी राह पर चलने वाले लडके घर ही मे श्रीगणेश करते है और तब कुछ दिन के बाद वे दुनिया मे मशहूर होने योग्य होते है। यही बात इस हरामखोर की भी थी, इसने पहले अपने नाते-रिश्तेदार ही पर सफाई का हाथ फेरा और उन्हे जहन्नुम पहुँचाकर समय के पहले घर का मालिक बन बैठा। साधु का भेष धरना उसने लडकपन ही से सीखा है और विशेष करके इसके इसी भेष की बदौलत लोग धोखे मे भी पडे। हमारे राजा गोपालसिंह ने भी (मुस्कुराती हुई) इसे वशिष्ठ मुनि ही समझकर अपने यहाँ रक्खा था। हाँ, इसका एक चचेरा भाई जरूर बच गया था जो इसके हत्थे नही चढा था, क्योंकि वह खुद भी परले सिरे का बदमाश था और इसकी करतूतो को खूब समझता था जिससे लाचार होकर इसे उसकी खुशामद करनी ही पडी और उसे अपना साथी बनाना ही पडा।

किशोरी—क्या वह मर गया ? उसका क्या नाम था ?

कमलिनी—नही वह मरा नही, मगर मरने के ही बराबर है, क्योकि वह हमारे यहाँ कैद है। उसने अपना नाम शिखण्डी रख लिया था। तुम जानती ही हो कि जब मैं जमानिया के खास बाग के तहखाने और सुरग की राह से दोनो कुमारो तथा बाकी कैदियो को लेकर बाहर निकल रही थी तो हाथी वाले दरवाजे पर उसने इनके (इन्द्रजीतसिंह) के ऊपर वार किया था।[2]

किशोरी—हाँ-हाँ, तो क्या वह वही कम्बख्त था ?

कमलिनी—हाँ वही था। उसे मैं अपना पक्षपाती समझती थी मगर बेईमान ने मुझे धोखा दिया। ईश्वर की कृपा थी कि पहले ही बार मे वह उसी जगह गिरफ्तार हो गया, नही तो शायद मुझे धोखे मे पडकर बहुत तकलीफें उठानी पडती और

कमलिनी ने इतना कहा ही था कि उसका ध्यान सामने के जगल की तरफ जा पडा। उसने देखा कि कुँअर आनन्दसिंह एक सब्ज घोडे पर सवार सामने की तरफ से आ रहे हैं, साथ मे केवल तारासिंह एक छोटे टट्टू पर सवार बातें करते आ रहे है, और दूसरा कोई आदमी नही है। साथ ही इसके कमलिनी को एक और अद्भुत दृश्य दिखाई दिया जिससे वह यकायक चौंक पडी और इसलिए उसका तथा और सभी का

1 देखिये चन्द्रकान्ता सन्तति, तीसरा भाग, दसवाँ बयान, और उन्नीसवाँ भाग, छठवाँ बयान।
2 देखिए „ „ आठवाँ भाग, दूसरा बयान।

ध्यान भी उसी तरफ जा पडा ।

उसने देखा कि आनन्दसिंह और तारासिंह जगल मे से निकलकर कुछ ही दूर मैदान मे आये थे कि यकायक एक वार पुन पीछे की तरफ घूमे और गौर के साथ कुछ देखने लगे । कुछ ही देर वाद और भी दस-वारह नकाबपोश आदमी हाथ मे तीर-कमान लिए दिखाई पडे जो जगल से वाहर निकलते ही इन दोनो पर फुर्ती के साथ तीर चलाने लगे । ये दोनो भी म्यान से तलवार निकालकर उन लोगो की तरफ झपटे और देखते ही देखते सब लडते-भिडते पुन जगल मे घुसकर देखने वालो की नजरो से गायब हो गए । कमलिनी, किशोरी और कामिनी वगैरह इस घटना को देखकर घवरा गयी, सभी की इच्छानुसार कमला दौडी हुई गई और एक लौडी को इस मामले की खवर करने के लिए नीचे कुँअर इन्द्रजीतसिंह के पास भेजा ।

8

नानक इस बात को सोच रहा था कि मैं पहले किस पर वार करूँ ? अगर पहले शान्ता पर वार करूँ तो आहट पाकर भूतनाथ जाग जायगा और मुझे गिरफ्तार कर लेगा क्योकि मैं अकेला किसी तरह उसका मुकावला नही कर सकता अतएव पहले भूतनाथ ही का काम तमाम करना चाहिए । अगर इसकी आहट पाकर शान्ता जाग भी जायगी तो कोई चिन्ता नही, मैं उसे साँस लेने की भी मोहलत न दूँगा, वह औरत की जात मेरे मुकावले मे क्या कर सकती है । मगर ऐसा करने के लिए यह जानने की जरूरत है कि इन दोनो मे शान्ता कौन है और भूतनाथ कौन ।

थोडी ही देर के अन्दर ऐसी वहुत-सी वातें नानक के दिमाग मे दौड गईं और उन दोनो मे भूतनाथ कौन है इसका पता न लगा सकने के कारण लाचार होकर उसने यह निश्चय किया कि इन दोनो ही को वेहोश करके यहाँ से घर ले चलना चाहिए । ऐसा करने से मेरी माँ वहुत ही प्रसन्न होगी ।

नानक ने अपने बटुए मे से वहुत ही तेज वेहोशी की दवा निकाली और उन दोनो के मुँह पर चादर के ऊपर ही छिडककर उनके वेहोश होने का इन्तजार करने लगा ।

थोडी ही देर मे उन दोनो ने हाथ-पैर हिलाये जिससे नानक समझ गया कि अब इन पर वेहोशी का असर हो गया, अत उसने दोनो के ऊपर से चादर हटा दी और तभी देखा कि इन दोनो मे भूतनाथ नही है वल्कि ये दोनो औरतें ही हैं जिनमे एक भूतनाथ की स्त्री, शान्ता है । उस दूसरी औरत को नानक पहचानता न था ।

नानक ने फिर एक दफे वेहोशी की दवा सुँघा कर शान्ता को अच्छी तरह वेहोश किया और चारपाई पर से उठाकर वहुत हिफाजत और होशियारी के साथ खेमे के वाहर निकाल लाया जहाँ उसने अपने एक साथी को मौजूद पाया । दोनो ने मिलकर उसकी गठरी वाँधी और फुर्ती से लश्कर के बाहर निकाल ले गये ।

शान्ता को पा जाने से नानक बहुत ही खुश था और सोचता जाता था कि इसे पाकर माँ वहुत ही प्रसन्न होगी और हद से ज्यादा मेरी तारीफ करेगी, मैं इसे सीधे अपने घर ले जाऊँगा और जब दूसरी दफे लौटूंगा तो भूतनाथ पर कव्जा करूँगा। इसी तरह धीरे-धीरे अपने सव दुश्मनो को जहन्नुम भेज दूंगा।

कोस-भर निकल जाने के वाद जव नानक एक सकेत पर पहुँचा तो उसके और साथियो से भी मुलाकात हुई जो कसे-कसाये कई घोडो के साथ उसका इन्तजार कर रहे थे।

एक घोडे पर सवार होने के बाद नानक ने शान्ता को अपने आगे रख लिया, उसके साथी लोग भी घोडो पर सवार हुए, और सभी ने पूरव का रास्ता लिया।

दूसरे दिन मध्या के समय नानक अपने घर पहुँचा। रास्ते मे उसने और उसके साथियो ने कई दफे भोजन किया मगर शान्ता की कुछ खवर न ली, बल्कि जब इस वात का खयाल हुआ कि अव उसकी वेहोशी उतारना चाहती है तव पुन दवा सुंघाकर उसकी वेहोशी मजवूत कर दी गई।

नानक को देखकर उसकी माँ वहुत प्रसन्न हुई और जव उसे यह मालूम हुआ कि उसका सपूत शान्ता को गिरफ्तार कर लाया है तव तो उसकी खुशी का कोई ठिकाना ही न रहा। उसने नानक की वहुत ही आवभगत की और वहुत तारीफ करने के बाद वोली, "इससे वदला लेने मे अब क्षण-भर की भी देर न करनी चाहिए, इसे तुरन्त खम्भे के साथ वाँधकर होश मे ले आओ और पहले जूतियो से खूव अच्छी तरह खवर लो, फिर जो कुछ होगा देखा जायगा। मगर इसके मुँह मे खूव अच्छी तरह कपडा ठूंस दो जिससे कुछ वोल न सके और हम लोगो को गालियाँ न दे।"

नानक को भी यह वात पसन्द आई और उसने ऐसा ही किया। शान्ता के मुँह मे कपडा ठूंस दिया गया और वह दालान मे एक खम्भे के साथ वाँधकर होश मे लाई गई। होश मे आते ही अपने को ऐसी अवस्था मे देखकर वह वहुत ही घवराई और जब उद्योग करने पर भी कुछ वोल न सकी तो आँखो से आँसू की धारा वहाने लगी।

नानक ने उसकी दशा पर कुछ भी ध्यान न दिया। अपनी माँ की आज्ञा पाकर उसने शान्ता को जूते से मारना शुरू किया और यहाँ तक मारा कि अन्त मे वह वेहोश होकर झुक गई। उस समय नानक की माँ कागज का एक लपेटा हुआ पुर्जा नानक के आगे फेंककर यह कहती हुई घर के वाहर निकल गई कि "इसे अच्छी तरह पढ ले, तब तक मैं लौटकर आती हूँ।"

उसकी कार्रवाई ने नानक को ताज्जुव मे डाल दिया। उसने जमीन पर से पुर्जा वह उठा लिया और चिराग के सामने ले जाकर पढा, यह लिखा हुआ था—

"भूतनाथ के साथ ऐयारी करना या उसका मुकावला करना नानक ऐसे नौसिखे लौंडो का काम नही है। तू समझता होगा कि मैंने शान्ता को गिरफ्तार कर लिया, मगर खूव समझ रख कि वह कभी तेरे पजे मे नही आ सकती। जिस औरत को तू जूतियो से मार रहा है, वह शान्ता नही। पानी से इसका चेहरा धो डाल और भूतनाथ की कारीगरी का तमाशा देख! अव अगर अपनी जान तुझे प्यारी हो तो खवरदार! भूतनाथ का पीछा

कभी न करना।"

पुर्जा पढने ही नानक के होश उड गये। झटपट पानी का लोटा उठा लिया और मुँह मे ठूँसा हुआ कपडा निकालकर शान्ता का चेहरा धोने लगा, तब तक वह भी होश मे आ गई। चेहरा साफ होने पर नानक ने देखा कि यह तो उसकी असली माँ 'रामदेई' है। उसने होश मे आते ही नानक से कहा, "क्यो वेटा, तुमने मेरे ही साथ ऐसा सलूक किया!"

नानक के ताज्जुब की कोई हद न रही। वह घबराहट के साथ अपनी माँ का मुँह ...ने लगा और ऐसा परेशान हुआ कि आधी घडी तक उसमे कुछ बोलने की शक्ति न रही। इस बीच मे रामदेई ने उसे तरह-तरह की बातें सुनाईं जिन्हे वह सिर नीचा किए हुए चुपचाप सुनता रहा। जब उसकी तबीयत कुछ ठिकाने हुई तब उसने सोचा कि पहले उस रामदेई को पकडना चाहिए जो मेरे सामने चिट्ठी फेंककर मकान के बाहर निकल गई है, परन्तु यह उसकी सामर्थ्य के बाहर था, क्योकि उसे घर से बाहर गए हुए देर हो चुकी थी, अत उसने सोचा कि अब वह किसी तरह नही पकडी जा सकती।

नानक ने अपनी माँ के हाथ-पैर खोल डाले और कहा, "मेरी समझ मे कुछ नही आता कि यह क्या हुआ, तुम वहाँ कैसे जा पहुँची, और तुम्हारी शक्ल मे यहाँ रहने वाली कौन थी या क्योकर आई।"

रामदेई—मैं इसका जवाब कुछ भी नही दे सकती और न मुझे कुछ मालूम ही है। मैं तुम्हारे चले जाने के बाद इसी घर मे थी, इसी घर मे बेहोश हुई और होश आने पर अपने को इसी घर मे देखती हूँ, अब तुम्ही बयान करो कि क्या हुआ और तुमने मेरे साथ ऐसा सलूक क्यो किया?

नानक ने ताज्जुब के साथ अपना किस्सा पूरा-पूरा बयान किया और अन्त मे कहा, "अब तुम ही बताओ कि मैंने इसमे क्या भूल की?"

9

दिन का समय है और दोपहर ढल चुकी है। महाराज सुरेन्द्रसिंह अभी-अभी भोजन करके आये हैं और अपने कमरे मे पलग पर लेटे कर पान चबाते हुए अपने दोस्तो तथा लड़को से हँसी-खुशी की बातें कर रहे हैं जोकि महाराज से घण्टे-भर पहले ही भोजन इत्यादि से छुट्टी पा चुके हैं।

महाराज के अतिरिक्त इस समय इस कमरे मे राजा वीरेन्द्रसिंह, कुँअर इन्द्रजीत-सिंह, आनन्दसिंह, राजा गोपालसिंह, जीतसिंह, देवीसिंह, पन्नालाल, रामनारायण, पण्डित बद्रीनाथ, चुन्नीलाल, जगन्नाथ ज्योतिषी, भैरोसिंह, इन्द्रदेव और गोपालसिंह के दोस्त भरतसिंह भी बैठे हुए हैं।

वीरेन्द्रसिंह—इसमे कोई सन्देह नही कि जो तिलिस्म मैंने तोडा था, वह इस तिलिस्म के सामने रुपये मे एक पैसा भी नही है। साथ ही इसके जमानिया राज्य मे जैसे-जैसे महापुरुष(दारोगा की तरह)रह चुके हैं तथा वहाँ जैसी-जैसी घटनाएँ हो गई हैं उनकी

नजीर भी कभी सुनने मे न आयेगी।

गोपालसिंह—वखेडो का सवव भी उमी तिलिम्म को समझना चाहिए, उसी का आनन्द लूटने के लिए लोगो ने ऐसे वखेडे मचाए और उसी की वदौलत लोगो की तावत और हैसियत भी वढी।

जीतसिंह—वेशक, यही वात है। जैसे-जैसे तिलिस्म के भेद खुलते गये तैसे-तैसे पाप और लोगो की वदकिस्मती का जमाना भी तरक्की करता गया।

सुरेन्द्रसिंह—हमे तो कम्वख्त दारोगा के कामो पर आश्चर्य होता है, न मालूम किस सुख के लिए उस कम्वख्त ने ऐसे-ऐमे कुकर्म किए।

भरतसिंह—(हाथ जोडकर) मैं तो समझता हूँ कि दारोगा के कुकर्मों का हाल महाराज ने अभी विल्कुल नही सुना। उसकी कुछ पूर्ति तव होगी, जव हम लोग अपना किस्सा वयान कर चुकेंगे।

सुरेन्द्रसिंह—ठीक है, हमने भी आज आप ही का किस्सा सुनने की नीयत से आराम नही किया।

भरतसिंह—मैं अपनी दुर्दशा वयान करने के लिए तैयार हूँ।

जीतसिंह—अच्छा, तो अव आप शुरू करें।

भरतसिंह—जो आज्ञा।

इतना कहकर भरतसिंह ने इस तरह अपना हाल वयान करना शुरू किया—

भरतसिंह—मैं जमानिया का रहने वाला और एक जमीदार का लडका हूँ। मुझे इस वात का सौभाग्य प्राप्त था कि राजा गोपालसिंह मुझे अपना मित्र ममझते थे, यहाँ तक कि भरी मजलिस मे भी मित्र कहकर मुझे सम्वोधन करते थे, और घर मे भी किसी तरह का पर्दा नही रखते थे। यही सवव था कि वहाँ के कर्मचारी लोग तथा अच्छे-अच्छे रईस मुझसे डरते और मेरी इज्जत करते थे परन्तु दारोगा को यह वात पसन्द न थी।

केवल राजा गोपालसिंह ही नही इनके पिता भी मुझे अपने लडके की तरह ही मानते और प्यार करते थे, विशेप करके इसलिए कि हम दोनो मित्रो की चाल-चलन मे किसी तरह की वुराई दिखाई नही देती थी।

जमानिया मे जो वेईमान और दुष्ट लोगो की एक गुप्त कमेटी थी उसका हाल आप लोग जान ही चुके है अतएव उसके विपय मे विस्तार के साथ कुछ कहना वृथा ही है, हाँ, जरूरत पडने पर उसके विपय मे इशारा मात्र कर देने से काम चल जायेगा।

रियासतो मे मामूली तौर पर तरह-तरह की घटनाएं हुआ ही करती हैं, इसलिए राजा गोपालसिंह को गद्दी मिलने के पहले जो कुछ मुझ पर बीत चुकी है, उसे मामूली समझकर मैं छोड देता हूँ और उस समय से अपना हाल वयान करता हूँ जव इनकी शादी हो चुकी थी। इस शादी मे जो कुछ चालवाजी हुई थी उसका हाल आप सुन ही चुके है।

जमानिया की वह गुप्त कमेटी यद्यपि भूतनाथ की वदौलत टूट चुकी थी, मगर उसकी जड नही कटी थी, क्योकि कम्वख्त दारोगा हर तरह से साफ वच रहा था और कमेटी का कमजोर दफ्तर अभी भी उसके कब्जे मे था।

गोपालसिंह की शादी हो जाने के बहुत दिन वाद एक दिन मेरे एक नौकर ने रात

के समय जब वह मेरे पैरो मे तेल लगा रहा था मुझसे कहा कि "राजा गोपालसिंह की शादी असली लक्ष्मीदेवी के साथ नही बल्कि किसी दूसरी ही औरत के साथ हुई है। यह काम दारोगा ने रिश्वत लेकर किया है और इस काम मे सुविधा करने के लिए गोपालसिंहजी के पिता को भी उसी ने मारा है।"

सुनने के साथ ही मैं चौंक पडा, मेरे ताज्जुब का कोई ठिकाना न रहा, मैंने उससे तरह-तरह के सवाल किए जिनका जवाब उसने ऐसा तो न दिया जिससे मेरी दिलजमई हो जाती, मगर इस बात पर बहुत जोर दिया कि "जो कुछ मैं कह चुका हूँ, वह बहुत ठीक है।"

मेरे जी मे तो यही आया कि इसी समय उठकर राजा गोपालसिंह के पास जाऊँ, और सब हाल कह दूँ, परन्तु यह सोचकर कि किसी काम मे जल्दी न करनी चाहिए मैं चुप रह गया और सोचने लगा कि यह कारंवाई क्योकर हुई और इसका ठीक-ठीक पता किस तरह लग सकता है ?

रात-भर मुझे नीद न आई और इन्ही बातो को सोचता रह गया। सवेरा होने पर स्नान-सध्या इत्यादि से छुट्टी पाकर मैं राजा साहब से मिलने के लिए गया, मालूम हुआ कि राजा साहब अभी महल से बाहर नही निकले है। मैं सीधे महल मे चला गया। उस समय गोपालसिंहजी सध्या कर रहे थे और इनसे थोडी दूर पर सामने बैठी मायारानी फूलो का गजरा तैयार कर रही थी। उसने मुझे देखते ही कहा, "अहा, आज क्या बात है! मालूम होता है मेरे लिए आप कोई अनूठी चीज लाए हैं।"

इसके जवाब मे मैं हँसकर चुप हो गया और इशारा पाकर गोपालसिंहजी के पास एक आसन पर बैठ गया। जब वे सध्योपासना से छुट्टी पा चुके तब मुझसे बातचीत होने लगी। मैं चाहता था कि मायारानी वहाँ से उठ जाये तब मैं अपना मतलब बयान करूँ, पर वह वहाँ से उठती न थी और चाहती थी कि मैं जो कुछ बयान करूँ, उसे वह भी सुन ले। यह सम्भव था कि मैं मामूली बाते करके मौका टाल देता और वहाँ से उठ खडा होता मगर वह हो न सका, क्योकि उन दोनो ही को इस बात का विश्वास हो गया था कि मैं जरूर कोई अनूठी बात कहने के लिए आया हूँ। लाचार गोपालसिंहजी से इशारे मे कह देना पडा कि 'मैं एकान्त मे केवल आप ही से कुछ कहना चाहता हूँ।' जब गोपालसिंह ने किसी काम के बहाने से उसे अपने सामने से उठाया तब वह भी मेरा मतलब समझ गई और मुँह बनाकर उठ खडी हुई।

हम दोनो यही समझते थे कि मायारानी वहाँ से चली गई, मगर उस कम्बख्त ने हम दोनो की बातें सुन ली, क्योकि उसी दिन से मेरी कम्बख्ती का जमाना शुरू हो गया। मैं ठीक नही कह सकता कि किस ढग से उसने हमारी बातें सुनी। जिस जगह हम दोनो बैठे थे, उसके पास ही दीवार मे एक छोटी-सी खिडकी पडती थी, शायद उसी जगह पिछवाडे की तरफ खडी होकर उसने मेरी बातें सुन ली हो तो कोई ताज्जुब नही।

मैंने जो कुछ अपने नौकर से सुना था, सब तो नही कहा, केवल इतना कहा कि "आपके पिता को दारोगा ने ही मारा है और लक्ष्मीदेवी की इस शादी मे भी उसने कुछ गड़बड किया है, गुप्त रीति पर इसकी जाँच करनी चाहिए।" मगर अपने नौकर का नाम

नही बताया, क्योंकि मैं उसे बहुत चाहता था और वैसा ही उसकी हिफाजत का भी खयाल रखता था। इसमे कोई शक नही कि मेरा वह नौकर बहुत ही होशियार और बुद्धिमान था, बल्कि इस योग्य था कि राज्य का कोई भारी काम उसके सुपुर्द किया जाता, परन्तु वह जाति का कहार था, इसलिए किसी बडे मर्तबे पर न पहुँच सका।

गोपालसिंहजी ने मेरी बातें ध्यान देकर सुनी, मगर इन्हे उन बातो का विश्वास न हुआ, क्योंकि ये मायारानी को पतिव्रताओ की नाक और दारोगा को सच्चाई तथा ईमानदारी का पुतला समझते थे। मैंने इन्हे अपनी तरफ से बहुत-कुछ समझाया और कहा कि "यह बात चाहे झूठ हो, मगर आप दारोगा से हरदम होशियार रहा कीजिए, और उसके कामो की जाँच की निगाह से देखा कीजिए, मगर अफसोस, इन्होंने मेरी बातो पर कुछ ध्यान न दिया और इसी से मेरे साथ ही अपने को भी बर्बाद कर लिया।

उसके बाद भी कई दिनो तक मैं इन्हे समझाता रहा और ये भी हाँ मे हाँ मिलाते रहे जिससे यह विश्वास होता था कि कुछ उद्योग करने से ये समझ जायेंगे, मगर ऐसा कुछ न हुआ। एक दिन मेरे उसी नौकर ने जिसका नाम हरदीन था मुझसे फिर एकान्त में कहा कि "अब आप राजा साहब को समझाना-बुझाना छोड दीजिए, मुझे निश्चय हो गया कि उनकी बद-किस्मती के दिन आ गये है और वे आपकी बातो पर भी कुछ ध्यान न देंगे। उन्होने बहुत बुरा किया कि आपकी बातें मायारानी और दारोगा पर प्रकट कर दी। उनको समझाने के बदले अब आप अपनी जान बचाने की फिक्र कीजिए और अपने को हर वक्त आफत से घिरा हुआ समझिए। शुक्र है कि आपने सब बाते नही कह दी, नही तो और भी गजब हो जाता।"

औरो को चाहे कैसा ही कुछ खयाल हो, मगर मैं अपने खिदमतगार हरदीन की बातो पर विश्वास करता था और उसे अपना खैरख्वाह समझता था। उसकी बातें सुनकर मुझे गोपालसिंह पर बे-हिसाब क्रोध चढ आया और उसी दिन से मैंने इन्हे समझाना-बुझाना छोड दिया, मगर इनकी मुहब्बत ने मेरा साथ न छोडा।

मैंने हरदीन से पूछा कि "ये सब बातें तुझे क्योकर मालूम हुई ? और होती हैं ?" मगर उसने ठीक-ठीक न बताया, बहुत जिद करने पर कहा कि कुछ दिन और सब्र कीजिए मैं इसका भेद भी आपको बता दूंगा।

दूसरे दिन, जब सूरज अस्त होने मे दो घण्टे की देर थी, मैं अकेला अपने नजर-बाग मे टहल रहा था और इस सोच मे पडा हुआ था कि राजा गोपालसिंह का भ्रम मिटाने के लिए अब क्या बन्दोबस्त करना चाहिए। उसी समय रघुबरसिंह मेरे पास आया और साहब-सलामत के बाद इधर-उधर की बातें करने लगा। बात-ही-बात मे उसने कहा कि "आज मैने एक घोडा निहायत उम्दा खरीद लिया है, मगर अभी तक उसका दाम नही दिया है, आप उस पर सवारी करके देखिए, अगर आप भी पसन्द करें, तो मैं उसका दाम चुका दूं। इस समय मैं उसे अपने साथ लेता आया हूँ। आप उस पर सवार हो लें और मैं अपने पुराने घोडे पर सवार होकर आपके साथ चलता हूँ, चलिये दो-चार कोस का चक्कर लगा आयें।"

मुझे घोडे का बहुत ही शौक था। रघुबरसिंह की बातें सुनकर मैं खुश हो गया

और यह सोचकर कि अगर जानवर उम्दा होगा तो मैं खुद उसका दाम देकर अपने यहां रख लूंगा मैंने जवाब दिया "चलो देखें, कैसा घोड़ा है, रघुवरसिंह ने कहा, चलिये, अगर आपको पसन्द आ जावे तो आप ही रख लीजियेगा।"

उन दिनो मैं रघुवरसिंह को भला आदमी अशरीफ और अपना दोस्त समझता था, मुझे इस बात की कुछ भी खबर न थी कि यह परले सिरे का बेईमान और शैतान का भाई है, उसी तरह दारोगा को भी मैं इतना बुरा नही समझता था और राजा गोपालसिंह की तरह मुझे भी विश्वास था कि जमानिया की उस गुप्त कमेटी से इन दोनो का कुछ भी सम्बन्ध नही है। मगर हरदीन ने मेरी आँखें खोल दी और साबित कर दिया कि जो कुछ हम लोग सोचे हुए थे वह हमारी भूल थी।

खैर, मैं रघुवरसिंह के साथ ही बाग के बाहर निकला और दरवाजे पर आया, कसे-कसाये दो घोड़े दिखे, जिनमे एक तो खास रघुवरसिंह का घोड़ा था और दूसरा एक नया और बहुत ही शानदार वही घोड़ा था, जिसकी रघुवरसिंह ने तारीफ की थी।

मैं उस घोड़े पर सवार होने वाला ही था कि हरदीन दौड़ा-दौड़ा बद-हवास मेरे पास आया और बोला, "घर मे बहूजी (मेरी स्त्री) को न मालूम क्या हो गया कि गिरकर बेहोश हो गई हैं और उनके मुँह से खून निकल रहा है। जरा चलकर देख लीजिए।"

हरदीन की बात सुनकर मैं तरद्दुद मे पड़ गया और उसे साथ लेकर घर के अन्दर गया, क्योकि हरदीन बराबर जनाने मे आया-जाया करता था और इसके लिए किसी तरह का पर्दा न था। जब घर की दूसरी ड्यौढ़ी मैंने लाँघी तब वहां एकान्त मे हरदीन ने मुझे रोका और कहा, "जो कुछ मैंने आपको खबर दी वह बिल्कुल झूठ है, बहूजी बहुत अच्छी तरह है।"

मैं—तो तुमने ऐसा क्यो किया ?

हरदीन—इसीलिए कि रघुवरसिंह के साथ जाने से आपको रोकूँ।

मै—सो क्यो ?

हरदीन—इसीलिए कि वह आपको धोखा देकर ले जा रहा है और आपकी जान लेना चाहता है। मैं उसके सामने आपको रोक नही सकता था, अगर रोकता तो उसे मेरी तरफदारी मालूम हो जाती और मैं जान से मारा जाता और फिर आपको इन दुष्टों की चालबाजियो से बचाने वाला कोई न रहता। यद्यपि मुझे अपनी जान आपसे बढ़कर प्यारी नही है, तथापि आपकी रक्षा करना मेरा कर्तव्य है और यह बात आपके आधीन है, यदि आप मेरा भेद खोल देंगे, तो फिर मेरा इस दुनिया मे रहना मुश्किल है।

मैं—(ताज्जुब के साथ) तुम आज यह क्या कह रहे हो ? रघुवरसिंह तो हमारा गहरा दोस्त है !

हरदीन—इस दोस्ती पर आप भरोसा न करें, और इस समय इस घोड़े को टाल जायें, रात को मैं सब बातें आपको अच्छी तरह समझा दूंगा, या यदि आपको मेरी बातों पर विश्वास न हो तो जाइए, मगर एक मसाला कमर मे छिपाकर लेते जाइए, और पश्चिम की तरफ कदापि न जाकर पूरब की तरफ को जाइए—साथ ही इस बात

से होशियार रहिए। इतनी होशियारी करने पर आपको मालूम हो जायेगा कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वह सच है या झूठ।

हरदीन की बातों ने मुझे चक्कर में डाल दिया। कुछ सोचने के बाद मैंने कहा, "शाबाश हरदीन, तुमने बेशक उस समय मेरी जान बचाई, मगर खैर, तुम चिन्ता न करो और मुझे इस दुष्ट के साथ जाने दो, अब मैं उसके पंजे में न फँसूँगा और जैसा तुमने कहा वैसा ही करूँगा।"

इसके बाद मैं चुपचाप अपने कमरे में चला गया और एक छोटा-सा दोनाली तमंचा भरकर अपनी कमर में छिपा लेने के बाद बाहर निकला। मुझे देखते ही रघुवरसिंह ने पूछा, "कहिए, क्या हाल है?" मैंने जवाब दिया, "अब तो होश में आ गई हैं, वैद्यजी को बुला लाने के लिए कह दिया है, तब तक हम लोग भी घूम आयेंगे।"

इतना कहकर मैं उस घोड़े पर सवार हो गया, रघुवरसिंह भी अपने घोड़े पर सवार हुआ और मेरे साथ चला। शहर के बाहर निकलने के बाद मैंने पूरब की तरफ घोड़े को घुमाया, उसी समय रघुवरसिंह ने टोका और कहा, "उधर नहीं पश्चिम की तरफ चलिए, इधर का मैदान बहुत अच्छा और सुहावना है।"

मैं—इधर पूरब की तरफ भी तो कुछ बुरा नहीं है, मैं इधर ही चलूँगा।

रघुवरसिंह—नहीं-नहीं, आप पश्चिम ही की तरफ चलिए, उधर एक काम और निकलेगा। दारोगा साहब भी इस घोड़े की चाल देखना चाहते थे, मैंने कह दिया था कि आप लोग अपने घोड़े पर सवार होकर जाइये और फलां जगह ठहरियेगा, हम लोग घूमते हुए उसी तरफ आयेंगे, वे जरूर वहाँ गये होंगे और हम लोगों का इन्तजार कर रहे होंगे।

मैं—ऐसा ही शौक था तो दारोगा साहब भी हमारे यहाँ आ जाते और हम लोगों के साथ चलते।

रघुवरसिंह—खैर, अब तो जो हो गया सो हो गया, अब उनका खयाल जरूर करना चाहिए।

मैं—मुझे भी पूरब की तरफ जाना बहुत जरूरी है, क्योंकि एक आदमी से मिलने का वादा कर चुका हूँ।

इसी तौर पर मेरे और उसके बीच बहुत देर तक हुज्जत होती रही। मैं पूरब की तरफ जाना चाहता था और वह पश्चिम की तरफ जाने के लिए जोर देता रहा, नतीजा यह निकला कि न पूरब ही गये, न पश्चिम ही गये, बल्कि लौटकर सीधे घर चले आये और यह बात रघुवरसिंह को बहुत ही बुरी मालूम हुई, उसने मुझसे मुँह फुला लिया और कुढ़ता हुआ अपने घर चला गया।

मेरा रहा-सहा शक भी जाता रहा और हरदीन की बातों पर मुझे पूरा-पूरा विश्वास हो गया, मगर मेरे दिल में इस बात की उलझन हद से ज्यादा पैदा हुई कि हरदीन को इन सब बातों की खबर क्योंकर लग जाती है। आखिर रात के समय जब एकान्त हुआ तब मुझसे और हरदीन से इस तरह की बातें होने लगीं—

मैं—हरदीन, तुम्हारी बात ठीक निकली, उसने पश्चिम तरफ ले जाने के लिए

बहुत जोर मारा, मगर मैंने उसकी एक न सुनी।

हरदीन—आपने यह बहुत अच्छा किया, नही तो इस समय बडा ही अन्धेर हो गया होता।

मैं—खैर, यह तो बताओ कि यकायक वह मेरी जान का दुश्मन क्यो बन बैठा? वह तो मेरी दोस्ती का दम भरता था।

हरदीन—इसका सबब वही लक्ष्मीदेवी वाला भेद है। मैं अपनी भूल पर अफसोस करता हूँ कि मुझसे चूक हो गई जो मैंने वह भेद आपसे खोल दिया। मैंने तो राजा गोपालसिहजी का भला करना चाहा था मगर उन्होने नादानी करके मामला ही बिगाड दिया। उन्होने जो कुछ आपसे सुना था लक्ष्मीदेवी से कहकर दारोगा और रघुबर को आपका दुश्मन बना दिया, क्योकि इन्ही दोनो की बदौलत वह इस दर्जे को पहुँची, इन्ही दोनो की बदौलत हमारे महाराज (गोपालसिह के पिता) मारे गये और इन्ही दोनो ने लक्ष्मीदेवी को ही नही बल्कि उसके घर भर को बर्बाद कर दिया।

मैं—इस समय तो तुम बडे ही ताज्जुब की बातें सुना रहे हो।

हरदीन—मगर इन बातो को आप अपने ही दिल मे रखकर जमाने की चाल के साथ काम करें नही तो आपको पछताना पडेगा, यद्यपि मैं यह कदापि न कहूँगा कि आप राजा गोपालसिह का ध्यान छोड दे और उन्हे डूबने दें क्योकि वह आपके दोस्त हैं।

मैं—जैसा तुम चाहते हो, मैं वैसा ही करूँगा। अच्छा, पहले यह बताओ कि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिह पर क्या बीती?

हरदीन—उन दोनो को दारोगा ने अपने पजे मे फँसा कर कही कैद कर दिया है इतना तो मुझे मालूम है मगर इसके बाद का हाल मैं कुछ भी नही जानता, न मालूम वे मार डाले गये या अभी तक कही कैद है। हाँ, उस गदाधरसिह को इसका हाल शायद मालूम होगा जो रणधीरसिहजी का ऐयार है और जिसने नानक की माँ को धोखा देने के लिए कुछ दिन तक अपना नाम रघुबरसिह रख लिया था तथा जिसकी बदौलत यहाँ की गुप्त कुमेटी का भण्डा फूटा है। उसने इस रघुबीरसिह और दारोगा को खूब ही छकाया है। लक्ष्मीदेवी की जगह मुन्दर की शादी करा देने की बाबत इनके और हेलासिह के बीच मे जो पत्र-व्यवहार हुआ, उसकी नकल भी गदाधरसिह (रणधीरसिह के ऐयार) के पास मौजूद है जो कि उसने समय पर काम देने के लिए असल चिट्ठियो से अपने हाथ से नकल की थी। अफसोस, उसने रुपये की लालच मे पड कर रघुबरसिह और दारोगा को छोड दिया और इस बात को छिपा रक्खा कि यही दोनो उस गुप्त कमेटी के मुखिया है। इस पाप का फल गदाधरसिह को जरूर भोगना पडेगा, ताज्जु नही कि एक दिन उन चिट्ठियो की नकल से उसी को दु ख उठाना पडे और वे चिट्ठिया उसी के लिए काल बन जायँ।

इस समय मुझे हरदीन की वे बातें अच्छी तरह याद पड रही हैं। मैं देखता हूँ कि जो कुछ उसने कहा था सच उतरा। उन चिट्ठियो की नकल ने खुद भूतनाथ का गला दबा दिया जो उन दिनो गदाधरसिह के नाम से मशहूर हो रहा था। भूतनाथ का हाल मुझे अच्छी तरह मालूम है और इधर जो कुछ हो चुका है वह सब भी मैं सुन चुका

हूँ मगर इतना मैं जरूर कहूँगा कि भूतनाथ के मुकदमे मे तेजसिहजी ने वहुत वडी गलती की गलती तो सभी ने की मगर तेजसिहजी को ऐयारो का सरताज मानकर मैं सबके पहले इन्ही का नाम लूँगा। इन्होने जव लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली इत्यादि के सामने वह कागज का मुट्ठा खोला था और चिट्ठियो को पढकर भूतनाथ पर इलजाम लगाया था कि "वेशक ये चिट्ठियाँ भूतनाथ के हाथ की लिखी हुई हैं।" तव इतना क्यो नही सोचा कि भूतनाथ की चिट्ठियो के जवाव मे हेलासिह ने जो चिट्ठियाँ भेजी है, वे भी तो भूतनाथ ही के हाथो की लिखी हुई मालूम पडती हैं, तो क्या अपनी चिट्ठियो का जवाव भी भूतनाथ अपने ही हाथ से लिखा करता था ?"

यहाँ तक कहकर भरतसिह चुप हो रहे और तेजसिह की तरफ देखने लगे। तेजसिह ने कहा, "आपका कहना वहुत ही ठीक है, वेशक उस समय मुझसे यह बडी भूल हो गई। उनमे की एक ही चिट्ठी पढकर क्रोध के मारे हम लोग ऐसे पागल हो गए कि इस वात पर कुछ भी ध्यान न दे सके। वहुत दिनो के वाद जव देवीसिह ने यह वात सुझाई, तव हम लोगो को वहुत अफसोस ही हुआ और तव से हम लोगो का खयाल भी वदल गया।"

भरतसिह ने कहा, "तेजसिहजी, इस दुनिया मे वडे-वडे चालाको और होशियारो मे यहाँ तक कि स्वय विधाता ही से भूल हो गई है तो फिर हम लोगो की क्या वात है ? मगर मजा तो यह कि वडो की भूल कहने-सुनने मे नही आती, इसीलिए आपकी भूल पर किसी ने ध्यान नही दिया। किसी कवि ने ठीक ही कहा है—

को कहि सके बडेन सो लखे वडे की भूल।
दीन्हे दई गुलाव के, इन डारन ये फूल॥

अन अव मैं पुन अपनी कहानी शुरू करता हूँ।

इसके वाद भरतसिह ने फिर इस तरह कहना शुरू किया—

भरतसिह—मैंने हरदीन मे कहा कि अगर यह वात है तो गदाधरसिह से मुलाकात करनी चाहिए, मगर वह मुझसे अपने भेद की बातें क्यो कहने लगा ? इसके अतिरिक्त वह यहाँ रहता भी नही है कभी-कभी आ जाता है। साथ ही इसके यह जानना भी कठिन है कि वह कव आया और कव चला गया।

हरदीन—ठीक है, मगर मैं आपसे उनकी मुलाकात करा सकता हूँ। आशा है कि वे मेरी वात मान लेंगे और आपको असल हाल भी वता देंगे। कल वह जमानिया मे आने वाले है।

मैं—मगर मुझसे और उससे तो किसी तरह की मुलाकात नही है। वह मुझ पर क्यो भरोसा करेगा ?

हरदीन—कोई चिन्ता नहीं, मैं आपसे उनकी मुलाकात करा दूंगा।

हरदीन की इस बात ने मुझे और भी ताज्जुव में डाल दिया। मैं सोचने लगा कि इसमे और गदाधरसिह (भूतनाथ) मे ऐसी गहरी जान-पहचान क्यो कर हो गई और वह इस पर क्यो भरोसा करता है ?

भरतसिह ने अपना किस्सा यहाँ तक वयान किया था कि उनके काम मे विघ्न

पड गया अर्थात् उसी समय एक चोवदार ने आकर इत्तिला दी कि 'भूतनाथ हाजिर है।' इस खबर को सुनते ही सब कोई खुश हो गये और भरतसिंह ने भी कहा, "अब मेरे किस्से में विशेष आनन्द आवेगा।"

महाराज ने भूतनाथ को हाजिर करने की आज्ञा दी और भूतनाथ ने कमरे के अन्दर पहुँचकर सभी को सलाम किया।

तेजसिंह—(भूतनाथ से) कहो भूतनाथ, कुशल तो है ? आज कई तो दिनो पर तुम्हारी सूरत दिखाई दी।

भूतनाथ—जी हाँ ईश्वर की कृपा से सब कुशल है, जितने दिन की छुट्टी लेकर गया था, उसके पहले ही हाजिर हो गया हूँ।

तेजसिंह—सो तो ठीक है मगर अपने सपूत लडके का तो कुछ हाल कहो, कैसी निपटी ?

भूतनाथ—निपटी क्या आपकी आज्ञा पालन की, नानक को मैंने किसी तरह की तकलीफ नही दी मगर सजा बहुत ही मजेदार और चटपटी दे दी गई।

देवीसिंह—(हँसते हुए) सो क्या ?

भूतनाथ—मैंने उससे एक ऐसी दिल्लगी की कि वह भी खुश हो गया होगा। अगर बिल्कुल जानवर न होगा तो अब हम लोगो की तरफ कभी मुँह न करेगा बात बिल्कुल मामूली थी, जब वह यहाँ आकर मेरी फिक्र मे डूबा तो घर की हिफाजत का बन्दोबस्त करके बाद कुछ शागिर्दों को साथ लेकर मैं उसके मकान पर पहुंच उसकी माँ को उड़ा लाया मगर उसकी जगह अपने एक शागिर्द को रामदेई बनाकर छोड आया। यहाँ उसे शान्ता बनाकर अपने खेमे मे जो इसी काम के लिए खडा किया गया था, एक लौंडी के साथ सुला दिया और खुद तमाशा देखने लगा। आखिर नानक उसी को शान्ता समझ के उठा ले गया और खुशी-खुशी अपनी नकली शान्ता को खम्भे के साथ बाँधकर जूते से पूजा करने लगा। जब खूब दुर्गति कर चुका तब नकली रामदेई उसके सामने एक पुर्जा फेंक करके बाहर निकल गई। उस पुर्जे के पढने से जब उसे मालूम हुआ कि मैंने जो कुछ किया है, अपनी ही माँ के साथ किया तब वह बहुत ही शर्मिन्दा हुआ। उस समय उनके दोनो की जैसी कैफियत हुई मैं क्या बयान करूँ, आप लोग खुद सोच समझ लीजिये।

भूतनाथ की बात सुनकर सब लोग हँस पडे। महाराज ने उसे अपने पास बुला कर बैठाया और कहा, "भूतनाथ, जरा एक दफे तुम इस किस्से को फिर बयान कर जाओ मगर जरा खुलासा तौर पर कहो।"

भूतनाथ ने इस हाल को विस्तार के साथ ऐसे ढग पर दोहराया कि हँसते-हँसते सभी का दम फूलने लगा। इसके बाद जब भूतनाथ को मालूम हुआ कि भरतसिंह अपना किस्सा बयान कर रहे हैं तब उसने भरतसिंह की तरफ देखा और कहा, "मुझसे भी तो आपके किस्से से कुछ सम्बन्ध है।"

भरतसिंह—बेशक, और वही हाल मैं इस समय बयान कर रहा था।

भूतनाथ—(गोपालसिंह) से क्षमा कीजियेगा, मैंने आपसे उस समय, जब आप

कृष्ण जिन्न बने हुए थे, यह झूठ बयान किया था कि 'राजा गोपालसिंह के छूटने के बाद मैंने उन कागजो का पता लगाया है जो इस समय मेरे ही साथ दुश्मनी कर रहे हैं' इत्यादि। असल मे वे कागज मेरे पास उसी समय भी मौजूद थे, जब जमनिया मे मुझसे और भरतसिंह से मुलाकात हुई थी। आप यह हाल इनकी जुबानी सुन चुके होंगे।

भरतसिंह—हाँ भूतनाथ, इस समय मैं वही हाल बयान कर रहा हूँ, अभी कह नही चुका।

भूतनाथ—खैर, तो अभी श्रीगणेश है। अच्छा, आप बयान कीजिए।

भरतसिंह ने फिर इस तरह बयान किया—

भरतसिंह—दूसरे दिन आधी रात के समय जब मैं गहरी नीद मे सोया हुआ था हरदीन ने आकर मुझे जगाया और कहा, "लीजिये, मैं गदाधरसिंहजी को ले आया हूँ, उठिये और इनसे मुलाकात कीजिए, ये बडे ही लायक और बात के धनी आदमी हैं।" मैं खुशी-खुशी उठ बैठा और बडी नर्मी के साथ भूतनाथ से मिला। इसके बाद मुझसे और भूतनाथ (गदाधर) से इस तरह बातचीत होने लगी—

भूतनाथ—साहब, आपका यह हरदीन बडा ही नेक और दिलावर है, ऐसा जीवट का आदमी दुनिया मे कम ही दिखाई देगा। मैं तो इसे अपना परम हितैषी और मित्र समझता हूँ, इसने मेरे साथ जो कुछ भलाइयाँ की है उनका बदला मैं किसी तरह चुका ही नही सकता। मुझसे कभी की जान, पहचान नही, मुलाकात नही-ऐसी अवस्था मे मैं पहले-पहल बिना मतलब के आपके घर कदापि न आता परन्तु, इनकी इच्छा के विरुद्ध मैं नही चल सका, इन्होने यहाँ आने के लिए कहा और मैं बेधडक चला आया। इनकी जुबानी मैं सुन भी चुका हूँ कि आज कल आप किस विकट फेर मे पडे हुए है और मुझसे मिलने की जरूरत आपको क्यो पडी अस्तु हरदीन की आज्ञानुसार मैं वह कागज का मुट्ठा भी दिखाने के लिए लेता आया हूँ जिससे आप को दारोगा और रघुबरसिंह की हरामजदगी और राजा गोपालसिंह की शादी का पूरा-पूरा हाल मालूम हो जायेगा, मगर खूब याद रखिये कि इस कागज को पढकर आप बेताब हो जायँगे, आपको बेहिसाब गुस्सा चढ आवेगा और आपका दिल बेचैनी के साथ तमाम भण्डा फोड देने के लिए तैयार हो जायगा, मगर नही, आपको ये सब-कुछ बर्दाश्त करना ही पडेगा, दिल को सम्हालना और इन बातो को हर तरह से छिपाना पडेगा। मुझे हरदीन ने आपका बहुत ज्यादा विश्वास दिलाया है तभी मैं यहाँ आया हूँ, और यह अनूठी चीज भी दिखाने के लिए तैयार हूँ नही तो कदापि न आता।

मैं—आपनी बडी मेहरबानी की जो मुझ पर भरोसा किया और यहाँ तक चले आये, मेरी जुबान से आपका रत्ती भर भेद भी किसी को नही मालूम हो सकता, इसका आप विश्वास रखिये। यद्यपि मैं इस बात का निश्चय कर चुका हूँ कि गोपालसिंह के मामले मे मैं अब कुछ भी दखल न दूँगा मगर इस बात का अफसोस जरूर है कि वह मेरे मित्र हैं और दुष्टो ने उन्हें बेतरह फँसा रक्खा है।

भूतनाथ—केवल आप ही को नही, इस बात का अफसोस मुझको भी है और मैं खुद गोपालसिंह को इस आफत से छुडाने का इरादा कर रहा हूँ। मगर लाचार हूँ कि

बलभद्रसिंह और लक्ष्मीदेवी का कुछ भी पता नही लगता और जब तक उन दोनो का पता न लग जाय तब तक इस मामले को उठाना बडी भारी भूल है।

मैं—मगर यह तो आपको निश्चय है कि इन सब बातोका कर्ता-धर्ता यह कम्बख्त दारोगा ही है ?

भूतनाथ—भला इसमे भी अब कुछ शक है ? लीजिए इस कागज के मुट्ठे का पढ जाइये तब आपको भी विश्वास हो जायगा।

इतना कहकर भूतनाथ ने कागज का एक मुट्ठा, निकाला और मेरे आगे रख दिया तथा मैंने भी उसे पढना शुरू किया। मैं आपसे नही कह सकता कि उन कागजो को पढकर मेरे दिल की कैसी अवस्था हो गई और दारोगा तथा रघुवरसिंह पर मुझे कितना क्रोध चढ आया। आप लोग तो उसे पढ-सुन चुके है अतएव इस बात को खुद समझ सकते हैं। मैंने भूतनाथ से कहा कि "यदि तुम मेरा साथ दो तो मैं आज ही दारोगा और रघुवरसिंह को इस दुनिया से उठा दूँ।"

भूतनाथ—इससे फायदा ही क्या होगा ? और काम ही कितना बडा है ? मुझे खुद इस बात का खयाल है और मैं लक्ष्मीदेवी का पता लगाने के लिए दिल से कोशिश कर रहा हूँ, तथा आपका हरदीन भी उसका पता लगा रहा है। इस तरह समय के पहले छेडछाड करने से खुद अपने को झूठा बनना पडेगा और लक्ष्मीदेवी भी जहाँ की तहाँ पडी सडेगी या मर जायगी।

मैं—हाँ ठीक है, अच्छा यह तो बताइये कि आप हरदीन की इतनी इज्जत क्यो करते है ?

भूतनाथ—इसलिए मेरी कि यह सब जानकारी इन्ही की बदौलत है। इन्होने ही मुझे उस कमेटी का पता बताया और उसका भेद समझाया और इन्ही की मदद से मैंने उस कमेटी का सत्यानाश किया।

मैं—(हरदील से) और तुम्हे उस कमेटी का भेद क्योकर मालूम हुआ ?

हरदीन—(हाथ जोडकर) माफ कीजियेगा, मैं उस कमेटी का मेम्बर था और अभी तक उन लागो के खयाल से उन सभी का पक्षपाती बना हुआ हूँ, मगर मैं ईमानदार मेम्बर था, इसलिए ऐसी बाते मुझे पसन्द न आईं और मैं गुप्त रीति से उन लोगो का दुश्मन बन बैठा, मगर इतना करने पर भी अभी तक मेरी जान इसलिए बची हुई है कि आपके घर मे मेरे सिवाय और कोई इन लोगो का साथी नही है।

मैं—तो क्या अभी तक तुम उन लोगो के साथी बने हुए हो और वे लोग अपने दिल का हाल तुमसे कहते है ?

हरदीन—जी हाँ, तभी तो मैंने आपको रघुबरसिंह के पजे से बचाया था, जब वह आपको घोडे पर सवार कराके ले चला था।

मैं—अगर ऐसा हो तो तुम्हें यह भी मालूम हो गया होगा कि उस दिन घात न लगने के कारण रघुबरसिंह ने अब कौन-सी कार्रवाई सोची है।

हरदीन—जी हाँ, पहले तो उसने मुझसे पूछा था कि 'भरतसिंह ने ऐसा क्यो किया, क्या उसको मेरी नीयत का कुछ पता लग गया है ?' जिसके जवाब मे मैंने कहा

कि 'नही, किसी दूसरे सबब से ऐसा हुआ होगा।' इसके बाद दारोगा साहब ने मुझ पर हुक्म लगाया कि 'तू भरतसिंह को जिस तरह हो सके, जहर दे दे।' मैंने कहा, "बहुत अच्छा ऐसा ही करूँगा, मगर इस काम मे पाँच-सात दिन जरूर लग जायेंगे।"

इतना कहकर हरदीन ने भूतनाथ से पूछा कि 'कहिए अब क्या करना चाहिए ?' इसके जवाब मे भूतनाथ ने कहा कि 'अब पाँच-सात दिन के बाद भरतसिंह को झूठ-मूठ हल्ला मचा देना चाहिए कि मुझको किसी ने जहर दे दिया, बल्कि कुछ बीमारी की सी नकल भी करके दिखा देनी चाहिए।'

इसके बाद थोडी देर तक और भी भूतनाथ से बातचीत होती रही और किसी दिन फिर मिलने का वादा करके भूतनाथ विदा हुआ।

इस घटना के बाद कई दफे भूतनाथ से मुलाकात हुई बल्कि कहना चाहिए कि इनके और मेरे बीच मे एक प्रकार की मित्रता सी हो गई और इन्होने कई कामो मे मेरी सहायता भी की।

जैसा कि आपस मे सलाह हो चुकी थी, मुझे यह मशहूर करना पडा कि 'मुझे किसी ने जहर दे दिया।' साथ ही इसके कुछ बीमारी की नकल भी की गई, जिसमे मेरे नौकर पर कम्बख्त दारोगा को शक न हो जाये, मगर इसका कोई अच्छा नतीजा न निकला अर्थात् दारोगा को मालूम हो गया कि हरदीन उसका सच्चा साथी और भेदिया नही है।

एक दिन रात के समय एकान्त मे हरदीन ने मुझसे कहा, "लीजिए अब दारोगा साहब को निश्चय हो गया कि मैं उनका सच्चा साथी नही हूँ। आज उसने मुझे अपने पास बुलाया था, मगर मैं गया नही क्योंकि मुझे यह निश्चय हो गया कि जाने के साथ ही मैं उसके कब्जे मे आ जाऊँगा और फिर किसी तरह जान न बचेगी, यो तो छिटके रहने पर लडते-झगडते जैसा होगा देखा जायेगा। अत इस समय मुझे आपसे यह कहना है कि आज से मैं आपके यहाँ रहना छोड दूंगा और तब तक आपके पास न आऊँगा, जब तक मैं दारोगा की तरफ से बेफिक्र न होऊँगा, देखना चाहिए मेरे उससे क्योकर निपटती है, वह मुझे मारकर निश्चिन्त होता है या मैं उसे जहन्नुम मे पहुँचा कर कलेजा ठडा करता हूँ। मुझे अपने मरने का रज कुछ भी नही है मगर इस बात का अफसोस जरूर है कि मेरे जाने के बाद आपका मददगार यहाँ कोई भी नही है और कम्बख्त दारोगा आपको फँसाने मे किसी तरह की कसर न करेगा, खैर लाचारी है क्योकि मेरे यहाँ रहने से भी आपका कोई कल्याण नही हो सकता, यो तो मैं छिपे-छिपे कुछ-न-कुछ मदद जरूर करूँगा परन्तु आप जहाँ तक हो सके, खूब होशियारी के साथ काम कीजियेगा।"

मैं—अगर यही बात है तो तुम्हारे भागने की कोई जरूरत नही मालूम होती। हम लोग दारोगा के भेदो को खोलकर खुल्लमखुल्ला उसका मुकाबला कर सकते हैं।

हरनामसिंह—इससे कोई फायदा नही हो सकता, क्योकि हम लोगो के पास दारोगा के खिलाफ कोई सबूत नही है और न उसके बराबर ताकत ही है।

मैं—क्या इन भेदो को हम गोपालसिंह से नही खोल सकते और ऐसा करने से भी कोई काम नही चलेगा ?

हरनामसिंह—नही, ऐसा करने से जो कुछ वरस दो वरस गोपालसिंह की जिंदगी है वह भी न रहेगी अर्थात् हम लोगो के साथ ही साथ वे भी मार डाले जायेंगे। आप नही समझ मकते और नही जानते कि दारोगा की असली सूरत क्या है, उसकी ताकत कैसी है और उसके मजवूत जाल किस कारीगरी के साथ फैले हुए है। गोपालसिंह अपने को राजा और शक्तिमान समझते होंगे, मगर मैं सच कहता हूँ कि दारोगा के सामने उनकी कुछ भी हकीकत नही हैं, हाँ यदि राजा गोपालसिंह किसी को किसी तरह की खवर किए बिना एकाएक दारोगा को गिरफ्तार करके मार डाले तो बेशक वे राजा कहला सकते हैं, मगर ऐसी अवस्था मे मायारानी उन्हे जीता न छोडगी और लक्ष्मीदेवी वाला भेद भी ज्यो-का-त्यो वन्द रह जायेगा और वह भी किसी तहखाने मे पडी-पडी भूखी-प्यासी मर जाएगी।

इसी तरह पर हमारे और हरदीन के वीच मे देर तक वातें होती रही और वह मेरी हर एक वात का जवाव देता रहा। अन्त मे वह मुझे समझा-बुझाकर घर से वाहर निकल गया और उसका पता न लगा।

रात भर मुझे नीद न आई और मैं तरह-तरह की वातें सोचता रह गया। सुवह को चारपाई से उठा, हाथ मुँह धोने के वाद दरवारी कपडे पहने, हर्वे लगाए और राजा साहव की तरफ रवाना हुआ। जव मैं उस तिमुहानी पर पहुँचा, जहाँ से एक रास्ता राजा साहव के दीवानखाने की तरफ और दूसरा खास वाग की तरफ गया है, तव उस जगह पर दारोगा साहव से मुलाकात हुई थी जो दीवानखाने की तरफ से लौटे चले आ रहे थे।

प्रकट मे मुझसे और दारोगा साहव से वहुत अच्छी तरह साहव-सलामत हुई और उन्होने उदासीनता के साथ मुझसे कहा, "आप दीवानखाने की तरफ कहाँ जा रहे हैं, राजा साहव तो खास वाग मे चले गये, मेरे साथ चलिए, मैं भी उन्ही से मिलने के लिए जा रहा हूँ, सुना है कि रात से उनकी तवीयत खराव हो रही है।

मै—(ताज्जुव के साथ) क्यो-क्यो, कुशल तो है ?

दारोगा—अभी-अभी पता लगा है कि आधी रात के वाद से उन्हे बेहिसाव दस्त और उल्टी आ रहे हैं, आप कृपा करके यदि मोहनजी वैद्य को अपने साथ लेते आवें, तो वडा काम हो, मैं खुद उनकी तरफ जाने का इरादा कर रहा था।

दारोगा की वातें सुनकर मैं घवडा गया, राजा साहवकी वीमारी का हाल सुनते ही मेरी तवीयत उदास हो गई और मैं 'अच्छा' कह उल्टे पैर लौटा और मोहनजी वैद्य की तरफ रवाना हुआ।

यहाँ तक अपना हाल कह कुछ देर के लिए भरतसिंह चुप हो गये और दम लेने लगे। इस समय जीतसिंह ने महाराज की तरफ देखा और कहा, "भरतसिंहजी का किस्सा भी आम-दरवार मे कैदियो के सामने ही सुनने लायक है।"

महाराज—बेशक ऐसा ही है। (गोपालसिंह से) तुम्हारी क्या राय है ?

गोपालसिंह—महाराज की इच्छा के विरुद्ध मैं कुछ वोल न सका नहीं तो मैं भी यही चाहता था कि और नकावपोशो की तरह इनका किस्सा भी कैदियो के सामने ही

सुना जाये।

और सभी ने भी यही राय दी, आखिर महाराज ने हुक्म दिया कि 'कल दरबारे आम किया जाये और कैदी लोग दरबार मे लाये जायें।'

दिन पहर भर से कुछ कम बाकी था, जब यह छोटा-सा दरबार बर्खास्त हुआ और सब कोई अपने ठिकाने चले गये, कुँअर आनन्दसिंह शिकारी कपडे पहनकर तारासिंह को साथ लिए महल के बाहर आए और दोनो दोस्त घोडो पर सवार हो जगल की तरफ़ रवाना हो गये।

10

घोडे पर सवार तारासिंह को साथ लिए हुए कुँअर आनन्दसिंह जगल ही जगल घूमते और साधारण ढग पर शिकार खेलते हुए बहुत दूर निकल गये और जब दिन बहुत कम बाकी रह गया, तब धीरे-धीरे घर की तरफ लौटे।

हम ऊपर के किसी बयान में लिख आये हैं कि 'अटारी पर एक सजे हुए बँगले मे बैठी हुई किशोरी, कामिनी और कमलिनी वगैरह ने जगल से निकलकर घर की तरफ आते हुए कुँअर आनन्दसिंह और तारासिंह को देखा तथा यह भी देखा कि दस-बारह नकाबपोशो ने जगल मे से निकल इन दोनो पर तीर चलाये और ये दोनो उनका पीछा करते हुए पुन जगल के अन्दर घुस गए'—इत्यादि।

यह वही मौका है जिसका हम जिक्र कर रहे हैं। उस समय कमला ने एक लौंडी की जबानी इन्द्रजीतसिंह को इस बात की खबर दिलवा दी थी, और खबर पाते ही कुँअर इन्द्रजीतसिंह, भैरोसिंह तथा और भी बहुत से आदमी आनन्दसिंह की मदद के लिए रवाना हो गए थे।

असल बात यह थी कि भूतनाथ की चालाकी से शर्मिन्दगी उठाकर भी नानक ने सब्र नही किया, बल्कि पुन इन लोगो का पीछा किया और अबकी दफे इस ढग से जाहिर हुआ था कि मौका मिले तो आनन्दसिंह को तीर का निशाना बनावे और इसी तरह बारी-बारी से अपने दुश्मनो की जान लेकर कलेजा ठडा करे। मगर उसका यह इरादा भी काम न आया, आनन्दसिंह और तारासिंह की चालाकी और उनके घोडो की चपलता के कारण उसका निशाना कारगर न हुआ और उन्होंने तेजी के साथ उसके सिर पर पहुँच कर सभी को हर तरह से मजबूर कर दिया। तब तक मदद लिए हुए कुँअर इन्द्रजीतसिंह भी जा पहुँचे और आठ साथियो के सहित बेईमान नानक को गिरफ्तार कर लिया। यद्यपि उसी समय यह भी मालूम हो गया कि इसके साथियो मे से कई आदमी निकल गए, मगर इस बात की कुछ परवाह न की गई और जो कुछ गिरफ्तार हो गए थे, उन्ही को लेकर सब कोई घर की तरफ रवाना हो गए।

कम्बख्त नानक पर हर तरह की रिआयत की गई, बहुत कडी सजा पाने के योग्य होने पर भी उसे किसी तरह की सजा न दी गई, और वह इस खयाल से बिलकुल

साफ छोड़ दिया गया कि फिर भी सुधर जाय मगर नही—

भूयोपि सिक्त पयसा घृतेन
न निम्बवृक्षो मधुरत्वमेति

अर्थात् "नीम न मीठो होय जो सीचो गुड घीउ से।"

आखिर नानक को वह दु ख भोगना ही पडा जो उसकी किस्मत मे वदा हुआ था।

जिस समय नानक गिरफ्तार करके लाया गया और लोगो ने उसका हाल सुना उस समय सभी को उसकी नालायकी पर वहुत ही रज हुआ। महाराज की आज्ञानुसार वह कैदखाने मे पहुँचाया गया और सभी को निश्चय हो गया कि अव इसे किसी तरह छुटकारा नही मिल सकता।

दूसरे दिन दरवारे-आम का वन्दोवस्त किया गया और कैदियो का मुकदमा सुनने के लिए वडे शौक से लोग इकट्ठा होने लगे। हथकडियो-वेडियो से जकडे हुए कैदी लोग हाजिर किए गए और आपस वालो तथा ऐयारो को साथ लिए हुए महाराज भी दरवार मे आकर एक ऊँची गद्दी पर वैठ गये। आज के दरवार मे भीड मामूली से वहुत ज्यादा थी और कैदियो का मुकदमा सुनने के लिए सभी उतावले हो रहे थे। भरतसिह, दलीपशाह, अर्जुनसिह तथा उनके और भी दो साथी, जो तिलिस्म के वाहर होने के वाद अपने घर चले गए थे और अव लौट आये है, अपने-अपने चेहरो पर नकाव डाल कर दरवार मे राजा गोपालसिह के पास वैठ गये और महाराज के हुक्म का इन्तजार करने लगे।

महाराज का इशारा पाकर भरतसिह खडे हो गए और उन्होने दारोगा तथा जयपाल की तरफ देखकर कहा—

"दारोगा साहव, जरा मेरी तरफ देखिए और पहचानिए कि मैं कौन हूँ। जयपाल, तू भी इधर निगाह कर।"

इतना कहकर भरतसिह ने अपने चेहरे पर से नकाव उलट दी और एक दफा चारो तरफ देखकर सभी का ध्यान अपनी तरफ खीच लिया। सूरत देखते ही दारोगा और जयपाल थर-थर काँपने लगे। दारोगा ने लडखडाई हुई आवाज से कहा, "कौन? ओफ, भरतसिह! नही-नही, भरतसिह कहाँ? उसे मरे वहुत दिन हो गए, यह तो कोई ऐयार है!"

भरतसिह—नही-नही, दारोगा साहव! मैं ऐयार नही हूं, मैं वही भरतसिह हूँ जिसे आपने हद से ज्यादा सताया था, मैं वही भरतसिह हूँ जिसके मुँह पर आपने मिर्च का तोवडा चढाया था और मैं वही भरतसिह हूँ जिसे आपने अँधेरे कुएं मे लटका दिया था। सुनिये मैं अपना किस्सा वयान करता हूँ और यह भी कहता हूँ कि आखिर मे मेरी जान क्योकर वची। जयपालसिह, आप भी सुनिए और हुकारी भरते चलिए।

इतना कहकर भरतसिह ने अपना किस्सा आदि से कहना आरम्भ किया जैसा कि हम ऊपर वयान कर आये हैं और इसके वाद यो कहने लगे—

भरतसिह—दारोगा की वातो ने मुझे घवरा दिया और मैं उलटे पैर मोहनजी

वैद्य को बुलाने के लिए रवाना हुआ। मुझे इस बात का रत्ती भर भी शक न था कि मोहनजी और दारोगा साहब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं अथवा उन दोनों में हमारे लिए कुछ बातें तय पा चुकी हैं। मैं बेधड़क उनके मकान पर गया और इत्तिला कराने के बाद उनके एकान्त वाले कमरे में जा पहुँचा जहाँ उन्होंने मुझे बुलवा भेजा था। उस समय वे अकेले बैठे माला जप रहे थे। नौकर मुझे वहाँ तक पहुँचा कर विदा हो गया और मैंने उनके पास बैठकर राजा साहब का हाल बयान करके खास बाग में चलने के लिए कहा। जवाब में वैद्यजी यह कह कर कि 'मैं दवाओं का बन्दोबस्त करके अभी आपके साथ चलता हूँ' खड़े हुए और आलमारी में से कई तरह की शीशियाँ निकाल-निकाल कर जमीन पर रखने लगे। उसी बीच में उन्होंने एक छोटी शीशी निकाल कर मेरे हाथ में दी और कहा, "देखिए यह मैंने एक नये ढंग की ताकत की दवा तैयार की है, खाना तो दूर रहा इसके सूंघने ही से तुरन्त मालूम होता है कि बदन में एक तरह की ताकत आ रही है। लीजिए, जरा सूंघ के अन्दाज तो कीजिए।"

मैं वैद्यजी के फेर में पड़ गया और शीशी का मुँह खोलकर सूंघने लगा। इतना तो मालूम हुआ कि इसमें कोई खुशबूदार चीज है मगर फिर तन-बदन की सुध न रही। जब मैं होश में आया तो अपने को हथकड़ी-बेड़ी से मजबूर एक अँधेरी कोठरी में कैद पाया। नहीं कह सकता कि वह दिन का समय था या रात का। कोठरी के एक कोने में चिराग जल रहा था और दारोगा तथा जयपाल हाथ में नंगी तलवार लिए सामने बैठे हुए थे।

मैं—(दारोगा से) अब मालूम हुआ कि आपने इसी काम के लिए मुझे वैद्यजी के पास भेजा था।

दारोगा—बेशक इसीलिए, क्योंकि तुम मेरी जड़ काटने के लिए तैयार हो चुके थे।

मैं—तो फिर मुझे कैद कर रखने से क्या फायदा? मार कर बखेड़ा निपटाइए और बेखटके आनन्द कीजिए।

दारोगा—हाँ, अगर तुम मेरी बात नहीं मानोगे, तो बेशक मुझे ऐसा ही करना पड़ेगा।

मैं—मानने की कौन-सी बात है? मैंने तो अभी तक कोई ऐसा काम नहीं किया जिससे आपको किसी तरह का नुकसान पहुँचे।

दारोगा—ये सब बातें तो रहने दो, क्योंकि तुम और हरदीन मिलकर जो कुछ कर चुके थे और जो करना चाहते थे, उसे मैं खूब जानता हूँ मगर बात यह है कि अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हें इस कैद से छुट्टी दे सकता हूँ, नहीं तो मौत तुम्हारे लिए तय हुई रक्खी है।

मैं—खैर बताइये तो सही कि वह कौन-सा काम है जिसके करने से छुट्टी मिल सकती है।

दारोगा—यही कि तुम एक चिट्ठी इन रघुबरसिंह अर्थात् जयपाल के नाम की लिख दो जिसमें यह बात हो कि 'लक्ष्मीदेवी के बदले में मुन्दर को मायारानी बना देने

मे जो कुछ मेहनत की है वह हम तुम दोनो ने मिल कर की है अतएव उचित है कि इस काम मे जो कुछ तुमने फायदा उठाया है उसमे से आधा मुझे बाँट दो, नही तो तुम्हारे लिए अच्छा न होगा।"

मैं—ठीक है, आपका मतलब मैं समझ गया, खैर आज तो नही मगर कल जैसा आप कहते हैं, वैसा ही कर दूंगा।

दारोगा—आखिर एक दिन की देर करने मे तुमने क्या फायदा सोचा है?

मैं—सो भी कल ही बताऊँगा।

दारोगा—अच्छा क्या हर्ज है, कल ही सही।

इतना कहकर दारोगा चला गया और मैं भूखा-प्यासा उसी कोठरी मे पडा हुआ तरह-तरह की वाते सोचने लगा क्योकि उस दिन दारोगा ने मेरे खाने-पीने के लिए कुछ भी प्रवन्ध न किया। मुझे निश्चय हो गया कि इस ढंग की चिट्ठी लिखाने के वाद दारोगा मुझे जान से मार डालेगा और मेरे मरने के वाद यही चिट्ठी मेरी बदनामी का सवव वनेगी। मेरे दोस्त गोपालसिंह मुझको वेईमान समझेंगे और तमाम दुनिया मुझे कमीना खयाल करेगी। अत मैंने दिल मे ठान ली कि चाहे जान जाय या रहे, मगर इस तरह की चिट्ठी मै कदापि न लिखूंगा। आखिर मरना तो जरूरी है फिर कलक का टीका जान-बूझ कर अपने माथे क्यो लगाऊँ?

दूसरे दिन रघुवरसिंह को साथ लिए हुए दारोगा पुन मेरे पास आया।

भरतसिंह ने अपना हाल यहाँ ही तक वयान किया था कि राजा गोपालसिंह ने वीच ही मे टोका और पूछा, "क्या रघुवरसिंह भी इसी जयपाल का नाम है?"

भरतसिंह—जी हाँ, इसका नाम रघुवरसिंह था और कुछ दिन के लिए इसने अपना नाम 'भूतनाथ' रख लिया था।

गोपालसिंह—ठीक है, मुझे इस वारे मे धोखा हुआ नही, वल्कि मेरे खजाची ही ने मुझे धोखा दिया। खैर तव क्या हुआ?

भरतसिंह—हाँ, तो दूसरे दिन जयपाल को साथ लिए हुए दारोगा पुनः मेरे पास आया और बोला, "कहो, चिट्ठी लिख देने के लिए तैयार हो या नही?" इसके जवाव मे मैंने कहा कि "मर जाना मजूर है मगर झूठे कलक का टीका अपने माथे पर लगाना मजूर नही।"

दारोगा ने मुझे कई तरह से समझाया-बुझाया और धोखे मे डालना चाहा, मगर मैंने उसकी एक न सुनी। आखिर दोनो ने मिलकर मुझे मारना शुरू किया, यहाँ तक मारा कि मैं वेहोश हो गया। जव होश मे आया तो फिर उसी तरह अपने को कैद पाया। भूख और प्यास के मारे मेरा वुरा हाल हो गया था और मार के सवव से तमाम वदन चूर-चूर हो रहा था। तीसरे दिन दोनो शैतान पुन मेरे पास आये और जव उस दिन भी मैंने दारोगा की वात न मानी तो उसने घोड़ो के दाना खाने वाले तोवडे मे चूरा किया हुआ मिरचा रख कर मेरे मुँह पर चढा दिया। हाय-हाय! उस तकलीफ को मैं कभी नही भूल सकता!

यहाँ तक कहकर भरतसिंह चुप हो गये और दारोगा तथा जयपाल की तरफ

देखने लगे। वे दोनो सिर नीचा किए हुए जमीन की तरफ देख रहे थे और डर के मारे दोनो का बदन काँप रहा था। भरतसिह ने पुकार कर कहा, "कहिए दारोगा साहब, जो कुछ मैं कह रहा हूँ वह सच है या झूठ ?" मगर दारोगा ने इसका कुछ भी जवाब न दिया। मगर उस समय दरवार मे जितने आदमी वैठे थे, क्रोध के मारे सभी का वुरा हाल था और सव कोई दारोगा की तरफ जलती हुई निगाह से देख रहे थे। भरतसिह ने फिर इस तरह कहना शुरू किया—

भरतसिह—दारोगा के सम्बन्ध मे मेरा किस्सा वैसा दिलचस्प नही है जैसा दलीपशाह और अर्जुनसिह का आप लोग सुनेंगे, क्योंकि उनके साथ वडी-वडी विचित्र घटनाएँ हो चुकी है, वल्कि यो कहना चाहिए कि मेरा तमाम किस्सा उनकी एक दिन की घटना का मुकावला भी नही कर सकता, परन्तु साथ ही इसके यह वात भी जरूर है कि मने न तो कभी किसी के साथ किसी तरह की वुराई की और न किसी मे विशेप मेलजोल या हँसी-दिल्लगी ही रखता था, फिर भी उन दिनो जमानिया की वह दशा थी कि सादे ढग पर जिन्दगी विताने वाला मै भी सुख की नीद न सो सका और राजा साहव की दोस्ती की वदौलत मुझे हर तरह का दुःख भोगना पडा। इस हरामखोर दारोगा ने ऐसे-ऐसे कुकर्म किए हैं कि जिनका पूरा-पूरा वयान हो ही नही सकता और न यही मेरी समझ मे आता है कि दुनिया मे कौन-सी ऐसी सजा है जो इसके योग्य समझी जाय। अत अव मैं सक्षेप मे अपना हाल समाप्त करता हूँ।

अपने मन के माफिक चिट्ठी लिखाने की नीयत से आठ दिन तक कम्वख्त दारोगा ने मुझे वेहिसाव तकलीफें दी। मिर्च का तोवडा मेरे मुँह पर चढाया, जहरीली राई का लेप मेरे वदन पर किया, कुएँ मे लटकाया, गन्दी कोठरी मे वन्द किया, जो-जो सूझा सब कुछ किया और इतने दिनो तक वरावर ही मुझे भूखा भी रखा, मगर न मालूम क्या सवव था कि मेरी जान नही निकली। मैं वरावर ईश्वर से प्रार्थना करता था कि किसी तरह मुझे मौत दे जिससे इस दुःख से छुट्टी मिले। आखिरी दिन मैं इतना कमजोर हो गया था कि मुझमे वात करने की ताकत न थी।

उस दिन आधी रात के समय मैं उसी कोठरी मे पडा-पडा मौत का इन्तजार कर रहा था कि यकायक कोठरी का दरवाजा खुला और एक नकावपोश दाहिने हाथ मे नगी तलवार और वाएँ हाथ मे एक छोटी-सी गठरी लिए हुए कोठरी के अन्दर आता हुआ दिखाई पडा। हाथ मे वह जो तलवार लिए था, उसके अतिरिक्त उसकी कमर मे एक तलवार और भी थी। कोठरी के अन्दर आते ही उसने भीतर से दरवाजा वन्द कर दिया और मेरे पास चला आया, हाथ की गठरी और तलवार जमीन पर रख मुझसे चिपट गया और रोने लगा। उसकी ऐसी मुहव्वत देख मैं चौक पडा और मुझे तुरन्त मालूम हो गया कि यह मेरा पुराना खैरख्वाह हरदीन है। उसके चेहरे से नकाव हटाकर मैंने उसकी सूरत देखी और तव रोने मे उसका साथ दिया।

थोडी ही देर वाद हरदीन मुझसे अलग हुआ और वोला, "मैं किसी न किसी तरह यहाँ तो पहुँच गया मगर यहाँ से निकल भागना जरा कठिन है, तथापि आप घव-रायें नही, मैं एक दफा तो दुश्मन को सताए विना नही रहता। अव आप शीघ्र उठें और

जो कुछ मैं खाने-पीने के लिए लाया हूँ उसे खा कर चैतन्य हो जायें।"

जो गठरी हरदीन लाया था उसमे खाने-पीने का सामान था। उसने मुझे भोजन कराया, पानी पिलाया और इसके बाद मेरे हाथ मे एक तलवार देकर बोला, "बस, अब आप उठिये और मेरे पीछे-पीछे चले आइए। इतना समय नही है कि मैं यहाँ आपसे विशेष बाते करूँ, इसके अतिरिक्त जिस जगह पर आप कैद है, यह तिलिस्म का एक हिस्सा है, यहाँ से निकलने के लिए भी बहुत उद्योग करना होगा।"

भोजन करने से कुछ ताकत तो मुझमे हो ही गई थी, मगर कैद से छुटकारा मिलने की उम्मीद ने उससे भी ताकत पैदा कर दी। मै उठ खडा हुआ और हरदीन के पीछे-पीछे रवाना हुआ। कोठरी का दरवाजा खोलने के बाद जब बाहर निकला तब मुझे मालूम हुआ कि मै खास बाग के तीसरे दर्जे मे हूँ जिसमे कई दफा राजा गोपालसिंह के साथ आ चुका था, मगर इस बात से मुझको बहुत ही ताज्जुब हुआ और मैं सोचने लगा कि देखो राजा साहब के खास बाग ही मे यह दारोगा लोगो पर इतना जुल्म करता है और राजा साहब को खबर तक नही होती! क्या यहाँ कई ऐसे स्थान हैं जिनका हाल दारोगा जानता है और राजा साहब नही जानते?

खैर, मैं कोठरी से बाहर निकलकर बरामदे मे पहुँचा जहाँ से बायें और दाहिने सिर्फ दो ही तरफ जाने का रास्ता था। दाहिनी तरफ को इशारा करके हरदीन ने मुझसे कहा, "इसी तरफ से मैं आया हूँ, दारोगा, जयपाल तथा बहुत से आदमी इसी तरफ बैठे हैं इसलिए इधर तो अब जा नही सकते, हाँ बाईं तरफ चलिए, कही-न-कही से तो रास्ता मिल ही जायगा।"

रात चाँदनी थी और ऊपर से खुला रहने के सबब उधर की हर एक चीज साफ-साफ दिखाई देती थी। हम दोनो आदमी बाईं तरफ रवाना हुए। लगभग पच्चीस कदम जाने के बाद नीचे उतरने के लिए दस-बारह सीढियाँ मिली जिन्हे तय करने के बाद हम दालान मे पहुँचे जो बहुत लम्बा-चौडा तो न था मगर निहायत खूबसूरत और स्याह पत्थर का बना हुआ था। उस दालान मे पहुँचे ही थे कि पीछे से दारोगा और जयपाल तेजी के साथ आते हुए दिखाई पडे, मगर हरदीन ने इनकी कुछ भी परवाह न की और कहा, "इन दोनो के लिए तो मैं अकेला ही काफी हूँ।"

हरदीन मुझे अपने पीछे करने के बाद अकडकर खडा हो गया। उसने दारोगा को सैकडो गालियाँ दी और मुकाबला करने के लिए ललकारा, मगर उन दोनो की हिम्मत न पडी कि आगे बढें और हरदीन का मुकाबला करें। कुछ देर तक खडे-खडे देखने और सोचने के बाद दारोगा ने अपनी जेब से एक छोटा सा गोला निकाला और हम दोनो की तरफ फेंका। हरदीन समझ गया कि जमीन पर गिरने के साथ ही इसमे से बेहोशी का धुआँ निकलेगा। उसने अपने हाथ से मुझे इशारा किया। गोला जमीन पर गिरकर फटा और उसमे से बहुत-सा धुआँ निकला, मगर हम दोनो वहाँ से हट गये थे। इसलिए उसका कुछ असर न हुआ। उसी समय दारोगा ने हम लोगो की तरफ फेंकने के लिए दूसरा गोला निकाला।

इस दालान के बीचोबीच मे एक छोटा-सा चबूतरा लाल पत्थर का बना हुआ

था, मगर हम दोनो यह नहीं जानते थे कि इसमे क्या गुण है। दारोगा को दूसरा गोला निकालते देख हम दोनो उस चबूतरे पर चढ गये, मगर उस से उतरकर भाग न सके, क्योकि चढने के साथ ही चबूतरा हिला, तथा हम दोनो को लिए हुए जमीन के अन्दर धँस गया और साथ ही न मालूम किस चीज के असर से हम दोनो वेहोश हो गये। जव होश मे आये तो चारो तरफ अन्धकार ही अन्धकार दिखाई दिया, नही कह सकते कि हम दोनो कितनी देर तक वेहोश रहे।

कुछ देर तक चुपचाप वैठे रहने के वाद सामने की तरफ कुछ उजाला मालूम हुआ और वह उजाला धीरे-धीरे वढने लगा जिससे हमने समझा कि सामने कोई दरवाजा है और उसमे से सुबह की सफेदी दिखाई दे रही है। हम दोनो उठकर खडे हुए और उसी उजाले की तरफ वढे। वास्तव मे वैसा ही था जैसा हम लोगो ने सोचा था। कई कदम चलने के वाद एक दरवाजा मिला जिसे लाँघकर हम दोनो उसी वुर्ज वाले वाग मे जा पहुँचे जहाँ दोनो कुमारो से मुलाकात हुई थी। इसके वाद वाहर का हाल वहुत दिनो तक कुछ भी मालूम न हुआ कि क्या हो रहा है और क्या हुआ। वहुत दिनो तक वहाँ से वाहर निकलने के लिए उद्योग करते रहे, परन्तु सव कुछ व्यर्थ हुआ और वहाँ से छुट्टी तभी मिली जव दोनो कुमारो के दर्शन हुए।[1] कुछ दिनो वाद दलीपशाह से भी उसी वाग मे मुलाकात हुई जिसका हाल उनका किस्सा सुनने से आप लोगो को मालूम होगा। बस, इतना ही तो मेरा किस्सा है। हाँ, जव आप दलीपशाह की कहानी सुनेंगे तव वेशक कुछ आनन्द मिलेगा। (एक नकावपोश की तरफ वताकर) मेरा पुराना खैरखाह हरदीन यही है जो इतने दिनो तक मेरे दु ख-सुख का साथी वना रहा और अन्त मे मेरे साथ ही कैद से छूटा।

भरतसिंह की कथा समाप्त होने के वाद दरबार वर्खास्त किया गया और महाराज ने हुक्म दिया कि "कल के दरबार मे दलीपशाह अपना किस्सा वयान करेंगे।"

11

दूसरे दिन पुन उसी ढग का दरवार लगा और सव लोग अपने-अपने ठिकाने पर वैठ गये।

इशारा पाकर दलीपशाह उठ खडा हुआ और उसने अपने चेहरे पर से नकाब हटाकर दारोगा, जयपाल, वेगम और नागर वगैरह की तरफ देखकर कहा—

दलीपशाह—आप लोगो की खुशकिस्मती का जमाना तो वीत गया, अव वह जमाना आ गया है कि आप लोग अपने किये का फल भोगें और देखें कि आपने जिन लोगो को जहन्नुम मे पहुँचाने का वीडा उठाया था आज ईश्वर की कृपा से वे ही लोग आपको हँसते-खेलते दिखाई देते हैं। खैर, मुझे इन वातों से कोई मतलव नही, इसका निपटारा तो महाराज की आज्ञा से होगा, मुझे अपना किस्सा वयान करने का हुक्म हुआ है सो वयान

1 देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति, वीसवाँ भाग, चौथा वयान।

करता हूँ। (और लोगो की तरफ देखकर) मेरे किस्से से भूतनाथ का भी बहुत ही बडा सम्बन्ध है, मगर इस खयाल से कि महाराज ने भूतनाथ का कसूर माफ करके उसे अपना ऐयार बना लिया है, मैं अपने किस्से मे उन बातो का जिक्र छोडता जाऊँगा जिनसे भूतनाथ की बदनामी होती है, इसके अतिरिक्त भूतनाथ प्रतिज्ञानुसार महाराज के आगे पेश करने लिए स्वय अपनी जीवनी लिख रहा है जिससे महाराज को पूरा-पूरा हाल मालूम हो जायगा, अत अब मुझे कुछ कहने की जरूरत नही है।

मैं मिर्जापुर के रहने वाले दीनदयालसिंह ऐयार का लडका हूँ। मेरे पिता महाराज धौलपुर के यहाँ रहते थे और वहाँ उनकी बहुत इज्जत और कदर थी। उन्होंने मुझे ऐयारी सिखाने मे किसी तरह की त्रुटि नही की। जहाँ तक हो सका, दिल लगाकर मुझे ऐयारी सिखाई और मैं भी इस फन मे खूब होशियार हो गया, परन्तु पिता के मरने के बाद मैंने किसी रियासत मे नौकरी नही की। मुझे अपने पिता की जगह मिलती थी और महाराज मुझे बहुत चाहते थे, मगर मैंने पिता के मरने के साथ ही रियासत छोड दी और अपने जन्म-स्थान मिर्जापुर मे चला आया क्योकि मेरे पिता मेरे लिए बहुत दौलत छोड गये थे और मुझे खाने-पीने की कुछ परवाह न थी। पिता के देहान्त के साल भर पहले ही मेरी माँ मर चुकी थी, अतएव केवल मैं और मेरी स्त्री दो आदमी अपने घर के मालिक थे।

जमानिया की रियासत से मुझे किसी तरह का सम्बन्ध नही था, परन्तु इसलिए कि मैं एक नामी ऐयार का लडका और खुद भी ऐयार था तथा बहुत से ऐयारो से गहरी जान-पहचान रखता था, मुझे चारो तरफ की खबरें बराबर मिला करती थी, इसी तरह जमानिया मे जो कुछ चालबाजियाँ हुआ करती थी, वे भी मुझसे छिपी हुई न थी। भूतनाथ की और मेरी स्त्री आपस मे मौसेरी बहिनें होती हैं और भूतनाथ का जमानिया से बहुत घना सम्बध हो गया था, इसलिए जमानिया का हाल जानने के लिए मैं उद्योग भी किया करता था, मगर उसमे किसी तरह का दखल नही देता था। (दारोगा की तरफ इशारा करके) इस हरामखोर दारोगा ने रियासत पर अपना दबाव डालने की नीयत से विचित्र ढोंग रच लिया था, शादी नही की थी और बाबाजी तथा ब्रह्मचारी के नाम से अपने को प्रसिद्ध कर रखा था, बल्कि मौके-मौके पर लोगो को कहा करता था कि मैं तो साधू आदमी हूँ, मुझे रुपये-पैसे की जरूरत ही क्या है, मै तो रियासत की भलाई और परोपकार मे अपना समय बिताना चाहता हूँ, इत्यादि। परन्तु वास्तव मे यह परले सिरे का ऐयाश, बदमाश और लालची था जिसके विषय मे कुछ विशेष कहना मैं पसन्द नही करता।

मेरे पिता और इन्द्रदेव के पिता दोनो दिली दोस्त और ऐयारी मे एक ही गुरु के शिष्य थे, अतएव मुझमे और इन्द्रदेव मे भी उसी प्रकार की दोस्ती और मुहब्बत थी। इसलिए मैं प्राय इन्द्रदेव से मिलने के लिए उनके घर जाया करता और कभी-कभी वे भी मेरे घर आया करते थे। जरूरत पडने पर इन्द्रदेव की इच्छानुसार मैं उनका कुछ काम कर दिया करता और उन्ही के यहाँ कभी-कभी इस कम्बख्त दारोगा से भी मुलाकात हो जाया करती थी, बल्कि कहना चाहिए कि इन्द्रदेव ही के सबब से दारोगा, जयपाल राजा गोपालसिंह और भरतसिंह तथा जमानिया के और भी कई नामी आदमियो से मेरी

मुलाकात और साहव-सलामत हो गई थी ।

जव भूतनाथ के हाथ से बेचारा दयाराम मारा गया, तव से मुझमे और भूतनाथ मे एक प्रकार की खिचाखिची हो गई थी और वह खिचाखिची दिनो-दिन वढती ही गई यहाँ तक कि कुछ दिनो वाद हम दोनो की साहव-सलामत भी छूट गई ।

एक दिन मैं इन्द्रदेव के यहाँ वैठा हुआ भूतनाथ के विषय मे वातचीत कर रहा था, क्योकि उन दिनो यह खवर वडी तेजी के साथ मशहूर हो रही थी कि 'गदाधरसिंह (भूतनाथ)मर गया ।" परन्तु उस समय इन्द्रदेव इस वात पर जोर दे रहे थे कि भूतनाथ मरा नही, कही छिपकर वैठ गया है, कभी न कभी यकायक प्रकट हो जायगा । इसी समय दारोगा के आने की इत्तिला मिली जो वडी शान-शौकत के साथ इन्द्रदेव से मिलने के लिए आया था । इन्द्रदेव वाहर निकल कर वडी खातिर के साथ इसे घर के अन्दर ले गये और अपने आदमियो को हुक्म दे गये कि दारोगा के साथ जो आदमी आये हैं उनके खाने-पीने और रहने का उचित प्रवन्ध किया जाय ।

दारोगा को साथ लिए हुए इन्द्रदेव उसी कमरे मे आये जिसमे मैं पहले ही से वैठा हुआ था, क्योकि इन्द्रदेव की तरह मैं दारोगा को लेने के लिए मकान के वाहर नही गया था और न दारोगा के आ पहुँचने पर मैंने उठकर इसकी इज्जत ही वढाई, हाँ, साहव-सलामत जरूर हुई । यह वात दारोगा को वहुत ही वुरी मालूम हुई, मगर इन्द्रदेव को नही, क्योकि इन्द्रदेव गुरुभाई का सिर्फ नाता निवाहते थे, दिल से दारोगा की खातिर नही करते थे ।

इन्द्रदेव से और दारोगा से देर तक तरह-तरह की वातें होती रही, जिसमे मौके-मौके पर दारोगा अपनी होशियारी और वुद्धिमानी की तस्वीर खीचता रहा । जव ऐयारो की कहानी छिडी तो वह यकायक मेरी तरफ पलट पडा और बोला, "आप इतने वडे ऐयार के लडके होकर घर मे वेकार क्यो वैठे है ? और नही तो मेरी ही रियासत मे काम कीजिए, यहाँ आपको वहुत आराम मिलेगा, देखिये विहारीसिंह और हरनामसिंह कैसी इज्जत और खुशी के साथ रहते हैं, आप तो उनसे ज्यादा इज्जत के लायक है ।"

मैं—मैं वेकार तो वैठा रहता हूँ, मगर अभी तक अपने को महाराज धौलपुर का नौकर समझता हूँ, क्योकि रियासत का काम छोड देने पर भी वहाँ से मुझे खाने को वरावर मिल रहा है ।

दारोगा—(मुँह वनाकर)अजी, मिलता भी होगा तो आखिर क्या, एक छोटी-सी रकम से आपका क्या काम चल सकता है ? आखिर अपने पल्ले की जमा तो खर्च करते ही होगे ।

मैं—यह भी तो महाराज का ही दिया हुआ है ।

दारोगा—नही, वह आपके पिता का दिया हुआ है । खैर, मेरा मतलव यह है कि वहाँ से अगर कुछ मिलता है तो उसे भी आप रखिये और मेरी रियासत से भी फायदा उठाइए ।

मैं—ऐसा करना वेईमानी और नमकहरामी कहा जायगा और यह मुझसे न हो सकेगा ।

दारोगा—(हँसकर) वाह वाह ! ऐयार लोग दिन-रात ईमानदारी की हँडियाँ ही तो चढाए रहते हैं !

मैं—(तेजी के साथ) बेशक ! अगर ऐसा नही तो वह ऐयार नही, रियासत का कोई ओहदेदार कहा जायगा !

दारोगा—(तनकर) ठीक है ! गदाधरसिंह आप ही का नातेदार तो है, जरा उसकी तस्वीर तो खीचिये !

मैं—गदाधरसिंह किसी रियासत का ऐयार नही है और न मैं उसे ऐयार समझता हूँ' इतना होने पर भी आप यह नही साबित कर सकते कि उसने अपने मालिक के साथ किसी तरह की बेईमानी की।

दारोगा—(और भी तुनक के) बस-बस-बस, रहने दीजिये। हमारे यहाँ भी बिहारीसिंह और हरनामसिंह ऐयार ही तो हैं।

मैं—इसी से तो मैं आपकी रियासत मे जाना बेइज्जती समझता हूँ।

दारोगा—(भौंह सिकोडकर) तो इसका यह मतलब कि हम लोग बेईमान और नमकहराम हैं !

मैं—(मुस्कराकर) इस बात को तो आप ही सोचिये !

दारोगा—देखिये, जुबान सँभालकर बात कीजिए, नही तो समझ लीजिए कि मैं मामूली आदमी नही हूँ !

मैं—(क्रोध से) यह तो मैं खुद कहता हूँ कि आप मामूली आदमी नही हैं क्योंकि आदमी मे शर्म होती है और वह जानता है कि ईश्वर भी कोई चीज है।

दारोगा—(क्रोध-भरी आँखें दिखाकर) फिर वही बात !

मैं—हाँ वही बात ! गोपालसिंह के पिता वाली बात ! गुप्त कमेटी वाली बात, गदाधरसिंह की दोस्ती वाली बात ! लक्ष्मीदेवी की शादी वाली बात और जो बात कि आपके गुरुभाई साहब को नही मालूम है वह बात !

दारोगा—(दाँत पीसकर और कुछ देर मेरी तरफ देखकर) खैर, अब इस बहुत-सी बात का जवाब लात ही से दिया जायगा।

मैं—बेशक, और साथ ही इसके यह भी समझ रखिए कि जवाब देने वाले भी एक-दो नही हैं, लातो की गिनती भी आप न सम्हाल सकेंगे। दारोगा साहब, जरा होश मे आइए और सोच-विचार कर बातें कीजिए। अपने को आप ईश्वर न समझिए, बल्कि यह समझकर बातें कीजिए कि आप आदमी हैं और रियासत धौलपुर के किसी ऐयार से बातें कर रहे हैं।

दारोगा—(इन्द्रदेव की तरफ आँखे तरेरकर) क्या आप चुपचाप बैठे तमाशा देखेंगे और अपने मकान मे मुझे बेइज्जत करावेंगे ?

इन्द्रदेव—आप तो खुद ही अपनी अनोखी मिलनसारी से अपने को बेइज्जत करा रहे हैं, इनसे बात बढाने की आपको जरूरत ही क्या थी ? मैं आप दोनो के बीच मे नही बोल सकता, क्योंकि दलीपशाह को भी अपना भाई समझता और इज्जत की निगाह से देखता हूँ।

दारोगा—तो फिर जैसे वने, हम इनसे निपट ले।

इन्द्रदेव—हां-हां।

दारोगा—पीछे उलाहना न देना, क्योकि आप इन्हे अपना भाई समझते हैं।

इन्द्रदेव—मैं कभी उलाहना न दूंगा।

दारोगा—अच्छा तो अव मैं जाता हूँ, फिर कभी मिलूंगा तो वातें करूंगा।

इन्द्रदेव ने इस वात का कुछ भी जवाव न दिया। हां, जव दारोगा साहव वहां से विदा हुए तो उन्हे दरवाजे तक पहुँचा आये। जव लौटकर कमरे में मेरे पास आये तो मुस्कुराते हुए वोले, "आज तो तुमने इसकी खूव खवर ली। 'जो वात तुम्हारे गुरुभाई साहव को नही मालूम है, वही वात' इन शब्दो ने तो उसका कलेजा छेद दिया होगा। मगर तुमसे वेहतर रज होकर गया है, इस वात का खूव खयाल रखना।"

मैं—आप इस वात की चिन्ता न कीजिए, देखिए मैं इन्हे कैसे छकाता हूँ। मगर वाह रे आपका कलेजा! इतना कुछ हो जाने पर भी आपने अपनी जुवान से कुछ न कहा, वल्कि पुराने वर्ताव मे वल तक न पडने दिया!

इन्द्रदेव—मैंने तो अपना मामला ईश्वर के हवाले कर दिया है।

मैं—खैर, ईश्वर अवश्य इन्साफ करेगा। अच्छा तो अव मुझे भी विदा कीजिए, क्योकि अव इसके मुकावले का वन्दोवस्त शीघ्र करना पडेगा।

इन्द्रदेव—यह तो मैं फिर कहूँगा कि आप वेफिक्र न रहिए।

थोडी देर तक और वातचीत करने के वाद मैं इन्द्रदेव से विदा होकर अपने घर आया और उसी समय से दारोगा के मुकावले का ध्यान मेरे दिमाग मे चक्कर लगाने लगा।

घर पहुँचकर मैंने सव हाल अपनी स्त्री से वयान किया और ताकीद की कि हरदम होशियार रहा करना। उन दिनो मेरे यहाँ कई शागिर्द भी रहा करते थे, जिन्हे मैं ऐयारी सिखाता था। उनसे भी यह सव हाल कहा और होशियार रहने की ताकीद की। उन शागिर्दों मे गिरिजाकुमार नाम का एक लडका वडा ही तेज और चचल था, लोगो को धोखे मे डाल देना तो उसके लिए मामूली वात थी। वातचीत के समय वह अपना चेहरा ऐसा बना लेता था कि अच्छे-अच्छे उसकी वातो मे फँसकर वेवकूफ वन जाते थे। यह गुण उसे ईश्वर का दिया हुआ था जो वहुत कम ऐयारो मे पाया जाता है। अत गिरिजाकुमार ने मुझसे कहा कि "गुरुजी, यदि दारोगा वाला मामला आप मेरे सुपुर्द कर दीजिए, तो मै वहुत ही प्रसन्न होऊँगा और उसे ऐसा छकाऊँगा कि वह भी याद करे। जमानिया मे मुझे कोई पहचानता भी नही है, अतएव मैं अपना काम वडे मजे मे निकाल लूंगा।"

मैंने उसे समझाया और कहा कि "कुछ दिन सब्र करो, जल्दी क्यो करते हो, फिर जैसा मौका होगा किया जायेगा।" मगर उसने एक न मानी। हाथ जोडकर और खुशामद करके, गिडगिडा करके, जिस तरह हो सका, उसने आज्ञा ले ही ली और उसी दिन सव सामान दुरुस्त करके मेरे यहाँ से चला गया।

अव मैं थोडा-सा हाल गिरिजाकुमार का वयान करूंगा कि इसने दारोगा के साथ क्या किया।

आप लोगो को यह बात सुनकर ताज्जुब होगा कि मनोरमा असल मे दारोगा साहब की रण्डी है। इन्ही की वदौलत मायारानी के दरबार मे उसकी इज्जत बढी और इन्ही की बदौलत उसने मायारानी को अपने फन्दे मे फँसाकर बे-हिसाब दौलत पैदा की। पहले-पहल गिरिजाकुमार ने मनोरमा के मकान पर ही दारोगा से मुलाकात की थी।

दारोगा साहब मनोरमा से प्रेम रखते थे सही, मगर इसमे कोई शक नही कि इस प्रेम और ऐयाशी को इन्होंने बहुत अच्छे ढग से छिपाया और बहुत आदमियो को मालूम न होने दिया तथा लोगो की निगाहो मे साधु और ब्रह्मचारी ही बने रहे। स्वय तो जमानिया मे रहते थे, मगर मनोरमा के लिए इन्होने काशी मे एक मकान भी बनवा दिया था, दसवें-बारहवें दिन अथवा जब कभी समय मिलता, तेज घोडे पर या रथ पर सवार होकर काशी चले जाते और दस-बारह घण्टे मनोरमा के मेहमान रहकर लौट जाते।

एक दिन दारोगा साहब आधी रात के समय मनोरमा के खास कमरे मे बैठे हुए उसके साथ शराब पी रहे थे और साथ-ही-साथ हँसी-दिल्लगी का आनन्द भी लूट रहे थे। उन समय इन दोनो मे इस तरह की बातें हो रही थी—

दारोगा—जो कुछ मेरे पास है, सब तुम्हारा है। रुपये-पैसे के बारे मे तुम्हे कभी तकलीफ न होने दूँगा। तुम बेशक अमीराना ठाठ के साथ रहो और खुशी से जिन्दगी बिताओ, गोपालसिह अगर तिलिस्म का राजा है तो क्या हुआ, मैं भी तिलिस्म का दारोगा हूँ, उसमे दो-चार स्थान ऐसे हैं कि जिनकी खबर राजा साहब को भी नही, मगर मैं वहाँ बखूबी जा सकता हूँ और वहाँ की दौलत को अपनी मिल्कियत समझता हूँ। इसके अतिरिक्त मायारानी से भी मैंने तुम्हारी मुलाकात करा दी है और वह भी हर तरह से तुम्हारी खातिर करती ही है, फिर तुम्हें परवाह किस बात की है?

मनोरमा—बेशक मुझे किसी बात की परवाह नही है और आपकी बदौलत मैं बहुत खुश रहती हूँ, मगर मैं यह चाहती हूँ कि मायारानी के पास खुल्लम-खुल्ला मेरी आमद-रफ्त हो जाये। अभी गोपालसिह के डर से बहुत लुक-छिपकर और नखरे-तिल्ले के साथ जाना पडता है।

दारोगा—फिर यह तो जरा मुश्किल बात है।

मनोरमा—मुश्किल क्या है? लक्ष्मीदेवी की जगह दूसरी औरत को राजरानी बना देना क्या साधारण काम था? सो तो आपने सहज ही मे कर दिखाया और इस एक सहज काम के लिए कहते हैं कि मुश्किल है!

दारोगा—(मुस्कराकर) सो तो ठीक है, गोपालसिह को मैं सहज मे बैकुण्ठ पहुँचा सकता हूँ, मगर यह काम मेरे करने पर भी न हो सकेगा, उसके ऊपर मेरा हाथ सहज ही न उठेगा।

मनोरमा—(तिनककर) अब इतनी रहम-दिली से तो काम नहीं चलेगा! उनके मौजूद रहने से बहुत बडा हर्ज हो रहा है। अगर वह न रहे, तो बेशक आप खुद ही जमानिया और तिलिस्म का राज्य कर सकते है, मायारानी तो अपने को आपका ताबेदार समझती है।

दारोगा—बेशक ऐसा ही है, मगर…

मनोरमा—और इसमे आपको कुछ करना भी न पड़ेगा, सब काम मायारानी ठीक कर लेंगी।

दारोगा—(चौककर) क्या मायारानी का भी ऐसा इरादा है ?

मनोरमा—जी हाँ, वह इस काम के लिए तैयार हैं, मगर आपसे डरती हैं, आप आज्ञा दें, तो सब-कुछ ठीक हो जाये।

दारोगा—तो तुम उसी की तरफ से इस बात की कोशिश कर रही हो ?

मनोरमा—बेशक ! साथ ही इसमे आपका और अपना भी फायदा समझती हूँ तब ऐसा कहती हूँ। (दारोगा के गले मे हाथ डालकर) बस, आप आज्ञा दे दीजिए।

दारोगा—(मुस्कराकर) खैर, तुम्हारी खातिर मुझे मजूर है, मगर एक काम करना कि मायारानी से और मुझसे इस बारे मे बातचीत न कराना, जिसमे मौका पड़े तो मैं यह कहने के लायक रह जाऊँ कि मुझे उसकी कुछ भी खबर नही। तुम मायारानी की दिलजमई करा दो कि दारोगा साहब इस बारे मे कुछ भी न बोलेंगे, तुम जो कुछ चाहो कर गुजरो, मगर साथ ही इसके इस बात का खयाल रखो कि सर्वसाधारण को किसी तरह का शक न होने पाये और लोग ये समझे कि गोपालसिंह अपनी मौत ही मरा है। मैं भी जहाँ तक हो सकेगा, छिपाने की कोशिश करूँगा।

मनोरमा—(खुश होकर) बस, अब मुझे पूरा विश्वास हो गया कि तुम मुझसे सच्चा प्रेम रखते हो।

इसके बाद दोनो मे बहुत ही धीरे-धीरे कुछ बातें होने लगी, जिन्हे गिरिजाकुमार सुन न सका। गिरिजाकुमार चोरो की तरह उस मकान मे घुस गया था और छिपकर ये बातें सुन रहा था। जब मनोरमा ने कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया, तब वह कमन्द लगाकर मकान के पीछे की तरफ उतर गया और धीरे-धीरे मनोरमा के अस्तबल मे जा पहुँचा। अबकी दफे दारोगा यहाँ रथ पर सवार होकर आया था, वह रथ अस्तबल मे था, घोडे बँधे हुए थे और सारथी रथ के अन्दर सो रहा था। इससे कुछ दूर पर मनोरमा के और सब साईस तथा घसियारे वगैरह पडे खर्राटे ले रहे थे।

बहुत होशियारी से गिरिजाकुमार ने दारोगा के सारथी को बेहोशी की दवा सुंघाकर बेहोश किया और उठाकर बाग के एक कोने मे घनी झाडी के अन्दर छिपाकर रख आया, उसके कपडे पहन लिए और चुपचाप रथ के अन्दर घुसकर सो रहा।

जब रात घण्टा-भर के लगभग बाकी रह गई, तब दारोगा साहब जमानियां जाने के लिए विदा हुए और एक लौंडी ने अस्तबल मे आकर रथ जोतने की आज्ञा सुनाई। नये सारथी अर्थात् गिरिजाकुमार ने रथ जोतकर तैयार किया और फाटक पर लाकर दारोगा साहब का इन्तजार करने लगा। शराब के नशे मे चूर झूमते हुए एक लौंडी का हाथ थामे हुए दारोगा साहब भी आ पहुँचे। उनके रथ पर सवार होने के साथ ही रथ तेजी के साथ रवाना हुआ। सुबह की ठण्ठी हवा ने दारोगा साहब के दिमाग मे खुनकी पैदा कर दी और वे रथ के अन्दर लेटकर बेखबर सो गये। गिरिजाकुमार ने जिधर चाहा, घोडो का मुँह फेर दिया और दारोगा साहब को लेकर रवाना हो गया। इस तौर पर उसे सूरत बदलने की भी जरूरत न पडी।

नही कह सकते कि मनोरमा के बाग मे दारोगा का असली सारथी जब होश मे आया होगा तो वहाँ कैसी खलबली मची होगी, मगर गिरिजाकुमार को इस बात की कुछ भी परवाह न थी, उसने रथ को रोहतासगढ की सडक पर रवाना किया और चलते-चलते अपने बटुए मे से मसाला निकालकर अपनी सूरत साधारण ढग पर बदल ली, जिसमे होश आने पर दारोगा उसकी सूरत से जानकार न हो सके। इसके बाद उसने तेज दवा सुँघाकर दारोगा को और भी बेहोश कर दिया।

जब रथ एक घने जंगल मे पहुँचा और सुबह की सफेदी भी निकल आई, तब गिरिजाकुमार रथ को सडक पर से हटाकर जगल मे ले आया, जहाँ सडक पर चलने वाले मुसाफिरो की निगाह न पडे। घोडो को खोल लम्बी बागडोर के सहारे एक पेड के साथ बाँध दिया और दारोगा को पीठ पर लाद वहाँ से थोडी दूर पर एक घनी झाडी के अन्दर ले गया, जिसके पास ही एक पानी का झरना भी बह रहा था। घोडे की रास से दारोगा साहब को एक पेड के साथ बाँध दिया और बेहोशी दूर करने की दवा सुँघाने के बाद थोडा पानी भी चेहरे पर डाला, जिसमे शराब का नशा ठण्डा हो जाये और तब हाथ मे कोडा लेकर सामने खडा हो गया।

दारोगा साहब जब होश मे आये तो बडी परेशानी के साथ चारो तरफ निगाह दौडाने लगे। अपने को मजबूर और एक अनजान आदमी को हाथ मे कोडा लिए सामने खडा देख कांप उठे और बोले, "भाई, तुम कौन हो और मुझे इस तरह क्यो सता रखा है? मैंने तुम्हारा क्या बिगाडा है?"

गिरिजाकुमार—क्या करूँ, लाचार हूँ। मालिक का हुक्म ही ऐसा है।

दारोगा—तुम्हारा मालिक कौन है और उसने ऐसी आज्ञा तुम्हे क्यो दी?

गिरिजाकुमार—मैं मनोरमाजी का नौकर हूँ, और उन्होने अपना काम ठीक करने के लिए मुझे ऐसी आज्ञा दी है।

दारोगा—(ताज्जुब से) तुम मनोरमा के नौकर हो। नही-नही, ऐसा नही हो सकता, मैं उसके सब नौकरो को अच्छी तरह पहचानता हूँ।

गिरिजाकुमार—मगर आप मुझे नही पहचानते, क्योकि मैं गुप्त रीति पर उनका काम किया करता हूँ और उनके मकान पर बराबर नही रहता।

दारोगा—शायद ऐसा ही हो, मगर विश्वास नही होता। खैर, यह बताओ कि उन्होंने किस काम के लिए ऐसा करने को कहा है?

गिरिजाकुमार—आपको विश्वास हो चाहे न हो, इसके लिए मैं लाचार हूँ, हाँ, उनके हुक्म की तामील किए बिना नही रह सकता। उन्होने मुझे यह कहा है कि "दारोगा साहब मायारानी के लिए इस बात की इजाजत दे गये है कि वह जिस तरह हो सके, राजा गोपालसिंह को मार डाले, हम इस मामले मे कुछ दखल न देंगे, मगर यह बात वह नशे मे कह गये हैं, कही ऐसा न हो कि भूल जाये। अत जिस तरह हो सके, तुम इस बात की एक चिट्ठी उनसे लिखाकर मेरे पास ले आओ, जिसमे उन्हे अपना वादा अच्छी तरह याद रहे।" अब आप कृपाकर इस मजमून की एक चिट्ठी लिख दीजिये कि मैं गोपालसिंह को मार डालने के लिए मायारानी को इजाजत देता हूँ।

दारोगा—(ताज्जुब का चेहरा बनाकर) न मालूम तुम क्या कह रहे हो ! मैंने मनोरमा से ऐसा कोई वादा नही किया !

गिरिजाकुमार— तो शायद मनोरमाजी ने मुझसे झूठ कहा होगा। मैं इस बात को तो नही जानता, हाँ, उन्होने जो आज्ञा दी है सो आपसे कह रहा हूँ।

इतना सुनकर दारोगा कुछ सोच मे पड़ गया। मालूम होता था कि उसे गिरिजाकुमार की बातो पर विश्वास हो रहा है, मगर फिर भी बात को टालना चाहता है।

दारोगा—मगर ताज्जुब है कि मनोरमा ने मेरे साथ बुरा ऐसा बर्ताव क्यो किया और उसे जो कुछ कहना था वह स्वय मुझसे क्यो नही कहा ?

गिरिजाकुमार—मैं इस बात का जवाब क्योकर दे सकता हूँ ?

दारोगा—अगर मैं तुम्हारे कहे मुताबिक चिट्ठी लिखकर न दूँ तो ?

गिरिजाकुमार—तब इस कोडे मे आपकी खबर ली जायेगी और जिस तरह हो सकेगा, आपसे चिट्ठी लिखाई जायेगी। आप खुद समझ सकते है कि यहाँ आपका कोई मददगार नही पहुँच सकता।

दारोगा—क्या तुमको या मनोरमा को इस बात का कुछ भी खयाल नहीं है कि चिट्ठी लिखकर भी छूट जाने के बाद मैं क्या कर सकता हूँ ?

गिरिजाकुमार—अब ये सब बाते तो आप उन्ही से पूछियेगा ! मुझे जवाब देने की कोई जरूरत नही। मैं सिर्फ उनके हुक्म की तामील करना जानता हूँ। बताइए आप जल्दी चिट्ठी लिख देते है या नही, मै ज्यादा देर तक इन्तजार नही कर सकता !

दारोगा—(झुंझलाकर और यह समझकर कि यह मुझ पर हाथ नही उठायेगा, केवल धमकाता है)अबे, मैं चिट्ठी किस बात की लिख दूं !तूनेयहव्यर्थ की बकबक लगा रखी है !

इतना सुनते ही गिरिजाकुमार ने कोडे जमाने शुरू किए। पाँच-सात ही कोडे खाकर दारोगा बिलबिला उठा और हाथ जोडकर बोला, "बस-बस, माफ करो, जो कुछ कहो, मैं लिख देने को तैयार हूं !"

गिरिजाकुमार ने झट कलम-दवात और कागज अपने बटुए मे से निकालकर दारोगा के सामने रख दिया और उसके हाथ की रस्सी ढीली कर दी। दारोगा ने उसकी इच्छानुसार चिट्ठी लिख दी। चिट्ठी को अपने कब्जे मे कर लेने के बाद उसने दारोगा की तलाशी ली, कमर मे खजर और कुछ अशर्फियाँ निकली, वह भी ले लेने के बाद दारोगा के हाथ-पैर खोल दिए और बता दिया कि फलाँ जगह आपके रथ और घोडे खडे हैं, जाइए, सीधे कस-कसाकर अपने घर का रास्ता लीजिए।

इतना कहकर गिरिजाकुमार चला गया और फिर दारोगा को मालूम न हुआ कि वह कहाँ गया और क्या हुआ।

12

इतना किस्सा कहकर दिलीपशाह ने दम लिया और फिर इस तरह कहना शुरू किया—

"गिरिजाकुमार ने अपना काम करके दारोगा का पीछा नही छोडा, बल्कि उसे यह जानने का शौक पैदा हुआ कि देखे, अब दारोगा साहब क्या करते हैं। जमानिया की तरफ विदा होते हैं, या पुन. मनोरमा के घर जाते है, या अगर मनोरमा के घर जाते हैं तो देखना चाहिए कि किस ढग की बाते होती है और कैसी रगत निकलती है।"

यद्यपि दारोगा का चित्त दुविधा मे पडा हुआ था, परन्तु उसे इस बात का कुछ-कुछ विश्वास जरूर हो गया था कि मेरे साथ ऐसा खोटा बर्ताव मनोरमा ने ही किया है, दूसरे किसी को क्या मालूम है कि मुझमे उसमे किस समय क्या बाते हुईं। मगर साथ ही इसके वह इस बात को भी जरूर सोचता था कि मनोरमा ने ऐसा क्यो किया ? मैं तो कभी उसकी बात से किसी तरह इनकार नही करता था। जो कुछ भी उसने कहा, उस बात की इजाजत तुरन्त दे दी, अगर वह चिट्ठी लिख देने के लिए कहती तो चिट्ठी भी लिख देता, फिर उसने ऐसा क्यो किया•••?

खैर, जो कुछ भी हो, दारोगा साहब अपने हाथ से रथ जोतकर सवार हुए और मनोरमा के पास न जाकर सीधे जमानिया की तरफ रवाना हो गये। यह देखकर गिरिजा-कुमार ने उस समय उनका पीछा छोड दिया और मेरे पास चला आया। जो कुछ मामला हुआ था, खुलासा बयान करने के बाद दारोगा साहब की लिखी हुई चिट्ठी दी और फिर मुझसे विदा होकर जमानिया की तरफ चला गया।

मुझे यह जानकर हौल-सी पैदा हो गई कि बेचारे गोपालसिंह की जान मुफ्त मे ही जाना चाहती है। मैं सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिए, जिसमे गोपालसिंह की जान बचे। एक दिन और रात तो इसी सोच मे पडा रह गया और अन्त मे यह निश्चय किया कि इन्द्रदेव से मिलकर यह सब हाल कहना चाहिए। दूसरा दिन मुझे घर का इन्त-जाम करने मे लग गया, क्योकि दारोगा की दुश्मनी के खयाल से मुझे घर की हिफाजत का पूरा-पूरा इन्तजाम करके ही तब बाहर जाना जरूरी था, अत मैंने अपनी स्त्री और बच्चे को गुप्त रीति से अपनी ससुराल अर्थात् स्त्री के माँ-बाप के घर पहुँचा दिया और उन लोगो को जो कुछ समझाना था, सो भी समझा दिया। इसके बाद घर का इन्तजाम करके इन्द्रदेव की तरफ रवाना हुआ।

जब इन्द्रदेव के मकान पर पहुँचा तो देखा कि वे सफर की तैयारी कर रहे हैं। पूछने पर जवाब मिला कि गोपालसिंह बीमार हो गये है, उन्हे देखने के लिए ही जाते हैं। सुनने के साथ ही मेरा दिल धडक उठा और मेरे मुँह से ये शब्द निकल पड़े —"हाय, अफसोस! कम्बख्त दुश्मन लोग अपना काम कर गये!"

मेरी बात सुनकर इन्द्रदेव चौक पडे और उन्होंने पूछा, "आपने यह क्या कहा ?" दो-चार खिदमतगार वहाँ मौजूद थे। उन्हे विदा करके मैंने गिरिजाकुमार का सब हाल इन्द्रदेव से बयान किया और दारोगा साहब की लिखी हुई वह चिट्ठी उनके हाथ पर रख

दी। उसे देखकर और सब हाल सुनकर इन्द्रदेव बेचैन हो गए, आधे घण्टे तक तो ऐसा मालूम होता था कि उन्हे तन-बदन की सुध नही है इसके बाद उन्होने अपने को सम्हाला और मुझसे कहा—"बेशक, दुश्मन लोग अपना काम कर गए, मगर तुमने भी बहुत बडी भूल की, कि दो दिन की देर कर दी और आज मेरे पास खबर करने के लिए आये। अभी दो ही घडी बीती है कि मुझे उनके बीमार होने की खबर मिली है, ईश्वर ही कुशल करें।"

इसके जवाब मे चुप रह जाने के सिवाय मैं कुछ भी न बोल सका और अपनी भूल स्वीकार कर ली। कुछ और बातचीत होने के बाद इन्द्रदेव ने मुझसे कहा, "खैर, जो कुछ होना था सो हो गया, अब तुम भी मेरे साथ जमानिया चलो, वहाँ पहुँचने तक अगर ईश्वर ने कुशल रखी तो जिस तरह बन पडेगा, उनकी जान बचायेंगे।"

अत हम दोनो आदमी तेज घोडो पर सवार होकर जमानिया की तरफ रवाना हो गये और साथियो को पीछे से आने की ताकीद कर गए।

जब हम लोग जमानिया के करीब पहुँचे और जमानिया सिर्फ दो कोस की दूरी पर रह गया तो सामने से कई देहाती आदमी रोते और चिल्लाते हुए आते दिखाई पडे। हम लोगो ने घबराकर रोने का सबब पूछा तो उन्होने हिचकियाँ लेकर कहा कि हमारे राजा गोपालसिंह हम लोगो को छोडकर वैकुण्ठ चले गये।

सुनने के बाद हम लोगो का कलेजा धक् हो गया। आगे बढने की हिम्मत न पडी और सडक के किनारे एक घने पेड के नीचे जाकर घोडो पर से उतर पडे। दोनो घोडो को पेड के साथ बाँध दिया और जीनपोश बिछाकर बैठ गये, आँखो से आँसू की धारा बहने लगी। घण्टे भर तक हम दोनो मे किसी तरह की बातचीत न हुई, क्योकि चित्त बडा ही दु खी हो गया था। उस समय दिन अनुमान तीन घण्टे के करीब बाकी था। हम दोनो आदमी पेड के नीचे बैठे आँसू बहा रहे थे कि यकायक जमानिया से लौटता हुआ गिरिजाकुमार भी उसी जगह आ पहुँचा। उस समय उसकी सूरत बदली हुई थी, इसलिए हम लोगो ने तो नही पहचाना, परन्तु वह हम लोगो को देखकर स्वय पास चला आया और अपना गुप्त परिचय देकर बोला, "मैं गिरिजाकुमार हूँ।"

इन्द्रदेव—(आँसू पोछकर) अच्छे मौके पर तुम आ पहुँचे। यह बताओ कि क्या वास्तव मे राजा गोपालसिंह मर गये?

गिरिजाकुमार—जी हाँ, उनकी चिता मेरे सामने लगाई गई और देखते-ही-देखते उनकी लाश पचतत्व मे मिल गई, परन्तु अभी तक मेरे दिल को विश्वास नही होता कि राजा साहब मर गये।

इन्द्रदेव—(चौंककर) सो क्यो? यह कैसी बात?

गिरिजाकुमार—जी हाँ, हर तरह का रग-ढग देखकर मेरा दिल यह कबूल नही करता कि वे मर गये।

मैं—क्या तुम्हारी तरह वहाँ और भी किसी को इस बात का शक है?

गिरिजाकुमार—नहीं, ऐसा तो नही मालूम होता, बल्कि मैं तो समझता हूँ कि ख़ास दारोगा साहब को भी उनके मरने का विश्वास है, मगर क्या किया जाये, मुझे

विश्वास नही होता और दिल बार-बार यही कहता है कि राजा साहब मरे नही।

इन्द्रदेव—आखिर, तुम क्या सोचते हो और इस बात का तुम्हारे पास क्या सबूत है ? तुमने कौन-सी ऐसी बात देखी, जिससे तुम्हारे दिल को अभी तक उनके मरने का विश्वास नही होता ?

गिरिजाकुमार—और बातो के अतिरिक्त दो बातें तो बहुत ही ज्यादा शक पैदा करती हैं। एक तो यह है कि कल दो घण्टे रात रहते मैंने हरनामसिंह और बिहारीसिंह को एक कँगले की लाश उठाये हुए चोर दरवाजे की राह मे महल के अन्दर जाते हुए देखा, फिर बहुत टोह लेने पर भी लाश का कुछ पता न लगा और न वह लाश लौटाकर महल के बाहर ही निकाली गई, तो क्या वह महल ही मे हजम हो गई ? उसके बाद केवल राजा साहब की लाश बाहर निकली।

इन्द्रदेव—जरूर, यह शक करने की जगह है।

गिरिजाकुमार—इसके अतिरिक्त राजा गोपालसिंह की लाश को बाहर निकालने और जलाने मे हद दर्जे की फुर्ती और जल्दबाजी की गई, यहाँ तक कि रियासत के उमरा लोगो के भी इकट्ठा होने का इन्तजार नही किया गया। एक साधारण आदमी के लिए भी इतनी जल्दी नही की जाती, वे तो राजा ही ठहरे ! हाँ, एक बात और भी सोचने लायक है। चिता पर नियम के विरुद्ध लाश का मुँह खोले बिना ही क्रिया कर दी गई और इस बारे मे बिहारीसिंह और हरनामसिंह तथा लौंडियो ने यह बहाना किया कि "राजा साहब की सूरत देख मायारानी बहुत बेहाल हो जायेंगी, इसलिए मुर्दे का मुँह खोलने की कोई जरूरत नही।" और लोगो ने इन बातो पर खयाल किया हो चाहे न किया हो, मगर मेरे दिल पर तो इन बातो ने बहुत बडा असर किया और यही सबब है कि मुझे राजा साहब के मरने का विश्वास नही होता।

इन्द्रदेव—(कुछ सोचकर) शक तो तुम्हारा बहुत ठीक है, अच्छा यह बताओ कि तुम इस समय कहाँ जा रहे थे ?

गिरिजाकुमार—(मेरी तरफ इशारा करके) गुरुजी के पास यही सब हाल कहने के लिए जा रहा था।

मैं—इस समय मनोरमा कहाँ है सो बताओ !

गिरिजाकुमार—जमानिया मे मायारानी के पास है।

मैं—तुम्हारे हाथ से छूटने के बाद दारोगा और मनोरमा मे कैसी निपटी इसका कुछ हाल मालूम हुआ ?

गिरिजाकुमार—जी हाँ, मालूम हुआ। उस बारे में बहुत बडी दिल्लगी हुई जो मैं निश्चिन्ती के साथ बयान करूँगा।

इन्द्रदेव—अच्छा, यह तो बताओ कि गोपालसिंह के बारे मे तुम्हारी क्या राय है और अब हम लोगो को क्या करना चाहिए ?

गिरिजाकुमार—इस बारे मे मैं एक अदना और नादान आदमी आपको क्या राय दे सकता हूँ ! हाँ, मुझे जो कुछ आज्ञा हो सो करने के लिए जरूर तैयार हूँ।

इतनी बातें हो ही रही थी कि सामने जमानिया की तरफ से दारोगा और

जयपाल घोडो परसवारआते हुए दिखाई पडे, जिन्हे देखते ही गिरिजाकुमार ने कहा, "देखिए, ये दोनो शैतान कही जा रहे है, इसमे भी कोई भेद जरूर है, यदि आज्ञा हो तो मैं इनके पीछे जाऊँ।"

दारोगा औरजयपाल को देखकर हम दोनो पेड की तरफ घूम गये, जिसमे वे हमे पहचान न सकें। जव वे आगे निकल गए, तब मैंने अपना घोडा गिरिजाकुमारको देकरकहा, "तुम जल्द सवारहोकर इन दोनो का पीछा करो।" और गिरिजाकुमारने ऐसा ही किया।

चन्द्रकान्ता सन्तति

चौबीसवाँ भाग

1

दिन पहर भर से ज्यादा चढ़ चुका है। महाराज सुरेन्द्रसिंह सुनहरी चौकी पर बैठे सन्ध्या कर रहे हैं और वीरेन्द्रसिंह, तेजसिंह, इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, देवीसिंह, भूतनाथ और राजा गोपालसिंह उनके सामने की तरफ बैठे हुए इधर-उधर की बातें कर रहे हैं। रात महाराज की तबीयत कुछ खराब थी, इसलिए आज स्नान-सन्ध्या में देर हो गई है।

सुरेन्द्रसिंह—(गोपालसिंह से) गोपाल, इतना तो हम जरूर कहेंगे कि गद्दी पर बैठने के बाद तुमने कोई बुद्धिमानी का काम नहीं किया, बल्कि हर एक मामले में तुमसे भूल ही होती गई है।

गोपालसिंह—निःसन्देह ऐसा ही है और इस लापरवाही का नतीजा भी मुझे वैसा ही भोगना पड़ा।

वीरेन्द्रसिंह—धोखा खाये बिना कोई होशियार नहीं होता। कैद से छूटने के बाद तुमने बहुत से अनूठे काम भी किये हैं। हाँ, यह तो बताओ कि दारोगा और जयपाल के लिए तुमने क्या सजा तजवीज की है?

गोपालसिंह—इस बारे में दिन-रात सोचा ही करता हूँ मगर कोई सजा ऐसी नहीं सूझती जो उन लोगों के लायक हो और जिससे मेरा गुस्सा शान्त हो।

सुरेन्द्रसिंह—(मुस्कुरा कर) मैं तो समझता हूँ कि यह काम भूतनाथ के हवाले किया जाय, वही उन शैतानों के लिए कोई मजेदार सजा तजवीज करेगा। (भूतनाथ की तरफ देख के) क्यों जी, तुम कुछ बता सकते हो?

भूतनाथ—(हाथ जोड़ के) उनके योग्य क्या सजा है इसका बताना तो बड़ा ही कठिन है, मगर एक छोटी सी सजा मैं जरूर बता सकता हूँ।

गोपालसिंह—वह क्या?

भूतनाथ—पहले तो उन्हें कच्चा पारा पिलाना चाहिए जिसकी गरमी से उन्हें सख्त तकलीफ हो और तमाम बदन फूट जाय, जब जख्म खूब मजेदार हो जायें तो नित्य लाल मिर्च और नमक का लेप चढ़ाया जाय। जब तक वे दोनों जीते रहें तब तक ऐसा ही होता रहे।

सुरेन्द्रसिंह—सजा हलकी तो नही है, मगर किसी की आत्मा ··

गोपालसिंह—(वात काटकर) खैर उन कम्वख्तो के लिए आप कुछ न सोचिये, उन्हे मैं जमानिया ले जाऊँगा और उसी जगह उनकी मरम्मत करूँगा।

वीरेन्द्रसिंह—इन सब रञ्ज देने वाली वातो का जिक्र जाने दो, यह वताओ कि अगर हम लोग जमानिया के तिलिस्म की सैर करना चाहे तो कैसे कर सकते हैं?

गोपालसिंह—यह तो मैं आप ही निश्चय कर चुका हूँ कि आप लोगो को वहाँ की सैर जरूर कराऊँगा।

इन्द्रजीतसिंह—(गोपाल से) हाँ, खूब याद आया। वहाँ के वारे मे मुझे भी दो-एक वातो का शक वना हुआ है।

गोपालसिंह—वह क्या?

इन्द्रजीतसिंह—एक तो यह वताइए कि तिलिस्म के अन्दर जिस मकान मे पहले पहल आनन्दसिंह फँसे थे, उस मकान मे सिंहासन पर वैठी हुई लाडिली की मूरत कहाँ से आई[1] और उस आईने (शीशे) वाले मकान मे, जिसमे कमलिनी, लाडिली तथा हमारे ऐयारो की सी मूरतो ने हमे धोखा दिया, क्या था? जव हम दोनो उसके अन्दर गये तो उन मूरतो को देखा जो नालियो पर चला करती थी, मगर ताज्जुव कि

गोपालसिंह—(वात काट कर) वह सव कार्रवाई मेरी थी। एक तौर पर मैं आप लोगो को कुछ-कुछ तमाशा भी दिखाता जाता था। वे सव मूरतें वहुत पुराने जमाने की वनी हुई हैं मगर मैंने उन पर ताजा रग-रोगन चढाकर कमलिनी, लाडिली वगैरह की सूरतें वना दी थी।

इन्द्रजीतसिंह—ठीक है। मेरा भी यही खयाल था। अच्छा, एक वात और वताइये।

गोपालसिंह—पूछिये।

इन्द्रजीतसिंह—जिस तिलिस्मी मकान मे हम लोग हँसते-हँसते कूद पडे थे उसमे कमलिनी के कई सिपाही भी जा फँसे थे और'

गोपलसिंह—जी हाँ, ईश्वर की कृपा से वे लोग कैदखाने मे जीते-जागते पाये गये और इस समय जमानिया मे मौजूद हैं। उन्ही मे से एक आदमी को दारोगा ने गठरी वाँध कर रोहतासगढ के किले मे छोडा था जव मैं कृष्ण जिन्न बनकर पहले-पहले वहाँ गया था।[1]

इन्द्रजीतसिंह—यहवहुत अच्छा हुआ। उन वेचारो की तरफ से मुझे वहुत ही खुटका रहता था।

वीरेन्द्रसिंह—(गोपालसिंह से) आज दलीपशाह की जुवानी जो कुछ उसका किस्सा सुनने मे आया उससे हमे वडा ही आश्चर्य हुआ। यद्यपि उसका किस्सा अभी तक समाप्त नही हुआ और समाप्त होने तक शायद और भी वहुत-सी वातें नई मालूम हो,

---

1 देखिए नौवां भाग, दूसरा वयान।

2 देखिए सोलहवां भाग, छठवां वयान।

3 देखिए बारहवां भाग, सातवां वयान।

परन्तु इस बात का ठीक-ठीक जवाब तो तुम्हारे सिवाय दूसरा शायद कोई नही दे सकता कि तुम्हे कैद करने मे मायारानी ने कौन सी ऐसी कार्रवाई की कि किसी को पता न लगा और सभी लोग धोखे मे पड गये, यहाँ तक कि तुम्हारी समझ मे भी कुछ न आया और तुम चारपाई पर से उठाकर कैदखाने मे डाल दिये गये।

गोपालसिंह—इसका ठीक-ठीक जवाब तो मैं नही दे सकता। कई बातो का पता मुझे भी नही लगा, क्योकि मैं ज्यादा देर तक बीमारी की अवस्था मे पडा नही रहा, बहुत जल्द बेहोश कर दिया गया। मैं क्योकर जान सकता था कि कम्बख्त मायारानी दवा के बदले मुझे जहर पिला रही है, मगर मुझको विश्वास है कि दलीपशाह को इसका हाल बहुत ज्यादा मालूम हुआ होगा।

जीतसिंह—खैर आज के दरबार मे और हाल भी मालूम हो जायगा।

कुछ देर तक इसी तरह की बातें होती रही। जब महाराज उठ गये तब सब लोग अपने ठिकाने चले गये और कारिन्दे लोग दरबार की तैयारी करने लगे।

भोजन आदि से छुट्टी पाने के बाद दोपहर होते-होते महाराज दरबार मे पधारे। आज का दरबार कल की तरह रौनकदार था और आदमियो की गिनती बनिस्बत कल के आज बहुत ज्यादा थी।

महाराज की आज्ञानुसार दलीपशाह ने इस तरह अपना किस्सा बयान करना शुरू किया—

"मै बयान कर चुका हूँ कि मैंने अपना घोडा गिरिजाकुमार को देकर दारोगा का पीछा करने के लिए कहा, अत जब वह दारोगा के पीछे चला गया तब हम दोनो मे सलाह होने लगी कि अब क्या करना चाहिए, अन्त मे यह निश्चय हुआ कि इस समय जमानिया न जाना चाहिए, बल्कि घर लौट चलना चाहिए।

"उसी समय इन्द्रदेव के साथी लोग भी वहाँ आ पहुँचे। उनमे से एक का घोडा मैंने ले लिया और फिर हम लोग इन्द्रदेव के मकान की तरफ रवाना हुए। मकान पर पहुँचकर इन्द्रदेव ने अपने कई जासूसो और ऐयारो को हर एक बातए का पता लगाने के लिए जमानिया की तरफ रवाना किया किया। मैं भी अपने घर जाने को तैयार हुआ, मगर इन्द्रदेव ने मुझे रोक दिया।

"यद्यपि मैं कह चुका हूँ कि अपने किस्से मे भूतनाथ का हाल बयान न करूँगा तथापि मौका पडने पर कही-कही लाचारी से उसका जिक्र करना ही पडेगा, अत इस जगह यह कह देना जरूरी जान पडता है कि इन्द्रदेव के मकान पर ही मुझे इस बात की खबर लगी कि भूतनाथ की स्त्री बहुत बीमार है। मेरे एक शागिर्द ने आकर यह सदेशा दिया और साथ ही इसके यह भी कहा कि आपकी स्त्री उसे देखने के लिए जाने की आज्ञा माँगती है।

"भूतनाथ की स्त्री शान्ता बडी नेक और स्वभाव की बहुत अच्छी है। मैं भी उसे बहिन की तरह मानता था इसलिए उसकी बीमारी का हाल सुनकर मुझे तरद्दुद हुआ और मैंने अपनी स्त्री को उसके पास जाने की आज्ञा दे दी तथा खबर लगी कि मेरे स्त्री शान्ता को लेकर अपने घर आ गई।

"आठ-दस दिन बीत जाने पर भी न तो जमानिया से कुछ खबर आई और न गिरिजाकुमार ही लौटा। हाँ रियासत की तरफ से एक चिट्ठी न्यौते की जरूर आई, थी जिसके जवाब मे इन्द्रदेव ने लिख दिया कि गोपालसिंह से और मुझसे दोस्ती थी सो वह तो चल बसे, अब उनकी क्रिया मैं अपनी आँखो से देखना पसन्द नही करता।

"मेरी इच्छा तो हुई कि गिरिजाकुमार का पता लगाने के लिए मैं खुद जाऊँ, मगर इन्द्रदेव ने कहा कि अभी दो-चार दिन और राह देख लो, कही ऐसा न हो कि तुम उसकी खोज मे जाओ और वह यहाँ आ जाय। अत मैंने भी ऐसा ही किया।

"बारहवे दिन गिरिजाकुमार हम लोगो के पास आ पहुँचा। उसके साथ अर्जुनसिंह भी थे जो हम लोगो की मण्डली मे एक अच्छे ऐयार गिने जाते थे, मगर भूतनाथ और इनके बीच खूब ही चख-चख चली आती थी। (महाराज और जीतसिंह की तरफ देखकर) आपने सुना ही होगा कि इन्होने एक दिन भूतनाथ को धोखा देकर कुएँ मे धकेल दिया था और उसके बटुए मे से कई चीजें निकाल ली थी।

जीतसिंह—हाँ मालूम है, मगर इस बात का पता नही लगा कि अर्जुन ने भूतनाथ के बटुए मे से क्या निकाला था।

इतना कहकर जीतसिंह ने भूतनाथ की तरफ देखा।

भूतनाथ—(महाराज की तरफ देखकर) मैंने जिस दिन अपना किस्सा सरकार को सुनाया था उस दिन अर्ज किया था कि जब वह कागज का मुट्ठा मेरे पास से चोरी गया तो मुझे बडा ही तरद्दुद हुआ, उसके बहुत दिनो के बाद राजा गोपालसिंह के मरने की खबर उडी[1] इत्यादि। यह वही कागज का मुट्ठा था जो अर्जुनसिंह ने मेरे बटुए मे से निकाल लिया था, तथा इसके साथ और भी कई कागज थे। असल बात यह है कि उन चिट्ठियो की नकल के मैंने दो मुट्ठे तैयार किये थे, एक तो हिफाजत के लिए अपने मकान मे रख छोडा था और दूसरा मुट्ठा समय पर काम लेने के लिए हरदम अपने बटुए मे रखता था। मुझे गुमान था कि अर्जुनसिंह ने जो मुट्ठा ले लिया था उसी से मुझे नुकसान पहुँचा मगर अब मालूम हुआ कि ऐसा नही हुआ, अर्जुनसिंह ने न तो वह किसी को दिया और न उससे मुझे कुछ नुकसान पहुँचा। हाल मे जो दूसरा मुट्ठा जयपाल ने मेरे घर से चुरवा लिया था, उसी ने तमाम बखेडा मचाया।

जीतसिंह—ठीक है (दलीपशाह की तरफ देख के) अच्छा, तब क्या हुआ?

दलीपशाह ने फिर इस तरह कहना शुरू किया—

दलीपशाह—गिरिजाकुमार और अर्जुनसिंह मे एक तरह की नातेदारी भी है परन्तु उसका खयाल न करके ये दोनो आपस मे दोस्ती का बर्ताव रखते थे। खैर, उस समय दोनो के आ जाने से हम लोगो को खुशी हुई और इस तरह बाते होने लगी—

मैं—गिरिजाकुमार, तुमने तो बहुत दिन लगा दिए।

गिरजाकुमार—जी हाँ, मुझे तो और भी कई दिन लग जाते मगर इत्तिफाक से अर्जुनसिंह से मुलाकात हो गई और इनकी मदद से मेरा काम बहुत जल्द हो गया।

---

1 देखिए इक्कीसवाँ भाग, दूसरा बयान।

मैं—खैर यह बताओ कि तुमने किन-किन बातों का पता लगाया और मुझसे विदा होकर तुम दारोगा के पीछे कहाँ तक गए ?

गिरिजाकुमार—जयपाल को साथ लिए हुए दारोगा सीधे मनोरमा के मकान पर चला गया। उस समय मनोरमा वहाँ न थी, वह दारोगा के आने के तीन पहर बाद रात के समय अपने मकान पर पहुँची। मैं भी छिपकर किसी-न-किसी तरह उस मकान में दाखिल हो गया। रात को दारोगा और मनोरमा में खूब हुज्जत हुई, मगर अन्त में मनोरमा ने उसे विश्वास दिला दिया कि राजा गोपालसिंह को मारने के विषय में उससे जबर्दस्ती पुर्जा लिखा लेने वाला मेरा आदमी न था बल्कि वह कोई और था जिसे मैं नहीं जानती। दारोगा ने बहुत सोच-विचार कर विश्वास कर लिया कि यह काम भूतनाथ का है। इसके बाद उन दोनों में जो कुछ बातें हुईं उनसे यही मालूम हुआ कि गोपालसिंह जरूर मर गये और दारोगा को भी यही विश्वास है, मगर मेरे दिल में यह बात नहीं बैठती, खैर जो कुछ हो। उसके दूसरे दिन मनोरमा के मकान में से एक कैदी निकाला गया जिसे बेहोश करके जयपाल ने बेगम के मकान में पहुँचा दिया। मैंने उसे पहचानने के लिए बहुत कुछ उद्योग किया मगर पहचान न सका क्योंकि उसे गुप्त रखने में उन्होंने बहुत कोशिश की थी, मगर मुझे गुमान होता है कि यह जरूर बलभद्रसिंह होगा। अगर वह दो-दिन भी बेगम के मकान में रहता तो मैं जरूर निश्चय कर लेता मगर न मालूम किस वक्त और कहाँ बेगम ने उसे पहुँचवा दिया कि मुझे इस बात का कुछ भी पता न लगा, हाँ इतना जरूर मालूम हो गया कि दारोगा भूतनाथ को फँसाने के फेर में पड़ा हुआ है और चाहता है किसी तरह भूतनाथ मार डाला जाय।

"इन कामों से छुट्टी पाकर दारोगा अकेला अर्जुनसिंह के मकान पर गया, इनसे बड़ी नम्रता और खुशामद के साथ मुलाकात की, और देर तक मीठी-मीठी बातें करता रहा जिसका तत्व यह था कि तुम दलीपशाह को साथ लेकर मेरी मदद करो और जिस तरह हो सके, भूतनाथ को गिरफ्तार करा दो। अगर तुम दोनों की मदद से भूतनाथ गिरफ्तार हो जायगा तो मैं उसके बदले में दो लाख रुपया तुम दोनों को इनाम दूँगा, इसके अतिरिक्त वह आपके नाम का एक पत्र भी अर्जुनसिंह को दे गया।

"अर्जुनसिंह ने दारोगा का वह पत्र निकाल कर मुझे दिया, मैंने पढ़कर इन्द्रदेव के हाथ में दे दिया और कहा, "इसका मतलब भी वही है जो गिरिजाकुमार ने अभी बयान किया है परन्तु यह कदापि नहीं हो सकता कि मैं भूतनाथ के साथ किसी तरह की बुराई करूँ, हाँ, दारोगा के साथ दिल्लगी अवश्य करूँगा।"

"इसके बाद कुछ देर तक और भी बातचीत होती रही। अन्त में गिरिजाकुमार ने कहा कि मेरे इस सफर का नतीजा कुछ भी न निकला और न मेरी तबीयत ही भरी, आप कृपा करके मुझे जमानिया जाने की इजाजत दीजिए।

"गिरिजाकुमार की दरखास्त मैंने मंजूर कर ली। उस दिन रात-भर हम लोग इन्द्रदेव के यहाँ रहे, दूसरे दिन गिरिजाकुमार जमानिया की तरफ रवाना हुआ और मैं अर्जुनसिंह को साथ लेकर अपने घर मिर्जापुर चला आया।

"घर पहुँचकर मैंने भूतनाथ की स्त्री शान्ता को देखा जो बीमार तथा बहुत ही

कमजोर और दुवली हो रही थी, मगर उसकी सब वीमारी भूतनाथ की नादानी के सवब से थी और वह चाहती थी कि जिस तरह भूतनाथ ने अपने को मरा हुआ हुआ मशहूर किया था उसी तरह वह भी अपने और अपने छोटे वच्चे के बारे मे मशहूर करे। उसकी अवस्था पर मैं वडा दु खी हुआ और जो कुछ वह चाहती थी, उसका प्रवन्ध मैंने कर दिया। यही सवव था कि भूतनाथ ने अपने छोटे वच्चे के विषय मे धोखा खाया जिसका हाल महाराज तथा राजकुमारो को मालूम है, मगर सर्वसाधारण के लिए मैं इस समय उसका जिक्र न करूंगा। इसका खुलासा हाल भूतनाथ अपनी जीवनी मे वयान करेगा। खैर—

"घर पहुँचकर मैंने दिल्लगी के तौर पर भूतनाथ के विषय मे दारोगा से लिखा-पढी शुरू कर दी मगर ऐसा करने मे मेरा असल मतलव यह था कि मुलाकात होने पर मैं वह सव पत्र, जो इस समय हरनामसिंह के पास मौजूद हैं भूतनाथ को दिखाऊं और उसे होशियार कर दूं, अत अन्त मे मैंने उसे (दारोगा को) साफ-साफ जवाव दे दिया।"

यहाँ तक अपना किस्सा कहकर दलीपशाह ने हरनामसिंह की तरफ देखा और हरनामसिंह ने सव पत्र जो एक छोटी-सी सन्दूकडी मे वन्द थे महाराज के आगे पेश किये जिसे मामूली तौर पर सभी ने देखा। इन चिट्ठियो से दारोगा की वेईमानी के साथ-ही साथ यह भी सावित होता था कि भूतनाथ ने दलीपशाह पर व्यर्थ ही कलक लगाया। महाराज की आज्ञानुसार वे चिट्ठियाँ कम्वख्त दारोगा के आगे फेंक दी गईं और इसके वाद दलीपशाह ने फिर इस तरह वयान करना शुरू किया—

"मेरे और दारोगा के वीच मे जो कुछ लिखा-पढी हुई थी, उसका हाल किसी तरह भूतनाथ को मालूम हो गया या शायद वह स्वय दारोगा से जाकर मिला और दारोगा ने मेरी चिट्ठियाँ दिखाकर इसे मेरा दुश्मन वना दिया तथा खुद भी मेरी वर्वादी के लिए तैयार हो गया। इस तरह दारोगा की दुश्मनी का वह पौधा जो कुछ दिनो के लिए मुरझा गया था फिर से लहलहा उठा और हरा-भरा हो गया, और साथ ही इसके मैं भी हर तरह से दारोगा का मुकावला करने के लिए तैयार हो गया।

"कई दिन के वाद गिरिजाकुमार जमानिया से लौटा तो उसकी जुवानी मालूम हुआ कि मायारानी के दिन वडी खुशी और चहल-पहल के साथ गुजर रहे हैं। मनोरमा और नागर के अतिरिक्त धनपत नामकी एक और औरत भी है जिसे मायारानी वहुत प्यार करती है मगर उस पर मर्द होने का शक होता है। इसके अतिरिक्त यह भी मालूम हुआ कि दारोगा ने मेरी गिरफ्तारी के लिए तरह-तरह के वन्दोवस्त कर रक्खे है और भूतनाथ भी दो-तीन दफे उसके पास आता-जाता दिखाई दिया है, मगर यह वात निश्चय रूप से मैं नही कह सकता कि वह जरूर भूतनाथ ही था।

"एक दिन सध्या के समय जव दारोगा अपने वाग मे टहल रहा था तो भेष वदले हुए गिरिजाकुमार पिछली दीवार लाँघ के उसके पास जा पहुँचा और वेखौफ सामने खडा होकर वोला, "दारोगा साहव, इस समय आप मुझे गिरफ्तार करने का खयाल भी न कीजिएगा क्योकि मैं आपके कब्जे मे नही आ सकता, साथ ही इसके यह भी समझ रखिए कि मैं आपकी जान लेने के लिए नही आया हूँ, वल्कि आपसे दो-चार

बातें करने के लिए आया हूँ।"

"दारोगा घबरा गया और उसकी वातो का कुछ विशेष जवाव न देकर वोला, "खैर कहो, क्या कहते हो।"

गिरिजाकुमार—मनोरमा और मायारानी के फेर मे पडकर तुमने राजा गोपालसिंह को मरवा डाला, इसका नतीजा एक-न-एक दिन तुम्हे भोगना ही पडेगा। मगर अब मैं यह पूछता हूँ कि जिनके डर से तुमने लक्ष्मीदेवी और वलभद्रसिंह को कैद कर रखा था वे तो मर ही गये। अब अगर तुम उन दोनो को छोड भी दोगे तो तुम्हारा क्या विगडेगा ?

दारोगा—(ताज्जुब मे आकर) मेरी समझ मे नही आता कि तुम कौन हो और क्या कह रहे हो ?

गिरिजाकुमार—मैं कौन हूँ यह जानने की तुम्हे कोई जरूरत नही, मगर क्या तुम कह सकते हो कि जो कुछ मैंने कहा है वह सब झूठ है ?

दारोगा—बेशक झूठ है। तुम्हारे पास इन वातो का क्या सवूत है ?

गिरिजाकुमार—जयपाल और हेलासिंह के वीच मे जो कुछ लिखा-पढी हुई है उसके अतिरिक्त वह चिट्ठी इस समय भी मेरे पास मौजूद है जो राजा गोपालसिंह को मार डालने के लिए तुमने मनोरमा को लिख दी थी।

दारोगा—मैंने कोई चिट्ठी नही लिखी थी, मालूम होता है कि दिलीपशाह और भूतनाथ वगैरह मिल-जुल कर मुझ पर जाल वाँधा चाहते हैं और तुम उन्ही मे से किसी के नौकर हो।

गिरिजाकुमार—भूतनाथ तो मर गया, अब तुम उसे क्यो वदनाम करते हो ?

दारोगा—भूतनाथ जैसा मरा है सो मैं खूव जानता हूँ, अगर खुद मुझसे मुलाकात न हुई होती तो शायद मैं धोखे मे आ भी जाता।

गिरिजाकुमार—भूतनाथ तुम्हारे पास न आया होगा, किसी दूसरे आदमी ने सूरत वदलकर तुम्हे धोखा दिया होगा, वह वेशक मर गया।

दारोगा—(सिर हिलाकर) हाँ ठीक है, शायद ऐसा ही हो। मगर उन सव वातो से तुम्हे मतलव ही क्या है और तुम मेरे पास किस लिए आये हो सो कहो।

गिरिजासिंह—मैं केवल इसीलिए आया हूँ कि लक्ष्मीदेवी और वलभद्रसिंह को छोड देने के लिए तुमसे प्रार्थना करूँ।

दारोगा—पहले तुम अपना ठीक-ठीक परिचय दो, तव मैं तुम्हारी वातो का जवाव दूँगा।

गिरिजासिंह—अपना ठीक परिचय तो नही दे सकता।

दारोगा—तव मैं तुम्हारी वातो का जवाव भी नही दे सकता।

"इतना कहकर दारोगा पीछे की तरफ हटा और अपने आदमियो को आवाज दी मगर गिरिजाकुमार ने झपटकर एक मुक्का दारोगा की गर्दन पर जमाया और मारने के वाद तेजी के साथ वाग के वाहर निकल गया।

"उसके दूसरे दिन गिरिजाकुमार ने उसी तरह मायारानी से भी मिलने की

कोशिश की मगर उसके खास बाग के अन्दर न जा सका। लाचार उसने मायारानी के ऐयार बिहारीसिंह और हरनामसिंह का पीछा किया और दो ही तीन दिन की मेहनत मे धोखा देकर बिहारीसिंह को गिरफ्तार कर लिया और उसे अर्जुनसिंह के यहाँ पहुँचा कर मेरे पास चला आया।

"ऊपर लिखी सब बातें बयान करके गिरिजाकुमार चुप हो गया और तब मैंने उससे कहा, 'बिहारीसिंह को तुमने गिरफ्तार कर लिया, यह बहुत बडा काम हुआ और जब तुम बिहारीसिंह बनकर वहाँ जाओगे और चालाकी से उन लोगो मे मिल-जुल कर अपने को छिपा सकोगे, तो बेशक बहुत-सी छिपी बातो का पता लग जायगा और हम लोगों के साथ जो कुछ दारोगा करना चाहता है वह भी मालूम हो जायगा।"

गिरिजाकुमार—बेशक ऐसा ही है। मैं आपसे बिदा होकर अर्जुनसिंह के यहाँ जाऊँगा और फिर बिहारीसिंह बनकर जमानिया पहुँचूंगा। मेरे जी मे तो यही आया था कि मैं कम्बख्त दारोगा को सीधे यमलोक पहुँचा दूं मगर यह काम आपकी आज्ञा के बिना नही कर सकता था।

मैं—नही-नही, इन्द्रदेव की आज्ञा के बिना यह काम कभी न करना चाहिए, पहले वहाँ का असल हाल तो मालूम करो, फिर इस बारे मे इन्द्रदेव से बातचीत करेंगे।

गिरिजाकुमार—जो आज्ञा।

"इसके बाद और भी तरह-तरह की बातचीत होती रही। उस दिन गिरिजाकुमार मेरे ही घर पर रहा दूसरे दिन मुझसे बिदा हो अर्जुनसिंह के पास चला गया।"

इसके बाद आठ दिन तक मुझे किसी नई बात का पता नही लगा। आखिर जब गिरिजाकुमार का पत्र आया तब मालूम हुआ कि वह बिहारीसिंह बनकर बडी खूबी के साथ उन लोगो मे मिल गया है। उन लोगो की गुप्त कमेटी मे भी बैठकर हर एक बात मे राय दिया करता है जिससे बहुत जल्द कुल भेदो का पता लग जाने की आशा होती है। गिरिजाकुमार ने यह भी लिखा कि दारोगा को उस चिट्ठी की बडी ही चिन्ता लगी हुई है जो मनोरमा के नाम से राजा गोपालसिंह को मार डालने के लिए मैंने (गिरिजाकुमार ने) जबर्दस्ती उससे लिखवा ली थी। वह चाहता है कि जिस तरह हो वह चिट्ठी उसके हाथ लग जाय और इस काम के लिए लाखो रुपये खर्च करने को तैयार है। वह कहता है और वास्तव मे ठीक कहता है कि 'उस चिट्ठी का हाल अगर लोगो को मालूम हो जायगा तो दूसरो की कौन कहे, जमानिया की रिआया ही मुझे बुरी तरह से मारने के लिए तैयार हो जायगी।' एक दिन हरनामसिंह ने उसे राय दी कि दलीपशाह को मार डालना चाहिए। इस पर वह बहुत ही झुंझलाया और बोला कि 'जब तक वह चिट्ठी मेरे हाथ न लग जाय तब तक दलीपशाह और उसके साथियो को मार डालने से मुझे क्या फायदा होगा। बल्कि मैं और भी बहुत जल्द बरबाद हो जाऊंगा क्योंकि दलीपशाह के मारे जाने से उसके दोस्त लोग जरूर उस चिट्ठी को मशहूर कर देंगे, इसलिए जब तक वह चिट्ठी अपने कब्जे मे न आ जाय तब तक किसी के मारने का ध्यान भी मन मे न लाना चाहिए। हाँ, दलीपशाह को गिरफ्तार करने से बेशक फायदा पहुँच सकता है। अगर वह कब्जे मे आ जायगा तो उसे तरह-तरह की तकलीफ पहुँचाकर किसी प्रकार

उस चिट्ठी का पता ज़रूर लगा लूंगा, इत्यादि।

"वास्तव मे बात भी ऐसी ही थी। इसमे कोई शक नही कि उसी चिट्ठी की बदौलत हम लोगों की जान बची रही, यद्यपि तकलीफें हद दर्जे की भोगनी पडी मगर जान से मारने की हिम्मत दारोगा को न हुई, क्योंकि उसके दिल मे विश्वास करा दिया गया था कि हम लोगो की मण्डली का एक भी आदमी जिस दिन मारा जायगा, उसी दिन वह चिट्ठी तमाम दुनिया मे मशहूर हो जायगी, इसका बहुत ही उत्तम प्रबन्ध किया गया है।

"इसके बाद कई दिन बीत गये मगर गिरिजाकुमार की फिर और कोई चिट्ठी न आई जिससे एक तरह पर तरद्दुद हुआ और जी मे आया कि अब खुद जमानिया चलकर उसका पता लगाना चाहिए।

दूसरे दिन अपने घर की हिफाजत का इन्तजाम करके मैं बाहर निकला और अर्जुनसिंह के घर पहुँचा। ये उस समय अपने कमरे मे अकेले बैठे हुए एक चिट्ठी लिख रहे थे। मुझे देखते ही उठ खडे हुए और बोले, "वाह-वाह, बहुत ही अच्छा हुआ जो आप आ गये, मैं इस समय आप ही के नाम एक चिट्ठी लिख रहा था और उसे अपने शागिर्द के हाथ आपके पास भेजने वाला था, आइये बैठिये।"

मैं—(बैठकर) क्या कोई नई बात मालूम हुई है?

अर्जुनसिंह—नही, बल्कि एक नई बात हो गई।

मैं—वह क्या?

अर्जुनसिंह—आज रात को बिहारीसिंह हमारी कैद से निकलकर भाग गया है।

मैं—(घबराकर) यह तो बहुत बुरा हुआ।

अर्जुनसिंह—बेशक बुरा हुआ। जिस समय वह जमानिया पहुँचेगा उस समय बेचारे गिरिजाकुमार पर जो बिहारीसिंह बनकर बैठा हुआ है, आफत आ जायगी और वह भारी मुसीबत मे गिरफ्तार हो जायगा। मैं यही खबर देने के लिए आपके पास आदमी भेजने वाला था।

मैं—आखिर ऐसा हुआ ही क्यो? हिफाजत मे कुछ कसर पड गई थी?

अर्जुनसिंह—अब तो ऐसा ही समझना पडेगा चाहे उसकी कैसी ही हिफाजत क्यो न की गई हो, मगर असल मे यह एक सिपाही की बेईमानी का नतीजा है क्योंकि बिहारी-सिंह के साथ ही वह भी यहाँ से गायब हो गया है। जरूर बिहारीसिंह ने उसे लालच देकर अपना पक्षपाती बना लिया होगा।

मैं—खैर, जो कुछ होना था वह तो हो गया। अब किसी तरह गिरिजाकुमार को बचाना चाहिए क्योंकि असली बिहारीसिंह के जमानिया पहुँचते ही नकली बिहारी-सिंह (गिरिजाकुमार) का भेद खुल जायगा और वह मजबूर करके कैदखाने मे झोंक दिया जायगा।

अर्जुनसिंह—मैं खुद यही बातें कह चुका हूँ, खैर, अब इस विषय में विशेष सोच-विचार न करके जहाँ तक हो जल्द जमानिया पहुँचना चाहिए।

मैं—मैं तो तैयार ही हूँ, क्योंकि अभी कमर भी नही खोली।

अर्जुनसिंह—खैर, आप कमर खोलिए और कुछ भोजन कीजिए, मैं भी आपके साथ चलने के लिए घटे भर के अन्दर ही तैयार हो जाऊँगा।

मैं—क्या आप जमानिया चलेंगे ?

अर्जुनसिंह—(आवाज मे जोर देकर) जरूर !

"घटे भर के अन्दर ही हम दोनो आदमी जमानिया जाने के लिए हर तरह से तैयार हो गये और ऐयारी का पूरा-पूरा सामान दुरुस्त कर लिया। दोनो आदमी असली सूरत मे पैदल ही घर से बाहर निकले और कई कोस निकल जाने के बाद जगल मे बैठ कर अपनी सूरत बदली, इसके बाद कुछ देर आराम करके फिर आगे की तरफ रवाना हुए और इरादा लिया कि आज की रात जगल मे पेड के ऊपर बैठकर बिता देंगे।

"आखिर ऐसा ही हुआ। सध्या होने पर हम दोनो दोस्त जगल मे एक रमणीक स्थान देखकर अटक गये जहाँ पानी का सुन्दर चश्मा बह रहा था तथा सलई का एक बहुत बडा और घना पेड भी था जिस पर बैठने के लिए ऐसी अच्छी जगह थी कि उस पर बैठे-बैठे घटे-दो घटे नीद भी ले सकते थे।

यद्यपि हम लोग किसी सवारी पर बहुत जल्द जमानिया पहुँच सकते थे और वहाँ अपने लिए टिकने का भी इन्तजाम कर सकते थे, मगर उन दिनो जमानिया की ऐसी बुरी अवस्था थी कि ऐसा करने की हिम्मत न पडी और जगल मे टिके रहना ही उचित जान पडा। दोनो आदमी एक-दिल थे, इसलिए कुछ तरद्दुद या किसी तरह के खुटके का भी कुछ खयाल न था।

"अधकार छा जाने के साथ ही हम दोनो आदमी पेड के ऊपर जा बैठे और धीरे धीरे बातें करने लगे, थोडी ही देर बाद कई आदमियो के आने की आहट मालूम हुई, हम दोनो चुप हो गये और इन्तजार करने लगे कि देखें कौन आता है। थोडी ही देर मे दो आदमी उस पेड के नीचे आ पहुँचे। रात हो जाने के सबब से हम उनकी शक्ल-सूरत अच्छी तरह नही देख सकते थे, घने पेडो मे से छनी हुई कुछ-कुछ और कही-कही चन्द्रमा की रोशनी जमीन पर पड रही थी, उसी से अन्दाजा कर लिया कि ये दोनो सिपाही है, मगर ताज्जुब होता था कि ये लोग रास्ता छोड भेदियो और ऐयारो की तरह जगल मे क्यो टिके हैं।"

"दोनो आदमी अपनी छोटी गठरी जमीन पर रखकर पेड के नीचे बैठ गये और इस तरह बातें करने लगे—

एक—भाई, हमे तो इस जगल मे रात काटना कठिन मालूम होता है।

दूसरा—सो क्यो ?

पहला—डर मालूम होता है कि किसी जानवर का शिकार न बन जायें।

दूसरा—बात तो ऐसी ही है। मुझे भी यहाँ टिकना बुरा मालूम होता है, मगर क्या किया जाये, बाबाजी का हुक्म ही ऐसा है।

पहला—बाबाजी तो अपने काम के आगे दूसरे की जान का कुछ भी खयाल नही करते। जब से हमारे राजा साहब का देहान्त हुआ है, तब से इनका दिमाग और भी चढ गया है।

दूसरा—इनकी हुकूमत के मारे तो हमारा जी ऊब गया, अब नौकरी करने की इच्छा नही होती।

पहला—मगर इस्तीफा देते भी डर मालूम होता है, झट यही कह बैठेंगे कि 'तू हमारे दुश्मनो से मिल गया है।' अगर इस तरह की बात उनके दिल मे बैठ जाये, तो जान बचानी भी मुश्किल होगी।

दूसरा—इनकी नौकरी मे यही तो मुश्किल है। रुपया खूब मिलता है, इससे कोई देह नही, मगर जान का डर हरदम बना रहता है। कम्बख्त मनोरमा की हुकूमत के मारे तो और भी नाक मे दम रहता है। जब से राजा साहब मरे हैं इसने महल मे डेरा ही जमा लिया है, पहले डर के मारे दिखाई भी नही देती थी। एक बाजारू औरत का इस तरह रियासत मे घुसे रहना कोई अच्छी बात है?

पहला—अजी, जब हमारी रानी साहिबा ही ऐसी है तो दूसरे को क्या कहे? मनोरमा तो बाबाजी की जान ही ठहरी।

दूसरा—बीच मे यह बेगम कम्बख्त नई निकल पडी है जहाँ घडी-घडी दौड के जाना पडता है।

पहला—(हँसकर) जानते नही हो? यह जयपालसिह की नानी (रण्डी) है। पहले भूतनाथ के पास रही, अब इनके गले पडी है। इसे भी तुम आफत की पुडिया ही समझो, चार दफे मैं उसके पास जा चुका हूँ, आज पाँचवी दफे जा रहा हूँ, इस बीच मे मैं उसे अच्छी तरह पहचान गया।

दूसरा—मैं समझता हूँ कि बिहारीसिंह का भी उससे कुछ सम्बन्ध है।

पहला—नही ऐसा तो नहीं है, अगर बिहारीसिंह से बेगम का कुछ लगाव होता तो जयपालसिंह और बिहारीसिंह मे जरूर खटक जाती, जिसमे इधर तो बिहारीसिंह बहुत दिनो तक अर्जुनसिंह के यहाँ कैदी ही रहे, आज किसी तरह छूट कर अपने घर पहुँचे हैं, अब देखो गिरिजाकुमार पर क्या मुसीबत आती है।

दूसरा—गिरिजाकुमार कौन हैं?

पहला—वही जो बिहारीसिंह बना हुआ था।

दूसरा—वह तो अपना नाम शिवशकर बताता है।

पहला—बताता है, मगर मैं तो उसे खूब पहचानता हूँ।

दूसरा—तो तुमने बाबाजी से कहा क्यो नही?

पहला—मुझे क्या गरज पडी है जो उसके लिए दलीपशाह से दुश्मनी पैदा करूँ? वह दलीपशाह का बहुत प्यारा शागिर्द है, खबरदार तुम भी इस बात का जिक्र किसी से न करना, मैंने तुम्हे अपना दोस्त समझ कर कह दिया है।

दूसरा—नही जी, मैं क्यो किसी को कहने लगा? (चौंककर) देखो, यह किसी भयानक जानवर के बोलने की आवाज है।

पहला—तो डर के मारे तुम्हारा दम क्यो निकला जाता है? ऐसा ही है तो थोडी सी लकडी बटोर कर आग सुलगा लो या पेड़ के ऊपर चढकर बैठो।

दूसरा—इससे तो यही बेहतर होगा कि यहाँ से चले चलें, सफर ही मे रात काट

देंगे, बाबाजी कुछ देखने थोडे ही आते है !

पहला—जैसा कहो।

दूसरा—हमारी तो यही राय है।

पहला—अच्छा चलो, जिसमे तुम खुश रहो, वही ठीक !

"उन दोनो की बातें सुनकर हम लोगों को बहुत सी बातो का पता लग गया।

गिरिजाकुमार की बात सुनकर मुझे बडा ही दुःख हुआ, साथ ही इस बात के जानने की उत्कंठा भी हुई कि वे दोनो बेगम के यहाँ क्यो जा रहे है। दिल दो तरफ खिचाव मे पड गया। एक तो इच्छा हुई कि दोनों को कब्जे मे करके मालूम कर लें कि बेगम के पास किस मजमून की चिट्ठी ले जा रहे हैं और अगर उचित मालूम हो तो इनकी सूरत बनकर खुद बेगम के पास चले, सम्भव हैं कि बहुत से भेदो का पता लग जाये, दूसरे इस बात की भी जल्दी पड गई कि किसी तरह शीघ्र जमानिया पहुँचकर गिरिजा-कुमार की मदद करनी चाहिए। जब यह मालूम हुआ कि अब वे दोनो यहाँ से जाना चाहते है, तब हम लोग भी झट पेड से नीचे उतर आए और उन दोनो के सामने खडे होकर मैंने कहा, "नही, जानवरो के डर से मत भागो, हम लोग तुम्हारे साथ है।"

हम दोनो को यकायक इस तरह पेड से उतरकर सामने खडे होते देख वे दोनो डर गये, मगर कुछ देर बाद एक ने जी कडा करके कहा, "भाई, तुम लोग कौन हो ? भूत हो, प्रेत हो, या जिन्न हो ?"

मैं—डरो मत, हम लोग भूत-प्रेत नहीं है, आदमी हैं और ऐयार है, तुम लोगो मे जो कुछ बाते हुई हैं हम लोग पेड पर बैठे-बैठे सुन रहे थे, जब देखा कि अब तुम लोग जाना चाहते हो तो हम दोनो भी उतर आये।

एक सिपाही—(घबरायी आवाज से) आप कहाँ के रहने वाले और कौन है ?

मैं—हम दोनो आदमी दलीपशाह के नौकर है।

दूसरा—अगर आप दलीपशाह के नौकर हैं तो हम लोगो को विशेष नही डरना चाहिए क्योकि आप लोग न तो हमारे मालिको से मिलेंगे और न इस बात का जिक्र करेंगे कि हम लोग क्या बातें करते थे, हाँ, अगर कोई हमारे दरबार का आदमी होता तो जरूर हम लोग बर्बाद हो जाते।

मैं—बेशक ऐसा ही है और तुम लोगो की बातो से यह जानकर हम दोनो बहुत प्रसन्न हुए कि तुम लोग नेक, ईमानदार और इन्साफपसन्द आदमी हो और हमे यह भी उम्मीद है कि जो कुछ हम पूछेंगे, उसका ठीक-ठीक जवाब दोगे।

दूसरा—हमारी बातो से आप जान ही चुके हैं कि हम लोग कैसे खूंखार आदमी के नौकर है और आप लोगो से बातें करने का कैसा बुरा नतीजा निकल सकता है।

मैं—ठीक है, मगर तुम्हारे दारोगा साहब को इन बातो की खबर कुछ भी नही लगेगी।

पहला—इस समय हम आपके काबू मे है क्योकि सिपाही होने पर भी ऐयारो का मुकाबला नही कर सकते तिस पर ऐसी अवस्था मे कि दोनो तरफ की गिनती बराबर हो इसलिए इस समय आप जो कुछ चाहे हम लोगो पर जबर्दस्ती कर सकते हैं।

मैं—नहीं-नहीं, हम लोग तुम पर जबर्दस्ती नहीं करना चाहते, बल्कि तुम्हारी खुशी और हिफाजत का खयाल रखकर अपना काम निकालना चाहते हैं।

पहला—इसके अतिरिक्त हम लोगों को इस बात का भी निश्चय हो जाना चाहिए कि आप लोग वास्तव में दलीपशाह के ऐयार हैं और हम लोगों की हिफाजत के लिए आपने कोई अच्छी तरकीब सोच ली है, अगर हम लोग आपकी किसी भी बात का जवाब दें।

सिपाही की आखिरी बात से हमें निश्चित हो गया कि वे लोग हमारे कब्जे में आ जायेंगे और हमारी बात मान लेंगे और अगर ऐसा न करते तो वे लोग कर ही क्या सकते थे? आखिर हर तरह का ऊँच-नीच दिखाकर हमने उन्हें राजी कर लिया और अपना सच्चा परिचय देकर उन्हें विश्वास करा दिया कि जो कुछ हमने कहा है, सब सच है। इसके बाद हमने जो कुछ पूछा, उन्होंने साफ-साफ बता दिया और जो कुछ देखना चाहा (बेगम के नाम का पत्र इत्यादि) दिखा दिया। गिरिजाकुमार के बारे में तो जो कुछ पहले मालूम कर चुके थे, उससे ज्यादा हाल कुछ मालूम न हुआ क्योंकि उसके विषय में उन्हें कुछ विशेष खबर ही न थी, केवल इतना ही जानते थे कि असली बिहारीसिंह के पहुँचने पर नकली बिहारीसिंह (गिरिजाकुमार) गिरफ्तार कर लिया गया, हाँ, दूसरी बात यह मालूम हो गई कि वे दोनों आदमी दारोगा और जयपाल की चिट्ठी लेकर बेगम के पास जा रहे हैं, कल संध्या-समय तक बेगम के पास पहुँच जायेंगे और परसों संध्या को बेगम को साथ लिए हुए किश्ती की सवारी से गंगाजी की तरफ से रातोरात जमानिया लौटेंगे। अतः हम लोगों ने उन दोनों सिपाहियों को जिस तरह बन पड़ा, इस बात पर राजी कर लिया कि जब तुम लोग बेगम को लिए हुए रातोरात गंगाजी की राह लौटो, तो अमुक समय अमुक स्थान पर कुछ देरी के लिए किसी बहाने से किश्ती किनारे लगा कर रोक लेना, उस समय हम लोग डाकुओं की तरह पहुँचकर बेगम को गिरफ्तार कर लेंगे और जो कुछ चीजें हमारे मतलब की उसके पास होंगी उन्हें ले लेंगे, मगर तुम लोगों को छोड़ देंगे, इस तरह से हमारा काम भी निकल जायेगा और तुम लोगों पर कोई किसी तरह का शक भी न कर सकेगा।

"रुपये पाने के साथ ही अपना किसी तरह का हर्ज न देखकर दोनों सिपाहियों ने इस बात को भी मंजूर कर लिया। इसके बाद हम लोगों में मेल-मुहब्बत की बातचीत होने लगी और तमाम रात हम लोगों ने उस पेड़ पर काट दी। सवेरा होने पर दोनों सिपाही हमसे विदा होकर चले गये, हम सब लोग आपस में विचार करने लगे कि अब क्या करना चाहिए। अंत में यह निश्चय करके कि अर्जुनसिंह तो गिरिजाकुमार को छुड़ाने के लिए जमानिया जायें और मैं बेगम के फँसाने का बन्दोबस्त करूँ, हम दोनों भी एक-दूसरे से विदा हुए।

"इस जगह मैं किस्से के तौर पर थोड़ा-सा हाल गिरिजाकुमार का बयान करूँगा जो कुछ दिन बाद मुझे उसी की जुबानी मालूम हुआ था।

"अर्जुनसिंह की कैद से छुटकारा पाकर बिहारीसिंह सीधे जमानिया दारोगा के पास चला, मगर ऐसे ढंग से गया कि किसी को कुछ मालूम हुआ, न गिरिजाकुमार ही को।

इस बात का पता लगा। रात पहर-भर से कुछ ज्यादा जा चुकी थी जब दारोगा ने नकली बिहारीसिंह अर्थात् गिरिजाकुमार को अपने घर बुलाया। बेचारे गिरिजाकुमार को क्या खबर थी कि आज मैं मुसीबत मे डाला जाऊँगा। वह बेधडक मामूली ढग पर बाबाजी (दारोगा) के मकान पर चला गया और देखा कि दारोगा अकेले ऊँची गद्दी पर बैठा हुआ है और उसके सामने सात-आठ सिपाही तलवार लगाये खडे है। दारोगा का इशारा पाकर गिरिजाकुमार उसके सामने बैठ गया। बैठने के साथ ही उन सब सिपाहियो ने एक साथ गिरिजाकुमार को धर दबाया और बात की बात मे हाथ-पैर बांध के छोड दिया। बेचारा गिरिजाकुमार अकेला कुछ भी न कर सका और जो कुछ हुआ, उसने चुपचाप बर्दाश्त कर लिया। इसके बाद दारोगा ने ताली बजाई, उसी समय असली बिहारीसिंह कोठरी मे से निकलकर बाहर चला आया और गिरिजाकुमार की तरफ देख के बोला, "अब तो तुम समझ गये होगे कि तुम्हारा भण्डा फूट गया और मैं तुम्हारी कैद से छूट के निकल आया, मगर शाबाश, तुमने बडी खूबी के साथ मुझे धोखा देकर गिरफ्तार किया था। अब मेरी पारी है, देखो, मैं किस तरह तुमसे बदला लेता हूँ।"

गिरिजाकुमार—यह तो ऐयारो का काम ही है कि एक-दूसरे को धोखा दिया करते हैं, इसमे अनर्थ क्या हो गया? मेरा दाँव लगा मैंने तुम्हे गिरफ्तार करके कैदखाने मे डाल दिया, अब तुम्हारा दाँव लगा है तो तुम मुझे कैदखाने मे डाल दो। जिस तरह तुम अपनी चालाकी से छूट आये हो, उसी तरह छूटने के लिए मैं भी उद्योग करूंगा।

बिहारीसिंह—सो तो ठीक है, मगर इतना समझ रखो कि हम लोग तुम्हारे साथ मामूली बर्ताव न करेंगे बल्कि हद दर्जे की तकलीफ देंगे।

गिरिजाकुमार—यह तो ऐयारी के कायदे के बाहर है।

बिहारीसिंह—जो भी हो।

गिरिजाकुमार—खैर, कोई हर्ज नही, जो कुछ होगा झेलेंगे।

बिहारीसिंह—अगर तुम तकलीफ से बचना चाहो तो मेरी बातो का साफ और सच-सच जवाब दो।

गिरिजाकुमार—वादा तो नही करते, मगर जो कुछ पूछना हो पूछो।

बिहारीसिंह—तुम्हारा नाम क्या है?

गिरिजाकुमार—शिवशकर।

बिहारीसिंह—किसके नौकर हो?

गिरिजाकुमार—किसी के भी नही।

बिहारीसिंह—फिर यहाँ किसके काम के लिए आये?

गिरिजाकुमार—गुरुजी के।

बिहारीसिंह—तुम्हारा गुरु कौन है!

गिरिजाकुमार—वही जिसे तुम जान चुके हो और जिसके यहाँ इतने दिनो तक [illegible] कैद थे।

बिहारीसिंह—अर्जुनसिंह?

गिरिजाकुमार—हाँ।

विहारीसिंह—उन्हे हम लोगो से क्या दुश्मनी थी ?

गिरिजाकुमार—कुछ भी नही।

विहारीसिंह—फिर यहाँ उत्पात मचाने के लिए तुम्हे भेजा क्यो ?

गिरिजाकुमार—मुझे सिर्फ भूतनाथ का पता लगाने के लिए भेजा था, क्योकि उन्हे भूतनाथ से वहुत ही रज है। यद्यपि भूतनाथ ने अपना मरना मशहूर किया है मगर ... विश्वास है कि वह मरा नही और दारोगा साहव के साथ मिल-जुलकर काम कर रहा है और उनकी (अर्जुनसिंह की) वर्वादी का वन्दोवस्त करता है। इसी से उन्होने मुझे आज्ञा दी थी कि दारोगा साहव के यहाँ घुस-पैठकर और कुछ दिन तक उन लोगो के साथ रहकर ठीक-ठीक पता लगाओ और वन पडे तो उसे गिरफ्तार भी कर लो, वस !

विहारीसिंह—भूतनाथ और अर्जुनसिंह से लडाई क्यो हो गई ?

गिरिजाकुमार—लडाई तो वहुत पुरानी है, मगर इधर जव से गुरुजी ने उसका ऐयारी का वटुआ ले लिया, तव से रज ज्यादा हो गया है।

विहारीसिंह—(ताज्जुव से) क्या भूतनाथ का वटुआ अर्जुनसिंह ने ले लिया ?

गिरिजाकुमार—हाँ।

विहारीसिंह—उसमे से क्या चीज निकाली ?

गिरिजाकुमार—सो तो नही मालूम, मगर इतना गुरुजी कहते थे कि उस वटुए के विना हमारा काम नही चला इसलिए उसे गिरफ्तार ही करना पडेगा।

विहारीसिंह—मगर भूतनाथ के खयाल से तुम्हारे गुरुजी ने हमको क्यो तकलीफ दी ?

गिरिजाकुमार—तुम्हे उन्होने किसी भी तरह की तकलीफ नही दी, वल्कि वडे आराम के साथ कैद मे रखा था, क्योकि तुम लोगो से उन्हे किसी तरह की दुश्मनी नही है। उनका खयाल यही था कि विहारीसिंह को तीन-चार दिन से ज्यादा कैद मे रखने की जरूरत न पड़ेगी और इसके बीच मे ही भूतनाथ का पता लग जायगा। उन्हे इस वात की भी खवर लगी थी कि भूतनाथ जमानिया मे विहारीसिंह के पास आया करता है। मगर यहाँ आने से मुझे उसका कुछ भी पता न लगा, अव मैं एक-दो दिन मे खुद ही लौट जाने वाला था। तुम अपनी बुद्धिमानी से अगर न भी छूटते तो एक-दो दिन मे जरूर छोड दिये जाते।

"गिरिजाकुमार ने ऐसी सूरत बनाकर ये बातें कही कि दारोगा और विहारीसिंह को उसकी सच्चाई पर विश्वास हो गया। मैं पहले ही यह बयान कर चुका हूँ कि गिरिजाकुमार वातचीत के समय सूरत वनाना वहुत ही अच्छा जानता था। अव गिरिजाकुमार और विहारीसिंह की वातें सुन दारोगा ने कहा—"शिवशकर, मालूम तो होता है कि तुम जो कुछ कहते हो वह सच ही है, परन्तु ऐयारो की वातो पर विश्वास करना जरा मुश्किल है, फिर भी तुम अच्छे और साफ दिल के मालूम होते हो।"

गिरिजाकुमार—आप चाहे जो खयाल करें, मगर मैं तो यही समझता हूँ कि आप लोगो से मुझे झूठ बोलने की जरूरत ही क्या है ? न मेरे गुरुजी को आप लोगो से दुश्मनी है न मझी को, हाँ अगर यह मालम हो ...

भूतनाथ को सहायता करते है तो बेशक दुश्मनी हो जायगी, यह मैं खुले दिल से कहे देता हूँ चाहे आप मुझे बेवकूफ समझें या नालायक ।

दारोगा—नही-नही शिवशकर, हम लोग भूतनाथ की मदद किसी तरह नही कर सकते, हम तो उसे खुद ही ढूंढ रहे हैं, मगर उस कम्बखत का कही पता ही नही लगता। ताज्जुब नही कि वास्तव मे मर ही गया हो।

गिरिजाकुमार—(सिर हिलाकर) कदापि नही अभी महीने भर से ज्यादा न हुआ होगा कि मैंने खुद अपनी आँखो से उसे देखा था, मगर उस समय मैं ऐसी अवस्था मे था कि कुछ न कर सका। खैर, कम्बख्त जाता कहाँ है, मुझे उसके दो-चार ठिकाने ऐसे मालूम हैं कि जिसके सबब से एक न एक दिन उसे जरूर गिरफ्तार कर लूंगा।

दारोगा—(ताज्जुब और खुशी से) क्या तुमने उसे खुद अपनी आँखो से देखा था और उसके दो-चार ठिकाने तुम्हें मालूम हैं ?

गिरिजाकुमार—बेशक ?

दारोगा—क्या उन ठिकानो का पता मुझे बता सकते हो ?

गिरिजाकुमार—नही ।

दारोगा—सो क्यो ?

गिरिजाकुमार—गुरुजी को मुझे जो कुछ ऐयारी सिखानी थी, सिखा चुके । मैं गुरुजी से वादा कर चुका हूँ कि अब आपकी इच्छानुसार गुरुदक्षिणा मे भूतनाथ को गिरफ्तार करके आपके हवाले करूँगा और जब तक ऐसा न करूँगा, अपने घर कदापि न जाऊँगा । ऐसी अवस्था मे अगर मैं भूतनाथ का कुछ पता आपको बता दूं तो मानो अपने पैर मे आप ही कुल्हाडी मारूँगा, क्योकि आप अमीर और शक्तिसम्पन्न हैं, बनिस्बत मुझ गरीब के आप उसे बहुत जल्द गिरफ्तार कर सकते है, अब अगर ऐसा हुआ और वह आपके हाथ मे गया तो मैं सूखा ही रह जाऊँगा और गुरु-दक्षिणा न दे सकने के कारण अपने घर भी न जा सकूंगा ।

दारोगा—(हँसकर) मगर शिवशकर, तुम बडे ही सीधे आदमी हो और बहुत ही साफ-साफ कह देते हो, ऐयारो को ऐसा न करना चाहिए ।

गिरिजाकुमार—नही साहब, आपसे साफ-साफ कह देने मे कोई हर्ज नही है। क्योंकि आप हमारे दुश्मन नही है, दूसरे यह कि अभी तक मुझे ऐयार की पदवी भी नही मिली, जब गुरुदक्षिणा देकर ऐयार की पदवी पा जाऊँगा तो ऐयारो की सी चाल चलूंगा, अभी तो मैं एक गरीब छोकरा हूं ।

दारोगा—नही, तुम बहुत अच्छे आदमी हो । हम तुमसे खुश हैं । (बिहारीसिंह की तरफ देख के) इस बेचारे के हाथ-पैर खोल दो ! (गिरिजाकुमार से) मगर तुम भूतनाथ का जो कुछ पता-ठिकाना जानते हो हमे बता दो, हम तुमसे वादा करते हैं कि भूतनाथ को गिरफ्तार करके अपना काम भी निकाल लेंगे और तुम्हारे सिर से गुरु-दक्षिणा का बोझ भी उतरवा देंगे ।

गिरिजाकुमार—(मुंह बिचका कर और सिर हिलाकर) जी नही । हाँ, अगर [illegible] ...का वादा करें तो मैं बेशक आपकी मदद कर

सकता हूँ।

विहारीसिंह—(गिरिजाकुमार के हाथ-पैर खोलकर) तुम और जो कुछ चाहोगे, बाबाजी देंगे, मगर इनकी बातो से इनकार न करो।

गिरिजाकुमार—(अच्छी तरह बैठकर) ठीक है, मगर मैं विशेष धन-दौलत नहीं चाहता, और न मुझे इसकी जरूरत ही है, क्योंकि ईश्वर ने मुझे विलकुल ही अकेला कर दिया है—न बाप, न माँ, न भाई, न भौजाई, ऐसी अवस्था में मैं धन-दौलत लेकर क्या करूँगा ? मगर दो-तीन बातो का इकरार लिए विना मैं दारोगा साहब को कुछ भी नही बताऊँगा, चाहे मार ही डाला जाऊँ।

दारोगा—(मुस्कराकर) अच्छा-अच्छा बताओ, तुम क्या चाहते हो ?

गिरिजाकुमार—एक तो यह कि उसकी खोज मे मैं अगुआ रखा जाऊँ।

दारोगा—मजूर है, अच्छा और बताओ।

गिरिजाकुमार—विहारीसिंह मेरी मदद के लिए दिये जाये, क्योंकि मैं भी इन्हे पसन्द करता हूँ।

दारोगा—यह भी कबूल है, और बोलो।

गिरिजाकुमार—जहाँ तक जल्द हो सके मैं गुरुदक्षिणा के बोझ से हलका किया जाऊँ क्योंकि इसके लिए मैं जोश मे आकर बहुत बुरी कसम खा चुका हूँ। यद्यपि गुरुजी मना करते थे कि तुम कसम न खाओ, तुम्हारे जैसे जिद्दी आदमी का कसम खाना अच्छा नहीं है।

दारोगा—बेशक तुम जो चाहते हो वही होगा, और कहो।

गिरिजाकुमार—गुरुदक्षिणा से छुट्टी पाकर मैं ऐयार की पदवी पा जाऊँ तो मुझे यहाँ किसी तरह नौकरी मिल जाय जिसमे मेरा गुजारा चले, और मेरी शादी करा दी जाय। यह मैं इसलिए कहता हूँ कि मुझे शादी करने का शौक है और मैं अपनी विरादरी मे ऐसा गरीब हूँ कि कोई मुझे लडकी देना कबूल न करेगा।

दारोगा—यह सब कुछ हो जायगा, तुम कुछ चिन्ता न करो। और फिर तुम गरीब भी न रहोगे। अच्छा बताओ, और भी कुछ चाहते हो ?

गिरिजाकुमार—एक बात और है।

दारोगा—वह भी कह डालो।

गिरिजाकुमार—(विहारीसिंह की तरफ इशारा करके)ये हमारे गुरुजी से किसी तरह की दुश्मनी न रखे और मेरे साथ वहाँ चलने मे कोई परहेज न करें। देखिये, मैं अपने दिल का हाल बहुत साफ कह रहा हूँ।

विहारीसिंह—ठीक है, ठीक है। जो कुछ तुम कहते हो, मंजूर है।

गिरिजाकुमार—(दारोगा की तरफ देखकर) तो बस, मैं आपका हुक्म बजा लाने के लिए दिलोजान से तैयार हूँ।

दारोगा—अच्छा तो अब उसके दो-तीन ठिकाने जो तुम्हें मालूम हैं, उनका पता बताओ।

गिरिजाकुमार—पता क्या, अब तो मैं खुद इनको (विहारीसिंह को) अपने साथ

ले चलकर सव-कुछ दिखाऊँगा और पता लगाऊँगा। मैं उस कम्बख्त को बिना ढूँढ़े छोड़ने वाला नहीं, मुझे आप चाणक्य की तरह जिद्दी समझिये।

दारोगा—अच्छा यह तो वताओ तुमने भूतनाथ को कहाँ देखा था जिसका जिक्र अभी तुमने किया है।

गिरिजाकुमार—वेगम के मकान से वाहर निकलते हुए।

विहारीसिंह—(ताज्जुव से) कौन वेगम?

गिरिजाकुमार—वही, जिसे जयपालसिंह अपनी समझते हैं। ताज्जुव क्या करते हैं, उसे आप साधारण औरत न समझिए। मैं सावित कर दूंगा कि उसका मकान भी भूतनाथ का एक अड्डा है, मगर वहाँ इत्तिफाक ही से वह कभी जाता है, हाँ वेगम उससे मिलने के लिए कभी कहीं जाती है, परन्तु उसका ठीक हाल मुझे मालूम नहीं हुआ। मैंने तो अव तक उसका भी पता लगा लिया होता, मगर क्या कहूँ, गुरुजी ने कहा कि तुम जमानिया हो आओ, वहाँ भूतनाथ जल्दी मिल जायगा, नहीं तो मैं वेगम का ही पीछा करने वाला था।

दारोगा—मुझे तुम्हारी इन वातों पर ताज्जुव मालूम पडता है।

गिरिजाकुमार—अभी क्या है, आगे चलकर और भी ताज्जुव होगा, जव खुद विहारीसिंह वहाँ की कैफियत आपसे वयान करेंगे।

दारोगा—खैर, अगर तुम्हारी राय हो तो मैं वेगम को यहाँ वुलाऊँ?

गिरिजाकुमार—वुलवाइए, मगर मेरी समझ मे उसे होशियार कर देना मुनासिव न होगा, वल्कि मैं तो कहता हूँ कि इसका जिक्र अभी आप जयपालसिंह से भी न कीजिए, कुछ सवूत इकट्ठा कर लेने दीजिए।

दारोगा—खैर, जैसा तुम चाहते हो, वैसा ही होगा। वेगम को यहाँ वुलवाकर भूतनाथ का जिक्र न करूँगा, वल्कि उसकी तवीयत और नीयत का अन्दाज करूँगा।

गिरिजाकुमार—हाँ तो वुलवाइये।

दारोगा—तव तक तुम क्या करोगे?

गिरिजाकुमार—कुछ भी नहीं, अभी तो दो-तीन दिन मैं यहाँ से न जाऊँगा, वल्कि मैं चाहता हूँ कि दो रोज मुझे आप इन्हीं (विहारीसिंह) की सूरत मे रहने दीजिए और विहारीसिंह को कहिए कि अपनी सूरत वदल लें। जव वेगम आकर यहाँ से चली जायगी तव हम दोनों आदमी भूतनाथ की खोज मे जायेंगे।

दारोगा—इसमे क्या फायदा है? असली सूरत मे अगर तुम यहाँ रहो तो क्या कोई हर्ज है?

गिरिजाकुमार—हाँ, जरूर हर्ज है, यहाँ मैं कई ऐसे आदमियों से मिलजुल रहा हूँ जिनसे भूतनाथ की वहुत-सी वातें मालूम होने की आशा है। उन्हें अगर मेरा असल भेद मालूम हो जायगा तो वेशक हर्ज होगा। इसके अतिरिक्त जव वेगम यहाँ आ जाय तो मैं विहारीसिंह वना हुआ आपके सामने ऐसे ढग पर वातें करूँगा कि ताज्जुव नहीं आपको भी इस वात का पता लग जाय कि भूतनाथ से और उससे कुछ सम्वन्ध है।

दारोगा—अगर ऐसी वात है तो तुम्हारा विहारीसिंह ही वने रहना ठीक है।

गिरिजाकुमार—इसी से तो मैं कहता हूँ।

दारोगा—खैर, ऐसा ही होगा और मैं आज ही बेगम को लाने के लिए आदमी भेजता हूँ। (बिहारीसिंह की तरफ देखकर) तुम अपनी सूरत बदलने का भी बन्दोबस्त करो।

बिहारीसिंह—बहुत अच्छा।

यहाँ तक बयान करके दलीपशाह चुप हो गया और कुछ दम लेकर फिर इस तरह बयान करने लगा—

"इस समय मेरी बातें सुन-सुनकर दारोगा और जयपाल वगैरह के कलेजे पर साँप लोट रहा होगा और उस समय की बातें याद करके ये बेचैन हो रहे होंगे, क्योंकि वास्तव में गिरिजाकुमार ने उन्हें ऐसा उल्लू बनाया कि उस बात को ये कभी भूल नहीं सकते। खैर, उस समय जब हम दोनों आदमी जंगल में दारोगा के सिपाहियों से जुदा हुए, हमें गिरिजाकुमार के मामले की कुछ खबर न थी, अगर खबर होती तो बेगम को न लूटते और न अर्जुनसिंह ही गिरिजाकुमार की खोज में जमानिया जाते। खैर, फिर भी जो कुछ हुआ, अच्छा ही हुआ और अब मैं आगे का हाल बयान करता हूँ।"

2

दलीपशाह ने फिर इस तरह अपना किस्सा शुरू किया—

"गिरिजाकुमार ने अपनी बातचीत में दारोगा और बिहारीसिंह को ऐसा उल्लू बनाया कि उन दोनों को गिरिजाकुमार पर पूरा-पूरा भरोसा हो गया और वह खुशी के साथ जमानिया में रहकर बेगम का इन्तजार करने लगा, बल्कि दारोगा के साथ जाकर उसने खास बाग का रास्ता और मायारानी को भी देख लिया था। इधर अर्जुनसिंह गिरिजाकुमार की खोज में जमानिया गये और मैं बेगम को गिरफ्तार करने की फिक्र में पड़ा।

"पहले तो मैं अपने घर गया और वहाँ से कई आदमियों का इन्तजाम करके लौटा। फिर ठीक समय पर गंगा के किनारे उस ठिकाने पहुँच गया जहाँ बेगम की किश्ती किनारे लगाकर लूट लेने की बातचीत कही-बदी थी।

"मैं इस घटना का हाल बहुत बढ़ाकर न कहूँगा कि बेगम की किश्ती क्योंकर आई और क्या-क्या हुआ तथा मैंने किसको किस तरह गिरफ्तार किया—संक्षेप में केवल इतना ही कहूँगा कि बेगम पर मैंने कब्जा कर लिया और जो चीजें उसके पास थीं, सब ले ली गयीं। उन्हीं चीजों में ये सब कागज और वह हीरे की अँगूठी भी जो भूतनाथ बेगम के यहाँ से ले आया और जो इस समय दरबार में मौजूद हैं। आगे चलकर मैं इन चीजों का हाल बयान करूँगा और यह भी कहूँगा कि ये सब चीजें मेरे कब्जे में आकर फिर क्योंकर निकल गईं। इस समय मैं पुनः गिरिजाकुमार का हाल बयान करूँगा जो उसी की जुबानी मुझे मालूम हुआ था।

"गिरिजाकुमार जमानिया मे बैठा हुआ दारोगा के साथ बेगम का इन्तजार कर रहा था। जब बेगम को लुटवाकर दोना सिपाही जिनके साथ बेगम के भी दो आदमी थे और जिन्हें मैंने जानबूझकर छोड दिया था, रोते-कलपते हुए जमानिया पहुँचे तो सीधे दारोगा के पास चले गये। उस समय वहाँ सूरत बदले हुए असली बिहारीसिंह और गिरिजाकुमार भी बिहारीसिंह बना हुआ बैठा था। दारोगा के सिपाहियों और बेगम के आदमियो ने अपनी बर्बादी और बेगम के लुट जाने का हाल बयान किया जिसे सुनते ही दारोगा को ताज्जुब और रज हुआ। उसने गिरिजाकुमार की तरफ देखकर कहा, 'यह कार्रवाई किसने की होगी?"

गिरजाकुमार—खुद बेगम ने या फिर भूतनाथ ने! (बेगम के आदमियो की तरफ देखकर) क्यो जी! मैं समझता हूँ कि शायद महीने-भर के लगभग हुआ होगा जब एक भूतनाथ मेरे साथ बेगम के यहाँ गया था। उस समय तुम भी तो वहाँ थे, क्या तुमने मुझे पहचाना था?

बेगम का आदमी—जी नही, मैंने आपको नही पहचाना था।

गिरिजाकुमार—(दारोगा की तरफ देख कर) आप ही के कहे मुताबिक मैं दो-तीन दफे भूतनाथ के साथ बेगम के यहाँ गया था, पर वास्तव मे भूतनाथ अच्छा आदमी है और ये लोग भी बडी मुस्तैदी के साथ वहाँ रहते हैं। (बेगम के आदमियो की तरफ देखकर) क्यो जी, है न यही बात?

बेगम का आदमी—(हाथ जोड कर) जी हाँ सरकार!

बेगम के आदमियो की जुबान से गिरिजाकुमार ने बडी खूबी के साथ 'जी हाँ सरकार' कहलवा लिया। इसमे कोई शक नही कि भूतनाथ बेगम के यहाँ जाया करता था और गिरिजाकुमार को यह हाल मालूम था, मगर ऐसे मौके पर उसके आदमियो की जुबान से 'हाँ' कहला लेना मामूली बात न थी। उन खुशामदी आदमियो ने यह सोच कर कि जब खुद बिहारीसिंह भूतनाथ के साथ अपना जाना कबूल करते हैं तो हाँ कहना ही अच्छा है—'जी हाँ सरकार' कह दिया और गिरिजाकुमार दारोगा तथा बिहारीसिंह की निगाह मे सच्चा बन बैठा। साथ ही इसके गिरिजाकुमार दारोगा से पहले ही कह चुका था कि बेगम आवेगी तो मैं बात-ही-बात मे किसी तरह साबित करा दूंगा कि भूतनाथ उसके यहाँ आता-जाता है, वह बात भी दारोगा को खूब याद थी, अत दारोगा को गिरिजाकुमार पर और भी विश्वास हो गया। उसने गिरिजाकुमार का इशारा पाकर बेगम के दोनो आदमियो को बिना कुछ कहे थोडी देर के लिए बिदा किया और फिर आपस मे इस तरह बातचीत करने लगा—

दारोगा—कुछ समझ मे नही आता कि क्या मामला है!

गिरिजाकुमार—अजी, यह उसी कम्बख्त भूतनाथ की बदमाशी और दोनो की मिली-जुली साँठ-गाँठ है। बेगम जान-बूझ कर यहाँ नही आई। अगर वह आती तो उसके आदमियो की तरह खास उसकी जुबान से भी मैं इस बात को साबित करा देता कि उससे और भूतनाथ से ताल्लुक है और इसीलिए मैं अभी तक बिहारीसिंह बना हुआ था, मगर खैर कोई चिन्ता नही, मैं बहुत जल्द इन सब भेदो का पूरा-पूरा पता लगा लूंगा और

भूतनाथ को भी गिरफ्तार कर लूँगा ।

दारोगा—तो अव देर क्यो करते हो ?

गिरिजाकुमार—कुछ नही, कल मेरे साथ चलने के लिए विहारीसिंह तैयार हो जायँ ।

विहारीसिंह—अच्छी वात है । यह वताओ कि किस सूरत-शक्ल मे सफर किया जायगा ?

गिरिजाकुमार—मैं तो एक ज्योतिषी की सूरत वनूँगा, और आप'

विहारीसिंह—मैं वैद्य वनूँगा ।

गिरिजाकुमार—वस-वस, यही ठीक है, मगर एक वात मैं अभी से कहे देता हूँ कि दो घण्टे के लिए मैं गुरुजी से मिलने जरूर जाऊँगा ।

विहारीसिंह—क्या हर्ज है, अगर कहोगे तो मै भी तुम्हारे साथ चला चलूँगा या कही अटक जाऊँगा ।

"मुख्तसिर यह है कि दूसरे दिन दोनो ऐयार ज्योतिषी और वैद्य वने हुए जमानिया के वाहर निकले ।

"मजा तो यह है कि गिरिजाकुमार ने चालाकी से उस समय तक किसी को अपनी असली सूरत देखने नही दी । जव तक वहाँ रहा विहारीसिंह ही वना रहा, जव वाहर निकला तो ज्योतिषी बन कर निकला । खैर दारोगा का तो कहना ही क्या है, खुद विहारीसिंह और हरनामसिंह व्यर्थ ही ऐयार कहलाये, असल मे कोई अच्छा काम इन दोनो के हाथ से होते देखा-सुना नही गया ।

"अव हम थोडा-मा हाल अर्जुनसिंह का वयान करते है, जो गिरिजाकुमार का पता लगाने के लिए हमसे जुदा होकर जमानिया गये थे । जमानिया मे सेठ रामसरन नामक एक महाजन अर्जुनसिंह का दोस्त था, अत ये सूरत वदले हुए सीधे उसी के मकान पर चले गये और मौका पाकर उससे मुलाकात करने के वाद सव हाल वयान किया और उससे मदद चाही । पहले तो वह दारोगा और मायारानी के खिलाफ कार्रवाई करने के नाम से वहुत डरा, मगर अर्जुनसिंह ने उसे वहुत भरोसा दिलाया और कहा कि जो कुछ हम करेंगे, वह ऐसे ढग से करेंगे कि तुम पर किसी को किसी तरह का शक न होगा, इसके अतिरिक्त हम तुमसे और किसी तरह की मदद नही चाहते केवल एक गुप्त कोठरी ऐसे ढग की चाहते है जिसमे अगर हम किसी को गिरफ्तार करके यहाँ लावें तो दो-चार दिन के लिए कैद करके रख सकें और यह काम भी ऐसी खूवी के साथ किया जायगा कि कैदी को इस वात का गुमान भी न होगा कि वह कहाँ और किसके मकान मे कैद किया गया था ।

"खैर, रामसरन ने किसी तरह अर्जुनसिंह की वात मजूर कर ली और तव अर्जुनसिंह उसके मकान से वाहर निकल कर हरनामसिंह को फँसाने की फिक्र करने लगे क्योकि इन्होने निश्चय कर लिया था कि विना किसी को फँसाये हुए गिरिजाकुमार का पता लगाना कठिन ही नही, वल्कि असम्भव है ।

"मुख्तसिर यह कि दो दिन की कोशिश मे अर्जुनसिंह ने भुलावा दे हरनामसिंह

को गिरफ्तार कर लिया, उसे रामशरन के मकान की एक अँधेरी कोठरी में ले जाकर कैद किया तथा खाने-पीने का भी प्रबन्ध कर दिया। हरनामसिंह को यह मालूम न हुआ कि उसे किसने कैद किया है और वह किस स्थान पर रखा गया है, तथा उसे खाने-पीने को कौन देता है। इस काम से छुट्टी पाकर हरनामसिंह की सूरत बन अर्जुनसिंह दारोगा के दरवार मे जा घुसे और उस तरकीव से वहुत जल्द गिरिजाकुमार को पहचान लिया और उसका पता लगा लिया। गिरिजाकुमार ने जिस चालाकी से अपने को बचा लिया था, उसे जानकर उसकी बुद्धिमानी पर अर्जुनसिंह को आश्चर्य हुआ, मगर भण्डा फूटने के डर से वे अपने को वहुत ही बचाये हुए थे और दारोगा तथा असली बिहारीसिंह से सिर-दर्द का वहाना करके वातचीत कम करते थे।

"जव विहारीसिंह को साथ लेकर गिरिजाकुमार शहर के वाहर निकला तो अर्जुनसिंह ने भी सूरत वदल कर उसका पीछा किया। जव दोनों मुसाफिर एक मंजिल रास्ता तय कर चुके तो दूसरे दिन सफर में एक जगह मौका पाकर कुछ देर के लिए गिरिजाकुमार को अकेला देख कर अर्जुनसिंह उसके पास चले गये और उन्होंने अपने को उस पर प्रकट कर दिया। जल्दी-जल्दी वातचीत करके उन्होंने उसे यह वता दिया कि उसके जमानिया चले जाने के वाद क्या हुआ तथा अव उसे क्या और किस-किस ढंग पर कार्रवाई करनी चाहिए और हमसे-तुमसे कहाँ-कहाँ किस-किस मौके पर या कैसी सूरत मे मुलाकात होगी।

अर्जुनसिंह ने गिरिजाकुमार को जो कुछ समझाया उसका हाल आगे चल कर मालूम होगा। इस जगह केवल इतना ही कहना काफी है कि गिरिजाकुमार को समझा कर अर्जुनसिंह फिर जमानिया चले गए और रात के समय हरनामसिंह को वेहोश करके कैदखाने से निकाल, शहर के वाहर वहुत दूर मैदान मे ले जाकर छोड दिया और अपना रास्ता पकडा, जिसमे होश मे आकर वह अपने घर चला जाय और उसे मालूम न हो कि उसके साथ किसने क्या सलूक किया, वल्कि यह वात उसे स्वप्न की तरह याद रहे।

"इसके वाद अर्जुनसिंह वहुत जल्द मेरे पास पहुँचे और जो कुछ हो चुका था उसे वयान किया। गिरिजाकुमार का हाल सुन कर मुझे वडी प्रसन्नता हुई और मैंने वेगम के साथ जो कुछ सलूक किया था, उसका हाल अर्जुनसिंह से वयान किया तथा जो कुछ चीजें उसकी मेरे हाथ लगी थी दिखाकर यह भी कहा कि वेगम अभी तक मेरे यहाँ कैद है। अत सोचना चाहिए कि अव उसके साथ क्या कार्रवाई की जाय ?

"उन दिनो असल मे मुझे तीन वातो की फिक्र लगी थी। एक तो यह कि यद्यपि भूतनाथ से और मुझसे रंज चला आता था और भूतनाथ ने अपना मरना मशहूर कर दिया था, मगर भूतनाथ की स्त्री मेरे यहाँ आई हुई थी और उसकी अवस्था पर मुझे दुःख होता था, इसलिए मैं चाहता था कि किसी तरह भूतनाथ से मुलाकात हो और मैं उसे समझा-वुझा कर ठीक रास्ते पर लाऊँ, दूसरे यह कि राजा गोपालसिंह के मरने का असली सवव दरियाफ्त करूँ और तीसरे वलभद्रसिंह तथा लक्ष्मीदेवी को दारोगा की कैद से छुडाऊँ, जिनका कुछ-कुछ हाल मुझे मालूम हो चुका था। वस, इन्ही कामो के लिए हम लोगो ने इतनी मेहनत अपने सिर उठाई थी, नहीं तो जमानिया के वारे मे हम लोगो के

लिए अब किसी तरह की दिलचस्पी नही रह गई थी।

"बेगम की जो चीजे मेरे हाथ लगी थी, उनमे से कई कागज और एक हीरे की अँगूठी ऐसी थी, जिस पर ध्यान देने से हम लोगो को मालूम हो गया कि बेगम भी कोई साधारण औरत नही थी। उन कागजो मे से कई चिट्ठियाँ ऐसी थी जो भूतनाथ के विषय मे जयपाल ने बेगम को लिखी थी और कई चिट्ठियाँ ऐसी थी जिनके पढने से मालूम होता था कि मायारानी के बाप को इसी जयपाल ने मायारानी और दारोगा की इच्छानुसार मार कर जहन्नुम मे पहुँचा दिया है और बलभद्रसिंह अभी तक जीता है, मगर साथ ही इसके उन चिट्ठियो से यह भी जाहिर होता था कि असली लक्ष्मीदेवी निकल कर भाग गई, जिसका पता लगाने के लिए दारोगा बहुत उद्योग कर रहा है, मगर पता नही लगता। वह जो हीरे की अँगूठी थी वह वास्तव मे हेलासिंह (मायारानी के बाप) की थी जो उसके मरने के बाद जयपाल के हाथ लगी थी। उस अँगूठी के साथ एक कागज का पुर्जा बँधा हुआ था जिस पर बलभद्रसिंह को कैद मे रखने और हेलासिंह को मार डालने की आज्ञा थी और उस पर मायारानी तथा दारोगा दोनो के हस्ताक्षर थे।

"वे कागज पुर्जे और अंगूठी इस समय महाराज के दरबार मे मौजूद हैं जा भूतनाथ बेगम के यहाँ से उस समय ले आया था, जब वह असली बलभद्रसिंह को छुडाने के लिए गया था। आप लोगो को इस बात आश्चर्य होगा कि जब ये सब चीजें बेगम के गिरफ्तार करने पर मेरे कब्जे मे आ ही चुकी थी तो पुन बेगम के कब्जे मे कैसे चली गईं? इसके जवाब मे केवल इतना ही कह देना काफी है कि जब बेगम मेरे कब्जे से निकल गई तो वे चीजें भी उसी के साथ जाती रही और फिर मैं भी बेगम तथा दारोगा के कब्जे मे चला गया और इन सब बातो का कर्ता-धर्ता भूतनाथ ही है जिसने उस समय बहुत धोखा खाया और जिसके सबब से कुछ दिन बाद उसे भी तकलीफ उठानी पडी। मैंने यह भी सुना था कि अपनी इस भूल से शर्मिन्दा होकर भूतनाथ ने बेगम और जबपाल को बडी तकलीफें दी, मगर उसका नतीजा उस समय कुछ भी न निकला। खैर अब मैं पुन अपने किस्से की तरफ झुकता हूँ।"

दलीपशाह की इस बात को सुनकर महाराज ने पुन उन हीरे की अँगूठी और उन चिट्ठियो के देखने की इच्छा प्रकट की जो भूतनाथ बेगम के यहाँ से उठा लाया था। तेजसिंह ने पहले महाराज को फिर और लोगो को भी वे चीजे दिखाईं और इसके बाद फिर दलीपशाह ने इस तरह अपना हाल बयान करना शुरू किया—

"अर्जुनसिंह ज्यादा देर तक मेरे पास नही ठहरे, उस समय जो कुछ हम लोगो को करना चाहिए था, बहुत जल्द निश्चय कर लिया गया और इसके बाद अर्जुनसिंह के साथ मैं घर से बाहर निकला और हम दोनो मित्र गिरिजाकुमार की तरफ रवाना हुए।

"अब गिरिजाकुमार का हाल सुनिये कि अर्जुनसिंह से मिलने के बाद फिर क्या हुआ।

"बिहारीसिंह और गिरिजाकुमार दोनो आदमी सफर करते हुए एक ऐसे स्थान मे पहुँचे जहाँ से बेगम का मकान केवल पाँच कोस की दूरी पर था। यहाँ पर एक छोटा गाँव था, जहाँ मुसाफिरो के लिए खाने-पीने की मामूली चीजें मिल सकती थी और जिसमे

हलवाई की एक छोटी-सी दुकान भी थी। गाँव के बाहरी प्रान्त मे जमीदारो के देहाती ढग के वगीचे थे और पास ही मे पलाश का छोटा-सा जगल भी था। सध्या होने मे घण्टे भर की देर थी और विहारीसिंह चाहता था हम लोग वरावर चले जायँ, दो-तीन घण्टे रात जाते वेगम के मकान तक पहुँच ही जायँगे, मगर गिरिजाकुमार को यह वात मजूर न थी। उसने कहा कि मैं वहुत थक गया हूँ और अव एक कोस भी आगे नही चल सकता, इसलिए यही अच्छा होगा कि आज की रात इसी गाँव के वाहर किसी वगीचे अथवा जगल मे विता दी जाय।

"यद्यपि दोनो की राय दो तरह की थी, मगर विहारीसिंह को लाचार हो गिरिजा-कुमार की वात माननी पडी और यह निश्चय करना ही पडा कि आज की रात अमुक बगीचे मे बिताई जायगी। अस्तु सध्या हो जाने पर दोनो आदमी गाँव मे हलवाई की दुकान पर गये और वहाँ पूरी-तरकारी बनवाकर पुन गाँव के बाहर चले आए।

चाँदनी निकली हुई थी और चारो तरफ सन्नाटा छाया हुआ था। विहारीसिंह और गिरिजाकुमार एक पेड के नीचे बैठे हुए धीरे-धीरे भोजन और निम्नलिखित बातें करते जाते थे—

गिरिजाकुमार—आज की भूख मे ये पूरियाँ वडा ही मजा दे रही हैं।

विहारीसिंह—यह के भूख ही कारण नही, वल्कि वनी भी अच्छी हैं, इसके अति-रिक्त तुमने आज बूटी (भाँग) भी गहरी पिला दी है।

गिरिजाकुमार—अजी, इसी बूटी की वदौलत तो सफर की हरारत मिटेगी।

विहारीसिंह—मगर नशा तो तेज हो रहा है और अभी तक वढता ही जाता है।

गिरिजाकुमार—तो हम लोगो को करना ही क्या है?

विहारीसिंह—और नही तो अपने कपडे-लत्ते और वटुए का खयाल तो है ही।

गिरिजाकुमार—(हँसकर) मजा तो तव हो जो इस समय भूतनाथ से सामना हो जाय।

विहारीसिंह—हर्ज ही क्या है? मैं इस समय भी लडने को तैयार हूँ। मगर वह वडा ही ताकतवर और काइयाँ ऐयार है।

गिरिजाकुमार—उसकी कदर तो राजा गोपालसिंह जानते थे।

विहारीसिंह—मेरे खयाल से तो यह बात नही है।

गिरिजाकुमार—तुम्हे खवर नही है, अगर कभी मौका मिला तो मैं इस वात को सावित कर दूँगा।

विहारीसिंह—किस ढग से सावित करोगे?

गिरिजाकुमार—खुद राजा गोपालसिंह की जवान से।

विहारीसिंह—(हँसकर) क्या भग के नशे मे पागल हो गये हो? राजा गोपाल-सिंह अव कहाँ हैं?

गिरिजाकुमार—असल वात तो यह है कि मुझे राजा गोपालसिंह के मरने का विश्वास ही नही है।

विहारीसिंह—(चौकन्ना होकर) सो क्यो? तुम्हारे पास उनके जीते रहने का

क्या सबूत है ?

गिरिजाकुमार—बहुत-कुछ सबूत है मगर इस विषय पर मैं हुज्जत या बहस करना पसन्द नही करता। जो कुछ असल बात है तुम स्वय जानते हो, अपने दिल से पूछ लो।

बिहारीसिंह—मैं तो यही जानता हूँ कि राजा साहब मर गये।

गिरिजाकुमार—खैर यह तो मैं कही चुका हूँ कि इस विषय पर बहस न करूँगा।

बिहारीसिंह—मगर बताओ तो सही कि तुमने क्या समझ के ऐसा कहा ?

गिरिजाकुमार—मैं कुछ भी न बताऊँगा।

बिहारीसिंह—फिर हमारी-तुम्हारी दोस्ती ही क्या ठहरी जो एक जरा सी बात छिपा रहे हो और पूछने पर भी नही बताते।

गिरिजाकुमार—(हँसकर) तुम्हे ऐसा कहने का हक नहीं है। जब तुम खुद दोस्ती का खयाल न करके ये बातें छिपा रहे हो तो मैं क्यो बताऊँ ?

बिहारीसिंह—(सकोच के साथ) मैं तो कुछ भी नही छिपाता।

गिरिजाकुमार—अच्छा मेरे सिर पर हाथ रखके कह तो दो कि वास्तव मे राजा साहब मर गये, मैं अभी साबित कर देता हूँ कि तुम छिपाते हो या नहीं। अगर तुम सच कह दोगे तो मैं भी बता दूँगा कि इसमे कौन सी नई बात पैदा हो गई और क्या रग खिला चाहता है।

बिहारीसिंह—(कुछ सोचकर) पहले तुम बताओ, फिर मैं बताऊँगा।

"इस समय बिहारीसिंह नशे मे मस्त था, एक तो गिरिजाकुमार ने उसे भग पिला दी थी, दूसरे उसने जो पूरियाँ खाई थी उसमे भी एक प्रकार का बेढब नशा मिला हुआ था, क्योकि वास्तव मे उस हलवाई के यहाँ अर्जुनसिंह ने पहले ही से प्रबध कर लिया था और ये बातें गिरिजाकुमार से कही-बदी थी जैसा कि ऊपर के बयान से आपको मालूम हो चुका है, अत गिरिजाकुमार ने पहले ही से एक दवा खा ली थी जिससे उन पूरियो का असर उस पर कुछ भी न हुआ, मगर बिहारीसिंह धीरे-धीरे अलमस्त हो गया और थोडी ही देर मे बेहोश होने वाला था। वह ऐसा मस्त और दिल खुश करने वाला नशा था जिसके वश मे होकर बिहारीसिंह ने अपने दिल का भेद खोल दिया, मगर अफसोस भूतनाथ ने हमारी कुल मेहनत पर मिट्टी डाल दी और हम लोगो को बर्बाद कर दिया। उस भेद का पता लग जाने पर भी हम लोग कुछ न कर सके जिसका सबब आगे चल कर आपको मालूम होगा। जब गिरिजाकुमार और बिहारीसिंह से बातें हो रही थीं उस समय हम दोनो मित्र भी वहाँ से थोडी ही दूर पर छिपे हुए खडे थे और इन्तजार कर रहे थे कि बिहारीसिंह बेहोश हो जाय और गिरिजाकुमार बुलाये तो हम दोनो भी वहाँ जा पहुँचें।

"गिरिजाकुमार ने पुन जोर देकर कहा, ऐसा नही हो सकता, पहले तुम्ही को दिल का परदा खोल के और सच्चा-सच्चा हाल कहके दोस्ती का परिचय देना चाहिए और यह बात मुझसे छिपी नही रह सकती कि तुमने सच कहा या झूठ क्योकि जो कुछ भेद है उसे मैं खूब जानता हूँ।

बिहारीसिंह—मुझे भी ऐसा ही मालूम होता है। खैर अब मैं कोई बात तुमसे न छिपाऊँगा, सब भेद साफ कह दूँगा। मगर इस समय मै केवल इतना ही कहूँगा कि वास्तव मे राजा साहब मरे नही बल्कि अभी तक जीते है।

गिरिजाकुमार—इतना तो मैं खुद कह चुका हूँ, इससे ज्यादा कुछ कहो तो मुझे विश्वास हो।

"गिरिजाकुमार की बात का बिहारीसिंह कुछ जवाब दिया ही चाहता था कि सामने से एक आदमी आता हुआ दिखाई पडा जो पास आते ही चाँदनी के सबब से बहुत जल्द पहचान लिया गया कि भूतनाथ है। बिहारीसिंह ने, जो भूतनाथ को देख कर घबडा गया था गिरिजाकुमार से कहा, "लो सम्हल जाओ, भूतनाथ आ पहुँचा।" दोनो आदमी सम्हल कर खडे हो गये और भूतनाथ भी वहाँ पहुँच कर दिलेराना ढग पर उन दोनो के सामने अकड कर खडा हो गया और बोला, "तुम दोनो को मै खूब पहचानता हूँ और मुझे यकीन है कि तुम लोगो ने भी मुझे पहचान लिया होगा कि यह भूतनाथ है।"

बिहारीसिंह—बेशक मैंने तुमको पहचान लिया, मगर तुमको हम लोगो के बारे मे धोखा हुआ है।

भूतनाथ—(हँसकर) मैं तो कभी धोखा खाता ही नही। मुझे खूब मालूम है कि तुम दोनो बिहारीसिंह और गिरिजाकुमार हो और साथ ही इसके मुझ यह भी मालूम है कि तुम लोग मुझे गिरफ्तार करने के लिए जमानिया से बाहर निकले हो। मुझे तुम अपने ऐसा बेवकूफ न समझो। (गिरिजाकुमार की तरफ बताकर) जिसे तुम लोगो ने आज तक नही पहचाना और जिसे तुम अभी तक शिवशकर समझे हुए हो उसे मैं खूब जानता हूँ कि यह दलीपशाह का शागिर्द गिरिजाकुमार है। जरा सोचो तो सही कि तुम्हारे ऐसा बेवकूफ आदमी मुझे क्या गिरफ्तार करेगा जिसे एक लौडे (गिरिजाकुमार) ने धोखे मे डालकर उल्लू बना दिया और जो इतने दिनो तक साथ रहने पर भी गिरिजा कुमार को पहचान न सका। खैर, इसे जाने दो, पहले अपनी हिम्मत और बहादुरी का अन्दाज कर लो, देखो, मैं तुम्हारे सामने खडा हूँ, मुझे गिरफ्तार करो तो सही।

"भूतनाथ की बातें सुनकर बिहारीसिंह हैरान बल्कि बदहवास हो गया क्योकि वह भूतनाथ की जीवट और उसकी ताकत को खूब जानता था और उसे विश्वास था कि इस तरह खुले मैदान भूतनाथ को गिरफ्तार करना दो-चार आदमियो का काम नही है। साथ ही वह यह सुनकर और भी घबडा गया कि हमारा साथी वास्तव मे शिवशकर या हमारा मददगार नही है बल्कि हमे धोखे मे डालकर उल्लू बनाने और भेद ले लेने वाला एक चालाक ऐयार है। इससे मैंने जो गोपालसिंह के जीते रहने का भेद बता दिया सो अच्छा नहीं किया।

उसी घबराहट मे बिहारीसिंह का नशा पूरे दर्जे पर पहुँच गया और सिर नीचा करके सोचता-ही-सोचता वह बेहोश होकर जमीन पर लम्बा हो गया। उस समय गिरिजाकुमार की तरफ देख के भूतनाथ ने कहा, "तुम इस बात का खयाल छोड दो कि मेरे सामने से भाग जाओगे या चिल्लाकर लोगों को इकट्ठा कर लोगे।"

गिरिजाकुमार—मगर मुझसे आपको किसी तरह की दुश्मनी न होनी चाहिए, क्योंकि मैंने आपका कुछ नुकसान नहीं किया है।

भूतनाथ—सिवाय इसके कि मुझे गिरफ्तार करने की फिक्र मे थे।

गिरिजाकुमार—कदापि नही, यह तो एक तरकीब थी जिससे कि मैने अपने को कैद होने से बचा लिया, यही सबब था कि इस समय मैंने इसे (बिहारीसिंह को) धोखा देकर बेहोशी का दवा दी और इसे बाँधकर अपने घर ले जाने वाला था।

भूतनाथ—तुम्हारी बातें मान लेने के योग्य है मगर मैं इस बात को भी खूब जानता हूँ कि तुम बड़े बातूनी हो और बातो के जाल मे बडे-बडे चालाको को फँसाकर उल्लू बना सकते हो।

"इतना कहकर भूतनाथ ने अपनी जेब मे से कपडे का एक टुकडा निकालकर गिरिजाकुमार के मुँह पर रख दिया और फिर गिरिजाकुमार को दीन-दुनिया की कुछ भी खबर न रही। इसके बाद क्या हुआ सो उसे मालूम नही और न मैं ही जानता हूँ, क्योंकि इस विषय मे मैं वही बयान करूँगा जो गिरिजाकुमार ने मुझसे कहा था।

"हम दोनो मित्र जो उस समय छिपे हुए थे बैठे-बैठे घबडा गये और जब लाचार होकर उस बाग मे गये तो न गिरिजाकुमार को देखा न बिहारीसिंह को पाया। कुछ पता न लगा कि दोनो कहाँ गये क्या हुए या उन पर कैसी बीती। बहुत खोजा, पता लगाया, कई दिन तक उस इलाके मे घूमते रहे, मगर नतीजा कुछ न निकला। लाचार अफसोस करते हुए अपने घर की तरफ लौट आए।

"अब बहुत विलम्ब हो गया, महाराज भी घबडा गये होंगे। (जीतसिंह की तरफ देखकर) यदि आज्ञा हो तो मैं अपनी राम-कहानी यही पर रोक दूँ और जो कुछ बाकी है उसे कल के दरबार मे बयान करूँ।"

इतना कहकर दलीपशाह चुप हो गया और महाराज का इशारा पाकर जीतसिंह ने उसकी बात मजूर कर ली। दरबार बर्खास्त हुआ और लोग अपने-अपने डेरे की तरफ रवाना हुए।

3

दूसरे दिन मामूली ढग पर दरबार लगा और दलीपशाह ने इस तरह अपना हाल बयान करना शुरू किया—

"कई दिन बीत गये मगर मुझे गिरिजाकुमार का कुछ पता न लगा और न इस बात का ही खयाल हुआ कि वह भूतनाथ के कब्जे मे चला गया होगा। हाँ, जब मैं गिरिजाकुमार की खोज मे सूरत बदल कर घूम रहा था, तब इस बात का पता जरूर लग गया कि भूतनाथ मेरे पीछे पडा हुआ है और दारोगा से मिलकर मुझे गिरफ्तार करा देने का बन्दोबस्त कर रहा है।

"उस मामले के कई सप्ताह बाद एक दिन आधी रात के समय भूतनाथ पागलो

की सी हालत मे मेरे घर आया और उसने मेरा लडका समझ कर अपने हाथ से खुद अपने लडके का खून कर दिया जिसका रज इस जिन्दगी मे उसके दिल से नही निकल सकता और जिसका खुलासा हाल वह स्वय अपनी जीवनी मे बयान करेगा। इसी के थोडे दिन बाद भूतनाथ की बदौलत मैं दारोगा के कब्जे मे जा फँसा।

"जब तक मैं स्वतन्त्र रहा मुझे गिरिजाकुमार का हाल कुछ भी मालूम न हुआ, जब मैं पराधीन होकर कैदखाने मे गया और वहाँ गिरिजाकुमार से जिसे, भूतनाथ ने दारोगा के सुपुर्द कर दिया था, मुलाकात हुई तब गिरिजाकुमार की जुबानी सब हाल मालूम हुआ।

"भूतनाथ के कब्जे मे पड जाने के बाद जब गिरिजाकुमार होश मे आया तो उसने अपने को एक पत्थर के खभे के साथ बँधा हुआ पाया जो किसी सुन्दर सजे हुए कमरे के बाहरी दालान मे था। वह चौकन्ना होकर चारो तरफ देखने और गौर करने लगा मगर इस बात का निश्चय न कर सका कि यह मकान किसका है, हाँ शक होता था कि यह दारोगा का मकान होगा, क्योकि अपने सामने भूतनाथ के साथ-ही-साथ बिहारीसिह और दारोगा साहब को भी बैठे हुए देखा।

गिरिजाकुमार दारोगा, बिहारीसिह और भूतनाथ मे देर तक तरह-तरह की बातें होती रही और गिरिजाकुमार ने भी बातो की उलझन मे उन्हे ऐसा फँसाया कि किसी तरह असल भेद का वे लोग पता न लगा सके, मगर फिर भी गिरिजाकुमार को उनके हाथो छुट्टी न मिली और वह तिलिस्म के अन्दर वाले कैदखाने मे ठूँस दिया गया, हाँ, उसे इस बात का विश्वास हो गया कि वास्तव मे राजा गोपालसिंह मरे नही, बल्कि कैद कर लिए गए है।

"राजा गोपालसिंह के जीते रहने का हाल यद्यपि गिरिजाकुमार को मालूम हो गया मगर इसका नतीजा कुछ भी न निकला क्योकि इस बात का पता लगाने के साथ ही वह गिरफ्तार हो गया और यह हाल किसी से भी बयान न कर सका। अगर हम लोगो मे से किसी को भी मालूम हो जाता कि वास्तव मे राजा गोपालसिंह जीते है और कैद मे हैं तो हम लोग उन्हें किसी-न-किसी तरह जरूर छुडा ही लेते, मगर अफसोस।

"बहुत दिनो तक खोजने और पता लगाने पर भी जब गिरिजाकुमार का कुछ हाल मालूम न हुआ तब लाचार होकर मैं इन्द्रदेव के पास गया और सब हाल बयान करने के बाद मैंने इनसे सलाह पूछी कि अब क्या करना चाहिए। बहुत गौर करने के बाद इन्द्रदेव ने कहा कि मेरा दिल यही कहता है कि गिरिजाकुमार गिरफ्तार हो गया और इस समय दारोगा के कब्जे मे है। इसका पता इस तरह लग सकता है कि तुम किसी तरह दारोगा को गिरफ्तार करके ले आओ और उसकी सूरत बनकर पाँच-दस दिन उसके मकान मे रहो। इसी बीच मे उसके नौकरो की जुबानी कुछ-न-कुछ हाल गिरिजाकुमार का जरूर मालूम हो जायगा, मगर इसमे कुछ शक नही कि दारोगा को गिरफ्तार करना जरा मुश्किल है।

"इन्द्रदेव की राय मुझे बहुत पसन्द आई और मैं दारोगा को गिरफ्तार करने की फिक्र मे पडा। इन्द्रदेव से विदा होकर मैं अर्जुनसिंह के घर गया और जो कुछ सलाह

हुई थी वयान किया। इन्होंने भी यह राय पसन्द की और इस काम के लिए मेरे साथ जमानिया चलने को तैयार हो गये, अत. हम दोनो आदमी भेष बदलकर घर से निकले और जमानिया की तरफ रवाना हुए।

"सध्या हुआ ही चाहती थी जव हम दोनो आदमी जमानिया शहर के पास पहुँचे, उस समय सामने से दारोगा का एक सिपाही आता हुआ दिखाई पडा। हम लोग बहुत खुश हुए और अर्जुनसिंह ने कहा—'लो भाई सगुन तो बहुत अच्छा मिला कि शिकार सामने आ पहुँचा और चारो तरफ सन्नाटा भी छाया हुआ है। इस समय इसे जरूर गिरफ्तार करना चाहिए, इसके वाद इसी की सूरत वनकर दारोगा के पास पहुँचना और उसे धोखा देना चाहिए।'

"हम दो आदमी थे और सिपाही अकेला था, ऐसी अवस्था मे किसी तरह की चालवाजी की जरूरत न थी, केवल तकरार कर लेना ही काफी था। हुज्जत और तकरार करने के लिए किसी मसाले की जरूरत नही पडती, जरा छेड देना ही काफी होता है। पास आने पर अर्जुनसिंह ने जान-बूझकर उसे धक्का दे दिया और वह भी दारोगा के घमड पर फूला हम लोगो से उलझ पडा। आखिर हम लोगो ने उसे गिरफ्तार कर लिया और वेहोश करके वहाँ से दूर एक सन्नाटे के जगल मे ले जाकर उसकी तलाशी लेने लगे। उसके पास से भूतनाथ के नाम की एक चिट्ठी निकली जो खास दारोगा के हाथ की लिखी हुई थी और जिसमे यह लिखा हुआ था—

'प्यारे भूतनाथ,

कई दिनो से हम तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं। अब ठीक-ठीक वताओ कि कब मुलाकात होगी और कब तक काम हो जाने की उम्मीद है।'

"इस चिट्ठी को पढकर हम दोनो ने सलाह की कि इस आदमी को छोड देना चाहिए और उसके पीछे चलकर देखना चाहिए कि भूतनाथ कहाँ रहता है। उसका पता लग जाने से वहुत काम निकलेगा।

"हम दोनो ने वह चिट्ठी फिर उस आदमी की जेव मे रख दी और उसे उठाकर पुन. सडक पर लाकर डाल दिया जहाँ उसे गिरफ्तार किया था। इसके बाद लखलखा सुँघाकर हम दोनो दूर हटकर आड मे खडे हो गये और देखने लगे कि वह होश मे आकर क्या करता है। उस समय रात आधी से ज्यादा जा चुकी थी।

"होश मे आने के वाद आदमी ताज्जुब और तरद्दुद मे थोडी देर तक इधर-उधर घूमता रहा और इसके वाद आगे की तरफ चल पडा। हम लोग भी आड देते हुए उसके पीछे-पीछे चल पडे।

"आसमान पर सुबह की सुफेदी फैलना ही चाहती थी जब हम लोग एक घने और सुहावने जंगल मे पहुँचे। थोडी देर तक चलकर वह आदमी एक पत्थर की चट्टान पर बैठ गया। मालूम होता था कि थक गया है और कुछ देर तक सुस्ताना चाहता है, मगर ऐसा न था। लाचार हम दोनों भी उसके पास ही आड देकर बैठ रहे और उसी समय पेडो की आड मे से कई आदमियो ने निकलकर हम दोनों को घेर लिया। उन सभी के हाथो मे नंगी तलवारें और चेहरे पर नकाबें पडी हुई थीं।

"विना लडे-भिडे यो ही गिरफ्तार होकर दुःख भोगना हम लोगो को मजूर न था, अस्तु फुर्ती से तलवार खीचकर उन लोगो के मुकावले मे खडे हो गये। उस समय एक ने अपने चेहरे पर से नकाव उलट दी और मेरे पास आकर खडा हो गया। असल मे वह भूतनाथ था जिसका चेहरा सुवह की सुफेदी मे बहुत साफ दिखाई दे रहा था और मालूम होता था कि वह हम दोनो को देखकर मुस्कुरा रहा है।

"भूतनाथ की सूरत देखते ही हम दोनो चौक पडे और मुँह से निकल पडा 'भूतनाथ'। उसी समय मेरी निगाह उस आदमी पर जा पडी जिसके पीछे-पीछे हम लोग वहाँ तक पहुँचे थे, देखा कि दो आदमी खडे-खडे उससे बातें कर रहे और हाथ के इशारे से मेरी तरफ कुछ वता रहे हैं।

"मेरे मुँह से निकली हुई आवाज सुनकर भूतनाथ हँसा और बोला, "हाँ, मैं वास्तव मे भूतनाथ हूं, और आप लोग ?"

मैं—हम दोनो गरीव मुसाफिर हैं।

भूतनाथ—(हँसकर) यद्यपि आप लोगो की तरह भूतनाथ अपनी सूरत नही वदला करता मगर आप लोगो को पहचानने मे किसी तरह की भूल भी नही कर सकता।

मैं—अगर ऐसा है तो आप ही वताइए कि हम लोग कौन है ?

भूतनाथ—आप लोग दलीपशाह और अर्जुनसिंह हैं, जिन्हे मैं कई दिनो से खोज रहा हूँ।

मैं—(ताज्जुव के साथ) ठीक है, जव आपने पहचान ही लिया तो मैं अपने को क्यो छिपाऊँ, मगर यह तो वताइये कि आप मुझे क्यो खोज रहे थे ?

भूतनाथ—इसलिए कि मैं आपसे अपने कसूरो की माफी माँगूं, आरजू-मिन्नत और खुशामद के साथ अपने को आपके पैरो पर डाल दूं और कहूँ कि अगर जी मे आवे तो अपने हाथ से मेरा सिर काट लीजिए मगर एक दफे कह दीजिए कि मैंने तेरा कसूर माफ किया।

मैं—वडे ताज्जुव की बात है कि तुम्हारे दिल मे यह वात कैसे पैदा हुई ? क्या तुम्हारी आँखे खुल गईं और मालूम हो गया कि तुम वहुत वुरे रास्ते पर चल रहे हो ?

भूतनाथ—जी हाँ, मुझे मालूम हो गया है और मैं समझ गया हूँ कि मैं अपने पैर मे आप कुल्हाडी मार रहा हूँ।

मैं—वडी खुशी की बात है अगर तुम सच्चे दिल से कह रहे हो।

भूतनाथ—वेशक मैं सच्चे दिल से कह रहा हूँ और अपने किये पर मुझे वडा अफसोस है।

मैं—भला यह तो बताओ कि तुम्हे किन-किन बातो का अफसोस है ?

भूतनाथ—सो न पूछिए, सिर से पैर तक मैं कसूरवार हो रहा हूँ। एक-दो हो तो गिने जाय, कहाँ तक गिनाऊँ ?

मैं—खैर न सही, अच्छा अब यह बताओ कि मुझसे किस कसूर की माफी चाहते हो ? मेरा तो तुमने कुछ भी नही बिगाडा।

भूतनाथ—यह आपका बडप्पन है जो आप ऐसा कहते हैं। मगर वास्तव मे मैंने

आपका बहुत बडा कसूर किया है। और बातो के अतिरिक्त मैंने आपके सामने आपके लडके को मार डाला है यह कहाँ का

मैं—(बात काटकर) नही नही भूतनाथ! तुम भूलते हो, अथवा तुम्हे मालूम नही है कि तुमने मेरे लडके का खून नही किया, बल्कि अपने लडके का खून किया है।

भूतनाथ—(चौंककर बेचैनी के साथ) यह आप क्या कह रहे है?

मैं—बेशक मैं सच ही कह रहा हूँ। इस काम मे तुमने धोखा खाया और अपने लड़के को अपने हाथ से मार डाला। उन दिनो तुम्हारी स्त्री बीमार होकर मेरे यहाँ ईई हुई थी और अपनी आँखो से तुम्हारी इस कार्रवाई को देख रही थी।

भूतनाथ—(घबराहट के साथ) तो क्या अब भी मेरी स्त्री आप ही के मकान मे है?

मैं—नही वह मर गई क्योकि बीमारी मे वह इस दु ख को बर्दाश्त न कर सकी।

भूतनाथ—(कुछ देर चुप रहने और सोचने के बाद) नही-नही, वह बात नही है। ऐसा मालूम होता है कि तुमने खुद मेरे लडके को मारकर अपने लडके का बदला चुकाया।

अर्जुनसिह—नही-नही भूतनाथ, वास्तव मे तुमने खुद अपने लडके को मारा है और मैं इस बात को खूब जानता हूँ।

भूतनाथ—(भारी आवाज मे) खैर अगर मैंने अपने लडके का खून किया है तब भी दलीपशाह का कसूरवार हूँ। इसके अतिरिक्त और भी कई कसूर मुझसे हुए हैं, अच्छा हुआ कि मेरी स्त्री मर गई नही तो उसके सामने

मैं—मगर हरनामसिह और कमला को ईश्वर कुशलपूर्वक रखें।

भूतनाथ—(लम्बी साँस लेकर) बेशक भूतनाथ बडा ही बदनसीब है।

मैं—अब भी सम्हल जाओ तो कोई चिन्ता नही।

भूतनाथ—बेशक मैं अपने को सम्हालूँगा और जो कुछ आप कहेगे वही करूँगा। अच्छा मुझे थोडी देर के लिए आज्ञा दीजिए तो मैं उस आदमी से दो बातें कर आऊँ जिसके पीछे आप यहाँ तक आए है।

"इतना कहकर भूतनाथ उस आदमी के पास चला गया मगर उसके साथी लोग हमे घेरे खडे ही रहे। इस समय मेरे दिल का विचित्र ही हाल था। मैं निश्चय नही कर सकता था कि भूतनाथ की बातें किस ढग पर जा रही है और इसका नतीजा क्या होगा, तथापि मैं इस बात के लिए तैयार था कि जिस तरह भीहो सके मेहनत करके भूतनाथ को अच्छे ढर्रे पर ले जाऊँगा। मगर मैं वास्तव मैं ठगा गया और जो कुछ सोचता था वह मेरी नादानी थी।

"उस आदमी से बातचीत करने मे भूतनाथ ने बहुत देर की और उसे झटपट बिदा करके वह पुन मेरे पास आकर बोला, कम्बख्त दारोगा मुझसे चालबाजी करता है और मेरे ही हाथो से मेरे दोस्तो को गिरफ्तार कराना चाहता है।"

मैं—दारोगा बडा ही शैतान है और उसके फेर मे पडकर तुम बर्बाद हो जाओगे। अच्छा अब हम लोग भी बिदा होना चाहते है। यह बताओ कि तुममे किस तरह की

उम्मीद अपने साथ लेते जायँ ?

भूतनाथ—मुझसे आप हर तरह की उम्मीद कर सकते है। जो आप कहेंगे मैं वही करूँगा बल्कि आपके घर चलूँगा।

मैं—अगर ऐसा करो तो मेरी खुशी का कोई ठिकाना न रहे।

भूतनाथ—बेशक मैं ऐसा ही करूँगा मगर पहले आप यह बता दें कि आपने मेरा कसूर माफ किया या नही ?

मै—हाँ, मैंने माफ किया।

भूतनाथ—अच्छा तो अब मेरे डेरे पर चलिये।

मैं—तुम्हारा डेरा कहाँ पर है ?

भूतनाथ—यहाँ से थोडी ही दूर पर।

मै—खैर, चलो मै तैयार हूँ, मगर पहले इस बात का वायदा कर दो कि लौटते समय मेरे साथ चलोगे।

भूतनाथ—जरूर चलूँगा।

"कहकर भूतनाथ चल पडा हम दोनो भी उसके पीछे-पीछे रवाना हुए।

"आप लोग खयाल करते होगे कि भूतनाथ ने हम दोनो को उसी जगह क्यो नही गिरफ्तार कर लिया मगर यह बात भूतनाथ के किए नही हो सकती थी। यद्यपि उसके साथ कई सिपाही या नौकर भी मौजूद थे मगर फिर भी वह इस बात को खूब समझता था कि इस खुले मैदान मे दलीपशाह और अर्जुनसिंह को एक साथ गिरफ्तार कर लेना उसकी सामर्थ्य के बाहर है। साथ ही इसके यह भी कह देना जरूरी है कि उस समय तक भूतनाथ को इस बात की खबर न थी उसके बटुए को चुरा लेने वाला यही अर्जुनसिंह है। उस समय तक क्या बल्कि अब तक भूतनाथ को इस बात की खबर न थी। उस दिन जब स्वय अर्जुनसिंह ने अपनी जुबान से कहा तब मालूम हुआ।

"कोस-भर से ज्यादा हम लोग भूतनाथ के पीछे-पीछे चले गये और इसके बाद एक भयानक सुनसान और उजाड घाटी मे पहुँचे जो दो पहाडियो के बीच मे थी। वहाँ से कुछ दूर तक घूम-घुमौवे रास्ते पर चलकर भूतनाथ के डेरे पर पहुँचे। वह एक ऐसा स्थान था जहाँ किसी मुसाफिर का पहुँचना कठिन ही नही, बल्कि असम्भव था। जिस खोह मे भूतनाथ का डेरा था वह बहुत बडी और बीस-पचीस आदमियो के रहने लायक थी और वास्तव मे इतने ही आदमियो साथ वह वहाँ रहता था।

"वहाँ भूतनाथ ने हम दोनो की बडी खातिर की और बार-बार आजिजी करता और माफी मांगता रहा। खाने-पीने का सब सामान वहाँ मौजूद था, अत इशारा पाकर भूतनाथ के आदमियो ने तरह-तरह का खाना बनाना आरम्भ कर दिया और कई आदमी नहाने-धोने का सामान दुरुस्त करने लगे।"

"हम दोनो बहुत प्रसन्न थे और समझते थे कि अब भूतनाथ ठीक रास्ते पर आ जायेगा, अत हम लोग जब तक सन्ध्या-पूजन से निश्चिन्त हुए, तब तक भोजन भी तैयार हुआ और बेफिक्री के साथ हम तीनो आदमियो ने एक साथ भोजन किया। इसके बाद निश्चिन्ती में बैठकर बातचीत करने लगे।

भूतनाथ—दिलीपशाह, मुझे इस बात का दु:ख है कि मेरी स्त्री का देहान्त हो गया और मेरे हाथ से एक बहुत ही बुरा काम हो गया।

मैं—बेशक, अफसोस की जगह है, मगर खैर, जो कुछ होना था हो गया, अब तुम घर पर चलो और नेकनीयती के साथ दुनिया मे काम करो।

भूतनाथ—ठीक है, मगर मैं यह सोचता हूँ कि अब घर पर जाने से फायदा ही क्या है? मेरी स्त्री मर गई और अब दूसरी शादी मैं कर ही नही सकता, फिर किस सुख के लिए शहर मे चलकर बसूं?

मैं—हरनामसिंह और कमला का भी तो कुछ ख्याल करना चाहिये। इसके अतिरिक्त क्या विधुर लोग शहर मे रहकर नेकनीयती के साथ रोजगार नही करते?

भूतनाथ—कमला और हरनामसिंह होशियार हैं और एक अच्छे रईस के यहाँ परवरिश पा रहे हैं, इसके अतिरिक्त किशोरी उन दोनो की ही सहायक है, अतएव उनके लिए मुझे किसी तरह की चिन्ता नही है। बाकी रही आपकी दूसरी बात, उसका जवाब यह हो सकता है कि शहर मे नेकनीयती के साथ अब मैं कर ही क्या सकता हूँ, क्योकि मैं तो किसी को मुँह दिखलाने लायक ही नही रहा। एक दयाराम वाली वारदात ने मुझे बेकाम कर ही दिया था, दूसरे इस लडके के खून ने मुझे और भी बर्बाद और बेकाम कर दिया। अब मैं कौन-सा मुंह लेकर भले आदमियो मे बैठूंगा?

मैं—ठीक है, मगर इन दोनो मामलो की खबर हम लोग या दो-तीन खास-खास आदमियो के सिवाय और किसी को नही है और हम लोग तुम्हारे साथ कदापि बुराई नहीं कर सकते।

भूतनाथ—तुम्हारी इन बातो पर मुझे विश्वास नही हो सकता, क्योकि मैं इस बात को खूब जानता हूँ कि आजकल तुम मेरे साथ दुश्मनी का वर्ताव कर रहे हो और मुझे दारोगा के हाथ मे फँसाना चाहते हो, ऐसी अवस्था मे तुमने मेरा भेद जरूर कई आदमियो से कह दिया होगा।

मैं—नही भूतनाथ, यह तुम्हारी भूल है कि तुम ऐसा सोच रहे हो! मैंने तुम्हारा भेद किसी को नही कहा और न मैं तुम्हे दारोगा के हवाले करना चाहता हूँ। बेशक, दारोगा ने मुझे इस काम के लिए लिखा था, मगर मैंने इस बारे मे उसे धोखा दिया। दारोगा के हाथ की लिखी चिट्ठियाँ मेरे पास मौजूद हैं, घर चलकर मै तुम्हे दिखाऊँगा, और उनसे तुम्हें मेरी बातो का पूरा सबूत मिल जायेगा।

"इसी समय बात करते-करते मुझे कुछ नशा मालूम हुआ और मेरे दिल मे एक प्रकार का खुटका हो गया। मैंने घूमकर अर्जुनसिंह की तरफ देखा तो उनकी भी आँखें लाल अंगारे की तरह दिखाई पडी। उसी समय भूतनाथ मेरे पास से उठकर दूर जा बैठा और बोला—

भूतनाथ—जब मैं तुम्हारे घर जाऊँगा, तब मुझे इस बात का सबूत मिलेगा, मगर मैं इसी समय तुम्हें इस बात का सबूत दे सकता हूँ कि तुम मेरे साथ दुश्मनी कर रहे हो।

"इतना कहकर भूतनाथ ने अपनी जेब से निकालकर मेरे हाथ की लिखी वे

चिट्ठियाँ मेरे सामने फेक दी, जो मैंने दारोगा को लिखी थी और जिनमे भूतनाथ के गिरफ्तार करा देने का वादा किया था।"

"मैं सरकार मे बयान कर चुका हूँ, कि उस समय दारोगा से इस ढग का पत्र-व्यवहार करने से मेरा मतलब क्या था और मैंने भूतनाथ को दिखाने के लिए दारोगा के हाथ की चिट्ठियाँ बटोरकर किस तरह दारोगा से साफ इनकार कर दिया था, मगर उस मौके पर मेरे पास वे चिट्ठियाँ मौजूद न थी कि मैं उन्हे भूतनाथ को दिखाता और भूतनाथ के पास वे चिट्ठियाँ मौजूद थी जो दारोगा ने उसे दी थी और जिनके सबब से दारोगा का मन्त्र चला था।" अत उन चिट्ठियो को देखकर मैंने भूतनाथ से कहा—

मैं—हाँ-हाँ, इन चिट्ठियो को मैं जानता हूं और बेशक ये मेरे हाथ की लिखी हुई है, मगर मेरे इस लिखने का मतलब क्या था और इन चिट्ठियो से मैंने क्या काम निकाला सो तुम्हे मालूम नही हो सकता, जब तक कि बस, दारोगा के हाथ की लिखी हुई चिट्ठियाँ तुम न पढ लो, जो मेरे पास मौजूद है।

भूतनाथ—(मुस्कराकर) बस-बस-बस, ये सब धोखेबाजी के ढर्रे रहने दीजिए। भूतनाथ से यह चालाकी न चलेगी, सच तो यह है कि मैं खुद कई दिनो से तुम्हारी खोज मे हूँ। इत्तिफाक से तुम स्वय मेरे पजे मे आकर फँस गये और अब किसी तरह नही निकल सकते। उस जगल मे मैं तुम दोनो को काबू मे नही कर सकता था, इसलिए सब्जबाग दिखाता हुआ यहाँ तक ले आया और भोजन मे बेहोशी की दवा खिलाकर बेकाम कर दिया। अब तुम लोग मेरा कुछ भी नही कर सकते। समझ लो कि तुम दोनो जहन्नुम मे भेजे जाओगे, जहाँ से लौटकर आना मुश्किल है।

"भूतनाथ की ऐसी बातें सुनकर हम दोनो को क्रोध चढ आया, मगर उठने की कोशिश करने पर कुछ भी न कर सके, क्योकि नशे का पूरा-पूरा असर हो गया था और तमाम बदन मे कमजोरी आ गई थी।"

"थोडी ही देर बाद हम लोग बेहोश हो गये और तन-बदन की सुध न रही। जब आँखें खुली, तो अपने को दारोगा के मकान मे कैद पाया और सामने दारोगा जयपाल हरनामसिंह और बिहारीसिंह को बैठे हुए देखा। रात का समय था और मेरे हाथ-पैर एक खम्भे के साथ बँधे हुए थे। अर्जुनसिंह न मालूम कहाँ थे और उन पर न जाने क्या बीत रही थी।"

"दारोगा ने मुझसे कहा—कहो, दिलीपशाह, तुमने तो मुझ पर बडा भारी जाल फैलाया था, मगर नतीजा कुछ नही निकला।"

मैं—मैंने क्या जाल फैलाया था ?

दारोगा—क्या इसके कहने की भी जरूरत है ? नही, बस, इस समय हम इतना ही कहेंगे कि तुम्हारा शागिर्द हमारी कैद में है और तुमने मेरे लिए जो कुछ किया है, उसका हाल हम उसकी जुबानी सुन चुके हैं। अब अगर वह चिट्ठी मुझे दे दो जो गोपालसिंह के बारे मे मनोरमा का नाम लेकर जबरदस्ती मुझसे लिखवाई गई थी तो मैं तुम्हारा सब कसूर माफ कर दूं।

मैं—मेरी समझ मे नही आता आप किस चिट्ठी के बारे मे मुझसे कह रहे है।

दारोगा—(चिढ़कर) ठीक है, मैं पहले ही समझे हुए था कि तुम बिना लात खाये नाक पर मक्खी नही बैठने दोगे। खैर, देखो, मैं तुम्हारी क्या दुर्दशा करता हूँ।

"इतना कहकर दारोगा ने मुझे सताना शुरू किया। मैं नही कह सकता कि इसने मुझे किस-किस तरह की तकलीफें दी और सो भी एक-दो दिन तक नही, बल्कि महीने भर तक, इसके बाद बेहोश करके मुझे तिलिस्म के अन्दर पहुँचा दिया। जब मैं होश मे आया तो अपने सामने अर्जुनसिंह और गिरिजाकुमार को बैठे हुए पाया। बस, यही तो मेरा क़िस्सा है और यही मेरा बयान।"

दिलीपशाह का हाल सुनकर सबको बडा ही दुःख हुआ और सभी कोई लाल-लाल आँखें करके दारोगा तथा जयपाल वगैरह की तरफ देखने लगे। दरबार बर्खास्त करने का इशारा करके महाराज उठ खडे हुए, कैदी जेलखाने मे भेज दिए गए और बाकी सब अपने डेरो की तरफ रवाना हुए।

4

रात आधी से ज्यादा जा चुकी है। महाराज सुरेन्द्रसिंह के कमरे मे राजा वीरेन्द्रसिंह, राजा गोपालसिंह, कुँअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, तारासिंह, भैरोंसिंह, भूतनाथ और इन्द्रदेव बैठे आपस मे धीरे-धीरे बातें कर रहे हैं। वृद्ध महाराज, सुरेन्द्रसिंह मसहरी पर लेटे हुए है।

सुरेन्द्रसिंह—दिलीपशाह की जीवनी ने दारोगा की शैतानी और भी अच्छी तरह से झलका दी है।

जीतसिंह—बेशक ऐसा ही है। सच तो यह है कि ईश्वर ही ने पाँचो कैदियों की रक्षा की, नही तो दारोगा ने कोई बात उठा नही रखी थी।

भूतनाथ—साथ ही इसके यह भी है कि सबसे ज्यादा दिलीपशाह के किस्से ने दरबार मे मुझे शर्मिन्दा किया, मगर क्या करूँ लाचार था कि चालबाज दारोगा ने दिलीपशाह की चिट्ठियो का मुझे ऐसा मतलब समझाया कि मैं अपने आपे से बाहर हो गया, बल्कि यह कहना चाहिए कि अन्धा हो गया।

तेजसिंह—वह जमाना ही चालबाजियो का था और चारो तरफ ऐसी ही बातें हो रही थीं। भूतनाथ, तुम अब उन बातो को एकदम से भूल जाओ और जिस नेक रास्ते पर चल रहे हो, उसी का ध्यान रखो।

जीतसिंह—अच्छा, तो अब कैदियो के बारे मे जो कुछ हो फैसला कर ही देना चाहिये, जिसमे अगले दरबार मे उन्हें हुक्म सुना दिया जाये।

सुरेन्द्रसिंह—(गोपालसिंह से) कहो साहब, तुम्हारी क्या राय है, किस-किस कैदी को क्या-क्या सजा देनी चाहिए?

गोपालसिंह—जो दादाजी (महाराज) की इच्छा हो, हुक्म दें। मेरी प्रार्थना केवल इतनी ही है कि कम्बख्त दारोगा मेरे हवाले किया जाये और मुझे हुक्म हो जाये कि जो

मैं चाहूं, उसे सजा दूं।

सुरेन्द्रसिंह—केवल दारोगा ही नही, वल्कि तुम्हारे और कैदी भी तुम्हारे हवाले किये जायेंगे।

गोपालसिंह—और दिलीपशाह, अर्जुनसिंह, भरतसिंह, हरदीन और गिरिजाकुमार भी मुझे दे दिए जायें, क्योंकि ये सवलोग मेरे सहायक है और इनके साथ रहकर मेरा दिन वडी खुशी के साथ वीतेगा।

सुरेन्द्रसिंह—(जीतसिंह से) ऐसा ही किया जाये।

जीतसिंह—वहुत अच्छा, मैं नम्बरवार कैदियो के वारे मे जो कुछ हुक्म होता है, लिखता जाता हूं।

इतना कहकर जीतसिंह ने कलम-दवात और कागज ले लिया और महाराज की आज्ञानुसार इस तरह लिखने लगे—

(1) कम्वस्त दारोगा को सजा पाने के लिए राजा गोपालसिंह के हवाले किया जाये। राजा साहव जो मुनासिव समझें उसे सजा दें।

(2) शिखण्डी (दारोगा का चचेरा भाई) मायाप्रसाद, जयपाल, हरनामसिंह, विहारीसिंह, हरनामसिंह की लडकी, लीला, मनोरमा, नागर, वेगम, नौरतन और जमालो वगैरह भी जिन्हें जमानिया से घना सम्वन्ध है, राजा गोपालसिंह के हवाले कर दिए जायें।

(3) वेगम के घर से निकली हुई दौलत, जो काशिराज ने यहां भिजवा दी है, वलभद्रसिंह को दे दी जाये।

(4) गौहर और गिल्सन शेरअलीखां के पास भेज दी जायें।

(5) किशोरी से पूछकर भीमसेन को छोड दिया जाये और उसे पुन शिवदत्त की गद्दी पर विठाया जाये।

(6) कुवेरसिंह, वाकरअली, अजायवसिंह, खुदावख्श, यारअली, धरमसिंह, गोविन्दसिंह, भवगनिया, ललिता और धन्नूसिंह, तथा वे कैदी जो कमलिनी के तालाव वाले मकान से आये थे, सव जन्म-भर के लिए कैदखाने मे भेज दिए जायें, इसके अतिरिक्त और जो भी कोई कैदी हो, (नानक इत्यादि) कैदखाने भेज दिए जाये।

(7) दिलीपशाह, अर्जुनसिंह, हरदीन, भरतसिंह और गिरिजाकुमार को राजा गोपालसिंह ले जायें और इन सवको वडी खातिर और आराम के साथ रखें।

कैदियो के विपय मे इस तरह का हुक्म देकर महाराज चुप हो गये और फिर आपस मे दूसरे ढग की वातें होने लगीं। थोडी देर के वाद दरवार वर्खास्त हुआ और सव लोग अपने-अपने ठिकाने चले गये।

5

कुंअर इन्द्रजीतसिंह इस छोटे-से दरवार से उठकर महल मे गये और किशोरी के

कमरे मे पहुँचे। इस समय कमलिनी भी उसी कमरे मे मौजूद किशोरी से हँसी-खुशी की बातें कर रही थी। कुमार को देखकर दोनो उठ खडी हुईं और जब हँसते हुए कुमार बैठ गये तो किशोरी भी उनके साथ बैठ गई, मगर कमलिनी कमरे के बाहर की तरफ चल पडी। उस समय कुमार ने उसे रोका और कहा, "तुम कहाँ चलीं ? बैठो-बैठो इतनी जल्दी क्या है ?"

कमलिनी—(बैठती हुई)बहुत अच्छा, बैठती हूँ, मगर क्या आज रात को सोना है ?

कुमार—क्या यह बात मेरे आने के पहले नही सूझी थी ?

किशोरी—आपको देखकर सोना याद आ गया।

किशोरी की बात ने दोनो को हँसा दिया और फिर कमलिनी ने कहा—

कमलिनी—दिलीपशाह के किस्से ने मेरे दिल पर ऐसा असर किया है कि कह नही सकती। देखना चाहिये, दुष्टो को महाराज क्या सजा देते है। सच तो यह है कि उनके लिए कोई सजा है ही नही।

कुमार—तुम ठीक कहती हो, इस समय मैं महाराज के पास से ही चला आता हूँ, वहाँ एक छोटा-सा निजी दरबार लगा हुआ था और कैदियो के ही विषय मे बातचीत हो रही थी, बल्कि यह कहना चाहिये कि आज उन बदमाशो का फैसला लिखा जा रहा था।

कमलिनी—(उत्कण्ठा से)हाँ ! अच्छा, बताइए तो सही दारोगा और जयपाल के लिए क्या सजा तजवीज की गई ?

कुमार—उन्हे क्या सजा दी जायेगी, इसका निश्चय गोपाल भाई करेंगे, क्योकि महाराज ने इस समय यही हुक्म लिखाया है कि दारोगा, जयपाल, शिखण्डी, हरनाम, बिहारी, मनोरमा और नागर वगैरह जितने जमानिया और गोपाल भाई से सम्बन्ध रखने वाले कैदी हैं, सब उनके हवाले किये जायें और वे जो कुछ मुनासिब समझे उन्हें सजा दें।

कमलिनी—चलिए, यह भी अच्छा ही हुआ, क्योकि मुझे इस बात का बहुत बडा खयाल बना हुआ था कि हमारे रहम-दिल महाराज इन कैदियो के लिए कोई अच्छी सजा नही, तजवीज कर सकेंगे, अगर वे लोग जीजाजी के सुपुर्द किए गए हैं तो उन्हे सजा भी वाजिब ही मिल जायेगी।

कुमार—(हँसकर)अच्छा, तुम ही बताओ कि अगर सजा देने के लिये सब कैदी तुम्हारे सुपुर्द किये जाते तो तुम उन्हे क्या सजा देती ?

कमलिनी—मै ?(कुछ सोचकर)मैं पहले तो इन सबके हाथ-पैर कटवा डालती, फिर इनके जख्म आराम करवाकर बडे-बडे लोहे के पिंजडो मे इन्हें बन्द करके और सदर चौमुहानी पर लटकाकर हुक्म देती कि जितने आदमी इस राह से जायें वे सब इनके मुँह पर थूककर तब आगे बढे।

कुमार—(मुस्कराकर) सजा तो बहुत अच्छी सोची है। तो बस, अपने जीजा साहब को समझा देना कि उन्हे ऐसी ही सजा दें।

कमलिनी—जरूर कहूँगी, बल्कि इस बात पर जोर भी दूँगी। अब यह बताइए कि नानक के लिए क्या हुक्म हुआ है?

कुमार—केवल इतना ही, जन्म-भर के लिए कैदखाने भेज दिया जाये। बाकी के और कैदियो के लिए भी यही हुक्म हुआ!

किशोरी—भीमसेन के लिए भी यही हुक्म हुआ होगा?

कुमार—नही, उसके लिए दूसरा ही हुक्म हुआ।

किशोरी—वह क्या?

कुमार—वह तुम्हारा भाई है, इसलिए हुक्म हुआ कि तुमसे पूछकर वह एकदम छोड दिया जाये, बल्कि शिवदत्तगढ की गद्दी पर बैठा दिया जाये।

किशोरी—जब उसे छोड देने का ही हुक्म हुआ तो मुझसे पूछना कैसा!

कुमार—यही कि शायद तुम उसे छोडना न चाहो, तो कैद मे ही रखा जाये।

किशोरी—भला मैं इस बात को कब पसन्द करूँगी कि मेरा भाई जन्म-भर के लिये कैद रहे? मगर हाँ, इतना खयाल जरूर है कि कही वह छूटने के बाद पुन आपसे दुश्मनी न करे।

कुमार—खैर, अगर पुन बदमाशी करेगा तो देखा जायेगा।

कमलिनी—(मुस्कराती हुई) उसके विषय मे चपला चाची से पूछना चाहिये, क्योकि वह असल मे उन्हीं का कैदी है। जब सूअर के शिकार मे उन्होने उसे गिरफ्तार किया था[1], तो तरह-तरह की कसमे खिलाकर छोडा था कि भविष्य मे पुन दुश्मनी पर कमर न बाँधेगा।

कुमार—बात तो ऐसी ही थी, मगर नही अब वह दुश्मनी का बर्ताव न करेगा। (किशोरी से) अगर कहो, तो तुम्हारे पास उसे बुलवाऊँ? जो कुछ तुम्हे कहना-सुनना हो, कह सुन लो।

किशोरी—नही-नहीं, मैं बाज आई, मै स्वप्न मे भी उससे नही मिलना चाहती, जो कुछ उसकी किस्मत मे लिखा होगा, सो भोगेगा।

कुमार—आखिर, उसे छोडने के विषय मे तुमसे पूछा जायेगा, तो क्या जवाब दोगी?

किशोरी—(कमलिनी की तरफ देखकर और मुस्कराकर) बस, कह दूँगी कि मेरे बदले चपला चाची से पूछ लिया जाये, क्योकि वह उन्ही का कैदी है।

कुमार—खैर, इन बातो को जाने दो। (कमलिनी से) जमानिया तिलिस्म के अन्दर मायारानी और माधवी के मरने का सबब मुझे अभी तक मालूम न हुआ। इसका पता न लगा कि वे दोनो खुद मर गईं, या गोपाल भाई ने उन्हें मार डाला! और अगर भाई साहब ने ही उन्हे मार डाला तो ऐसा क्यो किया?

कमलिनी—इसका असल हाल तो मुझे भी मालूम नही है, मैंने दो दफे जीजाजी से इस विषय मे पूछा था, मगर वह बात टालकर बतोला दे गये।

---

1 देखिए चन्द्रकान्ता सन्तति पहला भाग, आठवाँ बयान।

कुमार—मैंने भी एक दफे उनसे पूछा था, तो यह कहकर रह गए कि फिर कभी बता देंगे।

किशोरी—बहिन लक्ष्मीदेवी को इसका हाल जरूर मालूम होगा।

कमलिनी—उन्हे बेशक मालूम होगा। उन्होंने भुलावा देकर जरूर पूछ लिया होगा। इस समय तो वे अपने रगमहल मे होगी, नही तो मैं जरूर बुला लाती।

कुमार—नही, आज तो अकेली ही अपने कमरे मे बैठी होगी, क्योकि इस समय गोपाल भाई इन्द्रदेव को साथ लेकर कही बाहर गये हैं। मुझसे कह गये हैं कि कल पहर-दिन तक आयेंगे।

कमलिनी—तब तो कहिये मैं जाकर बुला लाऊँ !

कुमार—अच्छा जाओ।

कमलिनी उठकर चली गई और थोडी ही देर मे लक्ष्मीदेवी को साथ लिए हुए आ पहुँची।

लक्ष्मी—(मुस्कराती हुई)कहिये क्या है, जो इतनी रात गये मेरी याद आई है ?

कुमार—मैंने सोचा कि आज आप अकेली उदास बैठी होगी, अतएव मैं ही बुलाकर आपका दिल खुश करूँ।

लक्ष्मी—(हँसकर)क्या बात है ! बेशक आपकी मेहरबानी मुझ पर बहुत ज्यादा रहती है। (बैठकर) यह बताइये कि आप लोगो मे किसी तरह की हुज्जत-तकरार तो नही हुई है जो मुझे फैसला करने के लिए बुलाया है ?

कुमार—ईश्वर न करे ऐसा हो, हाँ, इतना जरूर है कि माधवी और मायारानी की मौत के विषय मे तरह-तरह की बातें हो रही हैं, क्योकि उन दोनो के मरने का असल हाल तो किसी को मालूम नही है और न भाई साहब ने पूछने पर किसी को बताया ही, इसलिए आपको तकलीफ दी है, क्योकि मुझे पूरा विश्वास है कि आपने किसी-न-किसी तरह यह हाल जरूर पूछ लिया होगा।

लक्ष्मी—(मुस्कराकर)बेशक, बात तो ऐसी ही है, मैंने जिद करके किसी-न-किसी तरह उनसे पूछ तो लिया, मगर सुनने से घृणा हो गई। इसीलिए वे भी यह हाल किसी से खुलकर नहीं कहते और समझते हैं कि जो कोई सुनेगा, उसी को घृणा होगी। इसी खयाल से आपको भी उन्होंने टाल दिया होगा।

कुमार—आखिर, उसमे क्या बात है, कुछ भी तो बताओ !

लक्ष्मी—माधवी को तो उन्होंने नही मारा, मगर मायारानी को जरूर मारा, और इस बेइज्जती और तकलीफ से मारा कि सुनने से रोगटे खडे होते हैं। यद्यपि माधवी को उन्होने कुछ भी नहीं कहा, मगर मायारानी की मौत की कार्रवाई वह देख न सकी, जो उसके सामने की जाती थी और उसी डर से वह बेहोश होकर मर गई। इसमें कोई ऐसी अनूठी बात नहीं है, जो सुनने लायक हो। मुझे वह हाल बयान करते, भी लज्जा और घृणा होती है, अत —

कुमार—बस-बस, मैं समझ गया, इससे ज्यादा सुनने की मुझे कोई जरूरत नही है. केवल इतना ही जानना था कि उनकी मौत के विषय मे कोई अनूठी बात तो नही हुई।

लक्ष्मी—जी नही। अच्छा, यह तो बताइए कि कल कैदी लोगो के विषय मे क्या किया जायेगा? दिलीपशाह का किस्सा तो समाप्त हो गया और अब कोई ऐसी बात मालूम करने के लायक भी नही रह गई है।

कुमार—कैदियो का मामला तो कब का साफ हो गया, इस समय तो महाराज ने उनके विषय मे हुक्म भी लिखा दिया है, जो कल या परसो तक दरबार मे सबको सुना दिया जायेगा।

लक्ष्मी—किस-किसके लिए क्या हुक्म हुआ है?

इसके जवाब मे कुमार ने फैसले का सब हाल बयान किया, जो थोडी देर पहले किशोरी और कमलिनी को सुना चुके थे।

लक्ष्मी—बहुत अच्छा फैसला हुआ है।

किशोरी—(हँसकर)क्यो न कहोगी। तुम्हारे दुश्मन तुम्हारे कब्जे मे दे दिए गए, अब तो दिल खोलकर बदला लोगी।

लक्ष्मी—बेशक! (कुमार से) हाँ, यह तो बताइए कि भूतनाथ ने अपनी जीवनी लिखकर दे दी या नही?

कुमार—नही, आज देने वाला है।

लक्ष्मी—और हम लोगो को उस तिलिस्मी मकान का तमाशा कब दिखाया जायेगा जिसमे लोग हँसते-हँसते कूद पडते है?

कुमार—परसो या कल उसका भेद भी सब पर खुल जायेगा।

लक्ष्मी—अच्छा, यह बताइए कि आपके भाई साहब कहाँ गये है?

किशोरी—(हँसकर, ताने के ढग पर) आखिर रहा न गया! पूछे बिना जी नहीं माना।

इतने मे ही बाहर की तरफ से आवाज आई, "इसमे भी क्या किसी का इजारा है? ये अपनी चीज की खबरदारी करती हैं किसी दूसरे की जमा नही छीनती! बहुत दिनो के बाद जो खोई चीज मिलती है, उसके लिए अकारण पुन खो जाने का खटका बना ही रहता है, इसलिए अगर उन्होने पूछा तो बुरा ही क्या किया!"

इस आवाज के साथ-ही-साथ कमला पर सबकी निगाह पडी, जो मुस्कराती हुई कमरे के अन्दर आ रही थी।

किशोरी—(हँसती हुई)यह आई लक्ष्मीबहिन की तरफदार बीबी नक्को, तुमको यहाँ किसने बुलाया था?

कमला—(मुस्कराती हुई) बुलायेगा कौन? क्या मेरा रास्ता देखा हुआ नही है? यह बताओ कि तुम लोग इस आधी रात के समय इतना शोर-गुल क्यो मचा रहे हो?

किशोरी—(मसखरेपन के साथ हाथ जोडकर) जी, हम लोगो को इस बात की खबर न थी कि इस शोर-गुल से आपकी नीद उचट जायेगी और फिर सादी चारपाई पर पडे रहना मुश्किल हो जायेगा।

कुमार--यह कहो कि अकेले जी नही लगता, लोगो को खोजती-फिरती हूँ।

कमला—जी हाँ, आप ही को खोज रही थी।

कुमार—अच्छा, तो फिर आओ, बैठ जाओ, और समझ लो कि मैं मिल गया।

कमला—(बैठकर किशोरी से) आज तुम्हे कोई आराम न करने देगा। (कुमार से) कहिए, दिलीपशाह का किस्सा तो खत्म हो गया। अब कैदियो को कब सजा दी जायेगी ?

कुमार—कैदियो का फैसला हो गया, उसमे किसी को ऐसी सजा नही दी गई जो तुम्हारी पसन्द हो।

इतना कहकर कुमार ने पुन सब हाल बयान किया।

कमला – तो मैं बहिन लक्ष्मीदेवी के साथ जरूर जमानिया जाऊँगी और दारोगा वगैरह की दुर्दशा अपनी आँखो से देखूँगी।

थोडी देर तक इसी तरह की हँसी-दिल्लगी होती रही, इसके बाद लक्ष्मीदेवी और कमला अपने-अपने ठिकाने चली गईं।

6

सुबह की सफेदी आसमान पर फैलना ही चाहती है और इस समय की दक्षिणी हवा जगली पेडो, पौधों लताओ और पत्तो से हाथापाई करती हुई मैदान की तरफ दौडी जाती है। ऐसे समय मे भूतनाथ और देवीसिंह हाथ-मे-हाथ दिए जगल के किनारे-किनारे मैदान मे टहलते धीरे-धीरे हँसी-दिल्लगी की बातें करते जाते है।

देवीसिंह—भूतनाथ, लो, इस समय एक नई और मजेदार बात तुम्हें सुनाते हैं।

भूतनाथ—वह क्या ?

देवीसिंह—फायदे की बात है, अगर तुम कोशिश करोगे तो लाख-दो-लाख रुपया मिल जाएगा।

भूतनाथ—ऐसा कौन-सा उद्योग है, जिसके करने से सहज ही इतनी बडी रकम हाथ लग जायेगी ? और अगर इस बात को तुम जानते ही हो, तो खुद क्यों नही उद्योग करते ?

देवीसिंह—मै भी उद्योग करूँगा, मगर कोई जरूरी बात नही है कि जिसका जी चाहे उद्योग करके लाख-दो-लाख पा जाये, हाँ, जिसका भाग्य लड जायेगा और जिसकी अक्ल काम कर जायेगी, वह बेशक अमीर हो जायेगा। मैं जानता हूँ कि हम लोगो मे तुम्हारी तबीयत बड़ी तेज है और तुम्हे बहुत दूर की सूझा करती है, इसलिए कहता हूँ कि अगर तुम उद्योग करोगे तो लाख-दो-लाख रुपया पा जाओगे। यद्यपि हम लोग सदा ही अमीर बने रहते हैं और रुपये-पैसे की कुछ परवाह नही करते, मगर फिर भी यह रकम थोड़ी नही है, और तिस पर बाजी के ढंग पर जीतना ठहरा, इसलिए ऐसी रकम पाने की खुशी होती है।

भूतनाथ—आखिर बात क्या है, पर कुछ कहो भी तो सही।

देवीसिंह—बात यही है कि उधर जो तिलिस्मी मकान बनाया गया है, जिसके

अन्दर लोग हँसते-हँसते कूद पडते है, उसके विषय मे महाराज ने रात को हुक्म दिया है कि तिलिस्मी मकान के ऊपर सर्वसाधारण लोग तो चढ चुके और किसी को कामयाबी नही हुई, अब कल हमारे ऐयार लोग उस पर चढकर अपनी अक्ल का नमूना दिखायें और उनके लिए इनाम भी दूना कर दिया जाये, मगर इस काम मे चार आदमी शरीक न किये जाएँ—एक जीतसिंहजी, दूसरे तेजसिंह, तीसरे भैरोसिंह, चौथे तारासिंह !

भूतनाथ—बात तो बहुत अच्छी हुई, कई दिनो से मेरे दिल मे गुदगुदी हो रही थी किसी तरह इस मकान के ऊपर चढना चाहिए, मगर महाराज की आज्ञा बिना ऐसा कब कर सकता था। मगर यह तो कहो कि उन चारो के लिए मनाही क्यो कर दी गई ?

देवीसिंह—इसलिए कि उन्हे इसका भेद मालूम है।

भूतनाथ—यो तो तुमको भी कुछ-न-कुछ भेद मालूम ही होगा, क्योकि एक दफे तुम भी ऐसे ही मकान के अन्दर जा चुके हो, जब शेरसिंह भी तुम्हारे साथ थे।

देवीसिंह—ठीक है, मगर इससे क्या असल भेद का पता लग सकता है ? अगर ऐसा ही हो, तो इस जलसे मे हजारो आदमी उस मकान के अन्दर गये होगे, किसी को दोहराकर जाने की मनाही तो नही थी, कोई पुन जाकर जरूर बाजी जीत ही लेता।

भूतनाथ—आखिर उसमे क्या है ?

देवीसिंह—सो मुझे नही मालूम, हाँ, दो दिन के बाद वह भी मालूम हो जायेगा।

भूतनाथ—पहली दफे जब तुम ऐसे ही मकान के अन्दर कूदे थे, तो उसमे क्या देखा था और उसमे हँसने की क्या जरूरत पडी थी ?

देवीसिंह—अच्छा, उस समय जो कुछ हुआ था, सो मैं तुमसे बयान करता हूँ, क्योकि अब उसका हाल कहने मे कोई हर्ज नही है। जब मैं कमन्द लगाकर दीवार के ऊपर चढ गया तो ऊपर से दीवार बहुत चौडी मालूम हुई और इस सबब से बिना दीवार पर गये, भीतर की कोई चीज दिखाई नही देती थी, अत मैं लाचार होकर दीवार पर चढ गया और अन्दर झाँकने लगा। अन्दर की जमीन पाँच या चार हाथ नीची थी, जो किसी मकान की छत मालूम होती थी, मगर इस समय मैं अन्दाज से कह सकता हूँ कि वह वास्तव मे छत न थी बल्कि कपडे का चँदोवा तना हुआ या किसी शामियाने की छत थी, मगर उसमे से एक प्रकार की ऐसी भाप (वाष्प) निकल रही थी कि जिससे दिमाग मे नशे की-सी हालत पैदा होती थी और खूब हँसने को जी चाहता था, मगर पैरो मे कमजोरी मालूम होती थी और वह बढती जाती थी

भूतनाथ—(बात काटकर) अच्छा, यह तो बताओ कि अन्दर झाँकने से पहले ही कुछ नशा-सा चढ आया था या नही ?

देवीसिंह—कब ? दीवार पर चढने के बाद ?

भूतनाथ—हाँ, दीवार पर चढने के बाद और अन्दर झाँकने के पहले।

देवीसिंह—(कुछ सोचकर) नशा तो नहीं, मगर कुछ शिथिलता जरूर मालूम हुई थी।

भूतनाथ—खैर, अच्छा तब ?

देवीसिंह—अन्दर की तरफ जो छत थी, उस पर मैंने देखा कि किशोरी हाथ मे

वाले के दिमाग मे साँस के रास्ते से चढकर उसे वदहोश या पागल वना देता है, और दीवार के ऊपरी हिस्से पर भी कुछ-कुछ विजली का असर है, जो उस पर पैर रखने वाले के शरीर को शिथिल कर देता है या और भी किसी तरह का असर कर जाता है। मैं इस वात को खूब जानता हूँ कि लकडी पर विजली का असर कुछ भी नही होता, अर्थात् जिस तरह धातु, मिट्टी, जल, चमडा और शरीर मे विजली घुसकर पार निकल जाती है उस तरह लकडी को छेद कर विजली पार नही हो सकती अतएव मैने अपने पैर मे लकडी के बुरादे का थैला चढा लिया, वल्कि जूते के अन्दर भी लकडी की तख्ती रख दी, जिसमे दीवार से पैदा होने वाली विजली का मुझ पर असर न हो, इसके वाद वेहोशी का असर न होने के लिए दवा भी खा ली, इतना करने पर भी जव तक मैं मकान के अन्दर झाँकता रहा तव तक अपनी साँस को रोके रहा। मैंने अन्दर की तरफ चलती-फिरती और नाट्य करके हँसाने वाली पुतलियो को देखा और उस पीतल की चादर पर भी ध्यान दिया जो दीवार के ऊपर जड़ी थी और जिसके साथ कई तारें भी लगी हुई थी। यद्यपि उसका असल भेद मुझे मालूम न हुआ मगर मैंने अपने वचाव की सूरत निकाल ली।

इतना कहकर भूतनाथ ने खजर की नोक से अपने पायजामे मे एक छेद कर दिया और उसमे से लकडी का वुरादा निकाल कर सभी को दिखाया। भूतनाथ की वातें सुनकर महाराज वहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने भूतनाथ तथा और ऐयारो की तरफ देखकर कहा, "वास्तव मे भूतनाथ ने वहुत ने वहुत ठीक तर्कीव सोची। उस तिलिस्म के अन्दर जो कुछ भेद है हम वता देते हैं, इसके वाद तुम लोग उसके अन्दर जाकर देख लेना। जमानिया तिलिस्म के अन्दर से इन्द्रजीतसिंह एक कुत्ता लाए हैं जो देखने मे वहुत छोटा और सगमर्मर का वना हुआ मालूम होता है और वहुत-सी पीतल की वारीक तारें उस पर लिपटी हुई हैं। असल मे वह कुत्ता कई तरह के मसालो और दवाइयो से वना हुआ है। वह कुत्ता जव पानी में छोड दिया जाता है तो उसमे से मस्त और वदहोश कर देने वाली भाफ निकलती है और उसके साथ जो तारें लिपटी हुई हैं, उनमे विजली पैदा हो जाती है। दीवार के ऊपर जो पीतल की चादर विछाई गई है उसी के साथ वे तारें लगा दी गई हैं और उससे कुछ नीचे हटकर एक अच्छे तनाव का शामियाना तान दिया गया है, जिसमे कूदने वाले को चोट न लगे। इसके अतिरिक्त (भूतनाथ से) जिन्हे तुम पुतलियाँ कहते हो वे वास्तव मे पुतलियाँ नही है वल्कि जीते जागते आदमी हैं जो भेष वदलकर काम करते हैं और एक खास किस्म की पोशाक पहनने और दवा सूंघने के सवव उन सव पर उस विजली और वेहोशी का असर नही होता। इस खेल के दिखाने की तरकीव भी एक ताम्रपत्र पर लिखी हुई है जो उसी कुत्ते के साथ पाया गया था। इन्द्रजीत का वयान है कि जमानिया तिलिस्म मे इस तरह के और भी कुत्ते मौजूद हैं।

महाराज की वातें सुनकर सभी को वडा ताज्जुव हुआ, इसी तरह हमारे पाठक महाशय भी ताज्जुव करते और सोचते होगे कि यह तमाशा सम्भव है या असम्भव? मगर उन्हे समझ रखना चाहिए कि दुनिया मे कोई वात असम्भव नही है। जो अव असम्भव है वह पहले जमाने मे सम्भव थी और जो पहले जमाने मे असम्भव थी वह आज सम्भव हो रही है। 'दीवार कहकहा' वाली वात आप लोगो ने जरूर सुनी होगी।

उसके विषय मे भी यही कहा जाता है कि उस दीवार पर चढ कर दूसरी तरफ झाँकने वाला हँसता-हँसता दूसरी तरफ कूद पडता था और फिर उस आदमी का पता ही नहीं लगता कि क्या हुआ और कहाँ गया। इस मशहूर और ऐतिहासिक बात को कई आदमी झूठ समझते हैं मगर वास्तव मे ऐसा नही है। उसके विषय मे हम नीचे एक लेख की नकल करते है जो तारीख 14 मार्च सन् 1905 ई० के अवध अखबार मे छपा था—

"अगले जमाने मे फिलासफर (वैज्ञानिक) लोग अपनी बुद्धि से जो चीजें बना गये है अब तक यादगार है। उनकी छोटी-सी तारीफ यह है कि इस समय के लोग उनके कामो को समझ भी नही सकते। उनके ऊंचे हौसले और ऊँचे खयाल की निशानी चीन के हाते की दीवार है और हिन्दुस्तान मे भी ऐसी बहुत-सी चीजे हैं जिनका किस्सा आगे चल कर मैं लिखूंगा। इस समय 'दीवार कहकहा' पर लिखना चाहता हूँ।"

"मैंने सन् 1899 ई० मे 'अखबार आलम' मेरठ मे कुछ लिखा जिसकी मालिक अखबार ने बडी प्रशसा की थी, अब उसके कुछ और विशेष सबब खयाल मे आये हैं जो बयान करना चाहता हूँ।

"मुसलमानो के प्रथम राज्य मे उस समय के हाकिम ने इस दीवार की अवस्था जानने के लिए एक कमीशन भेजा था जिसके सफर का हाल दुनिया भर के अखबारो से प्रकट हुआ है।

"सक्षेप मे यह कि कई आदमी मरे परन्तु ठीक तौर पर नही मालूम हो सका कि उस दीवार के उस तरफ क्या हाल-चाल है।

"उसकी तारीफ इस तरह पर है कि उस दीवार को ऊँचाई पर कोई आदमी जा नही सकता और जो जाता है वह हँसते-हँसते दूसरी तरफ गिर जाता है, यदि गिरने से किसी तरह रोक लिया जाय तो जोर से हँसते-हंसते मर जाता है।

"यह एक तिलिस्म कहा जाता है या कोई और बात है, पर यदि सोचा जाय तो यह कहा जायगा कि अवश्य किसी बुद्धिमान आदमी ने हकीमी कायदे से इस विचित्र दीवार को बनाया है।

"यह दीवार अवश्य कीमियाई विद्या से मदद लेकर बनाई गई होगी।"

यह बात जो प्रसिद्ध है कि दीवार के उस तरफ जिन्न और परी रहते हैं जिनको देखकर मनुष्य पागल हो जाता है और उसी तरफ को दिल दे देता है, यह बात ठीक हो सकती है परन्तु हँसता क्यो है यह सोचने की बात है।

कश्मीर मे केशर के खेतो की भी यही तारीफ है। तो क्या उसकी सुगन्ध वहाँ जाकर एकत्र होती है, या वहाँ भी केशर के खेत हैं जिससे हँसी आती है? परन्तु ऐसा नही है क्योकि ऐसा होता तो यह भी मशहूर होता कि वहाँ केशर की महक आती है। नही-नही, कुछ और ही हिकमत है जैसा कि हिन्दुस्तान मे किसी शहर के मसजिद की मीनारो मे यह तारीफ थी कि ऊपर खडे होकर पानी का भरा गिलास हाथ मे लो तो वह आप ही आप छलकने लगता था। इसकी जाँच के लिए एक इजीनियर साहब ने उसे गिरवा दिया और फिर उसी जगह पर बनवाया परन्तु वह बात न रही। या आगरा मे ताजबीवी के रौजे के फव्वारो के नल जो मिट्टी के खरनैचे की तरह थे जैसे खपरैल

या बगीचे के नल होते है। सयोग से फव्वारो का एक नल टूट गया, उसकी मरम्मत की गई, तो दूसरी जगह से फट गया यहाँ तक कि तीस-चालीस वर्ष से बडे-बडे कारीगरो ने अपनी-अपनी कारीगरी दिखाई परन्तु सब व्यर्थ हुआ। अब तक तलाश है कि कोई उसे बना कर अपना नाम करे, मतलब यह कि 'दीवार कहकहा' भी ऐसी ही कारीगरी से बनी है जिसकी कीमियाई बनावट मेरी समझ मे यो आती है कि सतह जहाँ जमीन से आसमान तक कई हिस्सो मे अलग की गई है, लम्बाई का भाग कई हवाओ से मिला है जैसे आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, कार्बोलिकएसिड गैस, क्लोराइन इत्यादि। फिर इन हवाओ मे से और भी कई चीजे बनती है जैसा कि नाइट्रोजन का एक मोरक्कब दु- ऑक्साइड आफ नाइट्रोजन है (जिसको लाफिंग गैस भी कहते हैं)। बस दुनिया के उस सतह पर जहाँ लाफिंग गैस जिसको हिन्दी मे हँसाने वाली हवा कहते हैं पाई गई है, उस जगह पर यह दीवार सतह जमीन से इस ऊँचाई तक बनाई गई है। इस जगह पर बडी दलील यह होगी कि फिर बडी बनाने वाले आदमी कैसे उस जगह अपने होश मे रह सकें वे क्यो न हँसते-हँसते मर गये? और यही हल करना पहले मुझसे रह गया था जिसे अब उस नजीर से जो अमेरिका मे कायम हुई है हल करता हूँ, याने जिस तरह एक मकान कल के सहारे एक जगह से उठा कर दूसरी जगह रख दिया जाता है उसी तरह यह दीवार भी किसी नीची जगह मे इतनी ऊँची बनाकर कल से उठाकर उस जगह रख दी गई है जहाँ अब है। लाफिंग गैस मे यह असर है कि मनुष्य उसके सूँघने से हँसते-हँसते दम घुट कर मर जाता है।

अब यह बात रही कि आदमी उस तरफ क्यो गिर पडता है? इस खिचाव को भी हम समझे हुए है परन्तु उसकी केमिस्ट्री (कीमियाई) अभी हम न बतावेंगे, इसको फिर किसी समय पर कहेगे।

"दृष्टान्त के लिए यह नजीर लिख सकते हैं कि ग्वालियर की जमीन की यह तासीर है कि जो मनुष्य वहाँ जाता है, वही का हो जाता है, जैसे यह कहावत है कि एक काँवर वाला जिसके काँवर मे उसके माता-पिता थे वहाँ पहुँचा और काँवर उतार कर बोला कि तुम्हारा जहाँ जी चाहे जाओ, मुझको तुमसे कुछ वास्ता नही। उस तपस्वी के माता-पिता बुद्धिमान थे, उन्होने अपने प्यारे लडके की आरजू-मिन्नत करके कहा कि हमको चम्बल दरिया के पार उतार दो फिर हम चले जायँगे। लाचार होकर बडी हुज्जत से लडका उनको दरिया के पार ले गया, ज्योही उस पार हुआ, त्योही चाहा कि अपनी नादानी से लज्जित होकर माता-पिता के चरणो पर गिर कर माफी चाहे, परन्तु उसके माता-पिता ने कहा कि 'ऐ बेटा, तेरा कुछ कसूर नही, यह तासीर उस जमीन की थी।'

"दीवार कहकहा के उस तरफ भी ऐसा ही खिचाव है, जिसको हम ग्वालियर की हिस्टरी तैयार हो जाने पर यदि जीते रहे तो किसी समय परमेश्वर कृपा से आप लोगो पर जाहिर करेंगे, अभी तो हमको यह विश्वास है कि इतिहास ग्वालियर के बनाने वाले ग्रेटर साहब ही इस खिचाव के बारे मे कुछ बयान करेंगे। इतिहास-लेखक महाशय को चाहिए कि ग्वालियर की तारीफ मे इस किस्से की हकीकत जरूर बयान करें कि काँवर वाले ने काँवर क्यो रख दी थी और इसकी तारीख लिखे या इस किस्से को झूठ साबित

करें, क्योकि जो बात मशहूर होती है ग्रथकर्ता को उसके झूठ-सच के बारे मे जरूर कुछ लिखना चाहिए। तो भी ग्वालियर का इतिहास तैयार हो जाने पर हम तिलिस्म के बारे मे जो दीवार के उस तरफ है पूरा-पूरा हाल लिखेंगे।"

ग्वालियर की जमीन मे कई तरह की खासियत है जिनको हम उस हिस्टरी की समालोचना मे (यदि वह बातें हिस्टरी मे बच रही) जाहिर करेंगे। दीवार-कहकहा के सम्बन्ध मे जहाँ तक अपना खयाल था आप लोगो पर प्रकट किया, यानी दुनिया के उस हिस्से की सतह पर दीवार नही बनाई गई है जहाँ ऑक्साइड आफ नाइट्रोजन है बल्कि पहले दूसरी जगह बनाकर फिर कल के जरिये से वहाँ उठाकर रख दी गई है। यदि यह कहा जाय कि गैस सिर्फ उसी जगह थी और जगह क्यों नही है तो उसका सहज जवाब यह है कि जमीन से आसमान तक तलाश करो, किसी-न-किसी ऊँचाई पर तुमको गैस मिल ही जायगी। दूसरे यह कि कोई हवा सिर्फ खास जगह पर मिलती है, मसलन वन्द जगह की हलाक करने वाली वन्द हवा, जैसा कि अक्सर कुएँ मे आदमी वर्तते हैं और घवरा कर मर जाते हैं। यदि यह कहा जाय कि वहाँ हवा नही है तो यह नही हो सकता।

× × ×

पहले जमाने के आदमी अपनी कारीगरी का अच्छा-अच्छा नमूना छोड गये हैं— जैसे मिट्टी की मीनार, या नौशेरवानी बाग या जवाहरात के पेडो पर चिडियो का गाना या आगरे का ताज जिसकी तारीफ मे तारीख-तुराब के बुद्धिमान लेखक ने किसी लेखक को यह फिकरा लिखा है जिसका सक्षेप यह है कि "इसमे कुछ बुराई नही, यदि है तो यही है कि कोई बुराई नही।"देखिये आगरा मे बहुत-सी बादशाही समय की टूटी-फूटी इमारतें हैं जिनमें पानी दौडाने के नल (पाइप) वैसे ही मिट्टी के हैं जैसे कि आज-कल मिट्टी के गोल परनाले होते हैं, उन्ही नलो से दूर-दूर से पानी आता और नीचे से ऊपर कई मरातिम तक जाता था। इसी तरह से ताजगज के फव्वारो के नल भी थे तथा और भी इसी तरह के हैं जिनमे से एक टूटने पर लोहे के नल लगाये गये, जब उनसे काम न चला तो बडे-बडे भारी पत्थरो मे छेद करके लगाये गये, परन्तु बेफायदा हुआ।

उन फव्वारों की यह तारीफ है कि जो जितना ऊँचा जा रहा है उतनी ही ऊँचाई पर यहाँ से वहाँ तक बराबर धारे गिरती है। अब जो कही बनते हैं तो धार बराबर करने को ऊँची-नीची सतह पर फव्वारे लगाने पडते है।

× × ×

इसी तरह का तिलिस्म के विषय का एक लेख ता० 30 मार्च, सन् 1905 के अवध अखबार मे छपा था, उसका अनुवाद भी हम नीचे लिखते है—

"गुजरे हुए जमाने के काबिल-कदर यादगारो! तुमको याद करके हम कहाँ तक

रोयें और कहाँ तक विलाप करे ? जमाने के बेकदर हाथो की बदौलत तुम अब मिट गये और मिटते चले जाते हो, जमीन तुमको खा गई और उनको भी खा गई जो तुम्हारे जानने वाले थे, यहाँ तक कि तुम्हारा निशान, तो निशान तुम्हारा नाम तक भी मिट गया !

"खलीफा-बिन-उम्मीयाँ के जमाने में जिन दिनो अब्दुल मलिक बिनमर्दा की तरफ से उसका भाई अब्दुलअजीज बिनमर्दा मिश्र देश का गवर्नर था, एक दिन उसके सामने दफीना (जमीन के नीचे छिपा हुआ खजाना) का हाल बतलाने वाला कोई शख्स हाजिर हुआ। अब्दुल अजीज ने बात-बात ही मे उससे कहा, "किसी दफीना का हाल तो बताइये।" जिसके जवाब मे उसने एक टीले का नाम लेकर कहा कि उसमे खजाना है और इसकी परख इस तौर से हो सकती है कि वहाँ की थोडी जमीन खोदने पर सगमरमर और स्याह पत्थर का फर्श मिलेगा, जिसके नीचे फिर खोदने से एक खाली दरवाजा दिखाई देगा, उस दरवाजे के उखडने के बाद सोने का एक खम्भा नजर आवेगा, जिसके ऊपरी हिस्से पर एक मुर्ग बैठा होगा, उसकी आँखो मे जो सुर्ख मानिक जडे हैं वह इस कदर कीमती हैं कि सारी दुनिया उनके बदले और दाम मे काफी हो तो हो। उसके दोनो बाजू मानिक और पन्ने से सजे हुए हैं और सोने वाले खम्भे से सोने के पत्तरो का कुछ हिस्सा निकल कर उस मुर्ग के सिर पर छाया किये हुए है।

"यह ताज्जुब की बात सुन कर उस गवर्नर का कुछ ऐसा शौक बढा कि आमतौर पर हुक्म दे दिया कि वह जगह खोदी जाय और जो लोग उसको खोदेंगे और उसमें काम करेंगे, उनको हजारों रुपये दिये जायेंगे। वह जगह एक टीले पर थी, इस वजह से बहुत घेरा देकर खुदाई का काम शुरू हुआ। पता देने वाले ने जो सगमर्मर और स्याह पत्थर के फर्श वगैरह बताये थे, वे मिलते जाते थे और बताने वाले के कौल की तसदीक होती जाती थी और इसी वजह से अब्दुलअजीज का शौक बढता जाता था तथा खुदाई का काम मुस्तैदी के साथ होता जाता था कि यकायक मुर्ग का सिर जाहिर हुआ। सिर के जाहिर होते ही एकबारगी आँखो को चकाचौंध करने वाली तेज रोशनी उस खोदी हुई जगह से निकल कर फैल गई, मालूम हुआ कि बिजली तडप गई।

"यह गैरमामूली रोशनी मुर्ग की आँखो से निकल रही थी। दोनो आँखो मे बडे-बडे मानिक जटे हुए थे, जिनकी यह बिजली थी। और ज्यादा खोदे जाने पर उसके दोनो जडाऊ बाजू भी नजर आये और फिर उसके पाँव भी दिखाई दिये।

"उस मुर्ग वाले सोने के खम्भे के अलावा एक और खम्भा भी नजर आया जो एक इमारत की तरह पर था। यह इमारती खम्भा रंग-बिरंगे पत्थरो का बना हुआ था, जिसमे कई कमरे थे और उनकी छतें बिल्कुल छज्जेदार थी। उसके दरवाजो पर बडे और खूबसूरत आलो (ताको) की एक कतार थी, जिनमे तरह-तरह की रखी हुई मूरतें और बनी सूरतें खूबी के साथ अपनी शोभा दिखा रही थी, सोने और जवाहरात के जगह-जगह पर ढेर थे, जो छिपे हुए थे, ऊपर से चाँदी के पत्तर लगे थे और पत्तरो पर सोने की कीलें जडी थी। अब्दुलअजीज बिनमर्दा यह खबर पाते ही बडी चाह से उस मौके पर पहुँचा और जो आश्चर्यजनक तिलिस्म वहाँ जाहिर था, उसको बहुत दिलचस्पी के साथ

देर तक देखता रहा और तमाम खलकत की भीड-भाड थी, तमाशबीन अपने बढे हुए शौक मे एक-दूसरे पर गिरे पडते थे। एक जगह ढले हुए तांबे की सीढी ऊपर तक लगी हुई थी, उसको देखकर एक शख्स ऊपर जल्दी-जल्दी चढने लगा, हरएक तमाशबीन ताज्जुब के साथ वहाँ की हर चीज को देख रहा था।

"उस जीने की चौथी सीढी पर जब चढने वाले ने कदम रखा तो जीने की दाहिनी और बाईं तरफ से दो नगी तलवारें, अपना काट और तडप दिखाती हुई निकली। यद्यपि इस चढने वाले ने बचने के लिए हर तरह की कोशिश की। मगर दोनो निकलने वाली तलवारें प्राणघातक शत्रु थी, जिन्होने देखते-ही-देखते इस चढने वाले आदमी का काम तमाम कर दिया और फिर यह देखा गया कि इस शख्स के टुकडे नीचे कट कर गिरे। उनके गिरते ही वह खम्भा झोके ले-लेकर आप-से-आप हिलने लगा और उस पर से बैठा हुआ मुर्ग कुछ अजब शान से उडा कि देखने वाले अचम्भे मे होकर देखते रह गये।

जिस वक्त उसने उडने के लिए अपने बाजू (डैने) फडफडाये तो अद्भुत सुरीली और दिल लुभाने वाली आवाजें उससे निकली—लोग उन्हें सुनकर दग रह गये और ये आवाजे हवा मे गूंज कर दूर-दूर तक फैल गईं।

उस मुर्ग के उडते ही एक किस्म की गर्म हवा चली जिसकी वजह से जिस कदर तमाशबीन आसपास मे खडे थे वे सब-के-सब उस तिलिस्मी गार (खोह) मे गिर पडे। उस गडहे के अन्दर उस वक्त खोदने वोले बेलदार, मिट्टी को बाहर फेंकने वाले मजदूर और मेट वगैरह, जिनकी तादाद एक हजार कही जाती है, मौजूद थे। जो सब-के-सब बेचारे फौरन मर गये। अब्दुलअजीज ने यह हाल देखकर एक चीख मारी और कहा, "यह भी अजीब दुखदाई बात हुई! इससे क्या उम्मीद रखनी चाहिए!"

इसके बाद और मजदूर उसमे लगा दिये गए। जिस कदर मिट्टी वगैरह निकली थी, वह सब-की-सब अन्दर डाल दी गई। वह मर जाने वाले तमाशबीन भी सब उसी के अन्दर तोप दिये गए और आखिर मे वह तिलिस्मी जगह अच्छा-खासा एक 'कब्रिस्तान' बन गया। गये थे दफीना निकालने के लिए और इतनी जानें दफन कर आये, खर्च घाटे मे रहा।

8

तीसरे दिन पुन दरबार हुआ और कैदी लोग लाकर हाजिर किये गए। महाराज सुरेन्द्रसिंह का लिखाया हुआ फैसला सभी के सामने तेजसिंह ने पढ कर सुनाया। सुनते ही कम्बख्त दारोगा जयपाल, हरनामसिंह वगैरह रोने, कलपने, चिल्लाने और महाराज से कहने लगे कि इसी जगह हम लोगो का सिर काट लिया जाय या जो चाहे महाराज सजा दे मगर हम लोगों को गोपालसिंह के हवाले न करें।

कैदियो ने वहुत सिर पीटा, मगर उनकी कुछ न सुनी गई। जो कुछ महाराज ने फैसला लिखाया था उसी मुताविक कार्रवाई की गई और इस फैसले को सभी ने पसन्द किया।

इन सब कामो से छुट्टी पाने के वाद एक वहुत वडा जलसा किया गया और कई दिनो तक खुशी मनाने के वाद सव कोई विदा कर दिये गए। राजा गोपालसिंह कैदियो को साथ लेकर जमानिया चले गए. लक्ष्मीदेवी उनके साथ गई और तेजसिंह तथा और भी वहुत से आदमी महाराज की तरफ से उनको साथ पहुँचाने के लिए गए। जब वे लौट आये तव औरतो को साथ लेकर राजा वीरेन्द्रसिंह इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह वगैरह पुन तिलिस्म मे गए और उन्हे तिलिस्म की खूव सैर कराई। कुछ दिन वाद रोहतासगढ के तहखाने की भी उन लोगो को सैर कराई और फिर सब कोई हँसी-खुशी से दिन विताने लगे।

प्रेमी पाठक महाशय, अव इस उपन्यास मे मुझे सिवाय इसके और कुछ कहना नहीं है कि भूतनाथ ने प्रतिज्ञानुसार अपनी जीवनी लिख कर दरबार मे पेश की और महाराज ने पढकर उसे खजाने मे रख दिया। इस उपन्यास का भूतनाथ की खास जीवनी से कोई सम्वन्ध न था इसलिए इसमे वह जीवनी नत्थी न की गई, हाँ खास-खास भेद जो भूतनाथ से सम्वन्ध रखते थे खोल दिये गए, तथापि भूतनाथ की जीवनी जिसे चन्द्रकान्ता सन्तति का उपसहार भाग भी कह सकेंगे स्वतन्त्र रूप से लिख कर अपने प्रेमी पाठको की नजर करूँगा, मगर इसके वदले मे अपने प्रेमी पाठको से इतना जरूर कहूँगा कि इस उपन्यास मे जो कुछ भूल चूक रह गई हो और जो भेद रह गए हो वह मुझे अवश्य वतावें जिसमे 'भूतनाथ की जीवनी' लिखते समय उन पर ध्यान रहे, क्योकि इतने वडे उपन्यास मे मेरे ऐसे अनजान आदमी से किसी भी तरह की त्रुटि का रह जाना कोई आश्चर्य नही है।

प्रिय पाठक महाशय, अव चन्द्रकान्ता सन्तति की लेख प्रणाली के विषय मे भी कुछ कहने की इच्छा होती है।

जिस समय मैंने 'चन्द्रकान्ता' लिखनी आरम्भ की थी उस समय कविवर प्रताप-नारायण मिश्र और पण्डितवर अम्बिकादत्त व्यास जैसे धुरधर किन्तु अनुद्धत सुकवि और सुलेखक विद्यमान थे, तथा राजा शिवप्रसाद, राजा लक्ष्मणसिंह जैसे सुप्रतिष्ठित पुरुष हिन्दी की सेवा करने मे अपना गौरव समझते थे, परन्तु अव न वैसे मार्मिक कवि हैं और न वैसे सुलेखक। उस समय हिन्दी के लेखक थे परन्तु ग्राहक न थे, इस समय ग्राहक हैं पर वैसे लेखक नहीं हैं। मेरे इस कथन का यह मतलव नही है कि वर्तमान समय के साहित्यसेवी प्रतिष्ठा के योग्य नही है, वल्कि यह मतलव है कि जो स्वर्गीय सज्जन अपनी लेखनी से हिन्दी के आदि युग मे हमे ज्ञान दे गए है वे हमारी अपेक्षा वहुत वढ-चढ कर थे। उनकी लेख प्रणाली मे चाहे भेद रहा हो, परन्तु उन सव का लक्ष्य यही था कि इस भारत भूमि मे किसी तरह मातृ-भाषा का एकाधिपत्य हो, लेकिन यह कोई नियम की वात नही है कि वैसे लोगो से कुछ भूल हो ही नहीं उनसे भूल हुई तो यही कि प्रचलित शब्दो पर उन्होने अधिक ध्यान नही दिया। राजा शिवप्रसादजी के राजनीति के विचार

चाहे कैसे ही रहे हो पर सामाजिक विचार उनके बहुत ही प्राञ्जल थे और वे समयानुकूल काम करना खूब जानते थे, विशेषत जिस ढग की हिन्दी वे लिख गए हैं उसी से वर्तमान मे हिन्दी का रास्ता कुछ साफ हुआ है ।

चाहे कोई हिन्दू हो चाहे जैन या बौद्ध हो और चाहे आर्य समाजी या धर्म-समाजी ही क्यो न हो परन्तु जिन सज्जनो के माननीय अवतारो और पूर्वजो ने इस पुण्य भूमि का अपने आविर्भाव से गौरव बढाया है उनमे ऐसा अभागा कौन होगा जो पुण्यता और मधुरता-युक्त सस्कृत भाषा के शब्दो का प्रचुर प्रचार न चाहेगा ? मेरे विचार मे, किसी विवेकी भारत सन्तान के विषय मे केवल यह देखकर कि वह विदेशी भाषा के शब्दो का प्रसार कर रहा है यह गढन्त कर लेना कि वह देववाणी के पवित्र शब्दो का विरोधी है भ्रम ही नही किन्तु अन्याय भी है । देखना यह चाहिए कि ऐसा करने से उसका मतलब क्या है ? भारतवर्ष मे आठ सौ वर्ष तक विदेशी यवनो का राज्य रहा है इसलिए फारसी-अरबी के शब्द हिन्दू समाज मे "न पठेत् यावनी भाषा" की दीवार लाँघ कर उसी प्रकार आ घुसे जिस प्रकार हिमालय के उन्नत मस्तक को लाँघकर वे स्वय यहा आ गए, यहाँ तक कि महात्मा तुलसीदास जी जैसे भगवद्भक्त कवियो को भी "गरीब-निवाज" आदि शब्दो का बर्ताव दिल खोल कर करना पडा ।

आठ सौ वर्ष के कुसस्कार को जो गिनती के दिनो मे दूर करना चाहते है, उनके उत्साह और साहस की प्रशसा करने पर भी हम यह कहने के लिए मजबूर है कि वे अपने बहुमूल्य समय का सदुपयोग नही करते बल्कि जो कुछ वे कर सकते थे, उससे भी दूर हटते है । यदि ईश्वरचन्द्र विद्यासागर सीधे-सादे शब्दो से बँगला मे काम न लेते तो उत्तर काल के लेखको को सस्कृत शब्द के बाहुल्य प्रचार का अवसर न मिलता और यदि राजा 'शिवप्रसादी हिन्दी' प्रकट न होती तो सरकारी पाठशालाओ मे हिन्दी के चन्द्रमा की चाँदनी मुश्किल से पहुँचती । मेरे बहुत से मित्र हिन्दुओ की अकृतज्ञता का यो वर्णन करते है कि उन्होने हरिश्चन्द्रजी जैसे देश हितैषी पुरुष की उत्तम-उत्तम पुस्तके नही खरीदी, पर मै कहता हूँ कि यदि बाबू हरिश्चन्द्र अपनी भाषा को थोडा सरल करते तो हमारे भाइयो को अपने समाज पर कलक लगाने की आवश्यकता न पडती और स्वाभाविक शब्दो के मेल से हिन्दी की पैसिजर भी मेल बन जाती । प्रवाह के विरुद्ध चलकर यदि कोई कृतकार्य हो तो नि सन्देह उसकी बहादुरी है, परन्तु बडे-बडे दार्शनिक पडितो ने इसको असम्भव ठहराया है । सारसुधानिधि और कविवचनसुधा की भाषा यद्यपि भावुक-जनो के लिए आदर की वस्तु थी, परन्तु समय के उपयोगी न थी । हमारे 'सुदर्शन' की लेख-प्रणाली को हिन्दी के धुरन्धर लेखको और विद्वानो ने प्रशसा के योग्य ठहराया है, परन्तु साधारणजन उससे कितना लाभ उठा सकते है यह सोचने की बात है । यदि महा-कवि भवभूति के समान किसी भविष्य पुरुष की आशा ही पर ग्रन्थकारो और लेखको को यत्न करना चाहिए, तब तो मैं सुदर्शन के सम्पादक पण्डित माधवप्रसाद मिश्र को भी भविष्य की आशा पर बधाई देता हूँ, पर यदि ग्रन्थकारो को भविष्य की अपेक्षा वर्तमान से अधिक सम्बन्ध है तो नि सन्देह इस विषय मे मुझे आपत्ति है ।

किसी दार्शनिक ग्रथ या पत्र की भाषा के लिए यदि किसी बडे कोष को टटोलना

एक चाबुक लिए खडी है और उसके सामने की तरफ कुछ दूर हटकर कई मोटे-ताजे आदमी खडे हैं जो किशोरी को पकड कर बाँधना चाहते हैं, मगर वह किसी के काबू मे नही आती। ताल ठोक-ठोककर लोग उसकी तरफ बढते हैं मगर वह कोडा मार-मारकर हटा देती है। ऐसी अवस्था मे उन आदमियो की मुद्रा (जो किशोरी को पकडना चाहते थे ऐसी खराब होती थी कि हँसी रोके नही रुकती, तथा उस भाप की बदौलत आया हुआ नशा हँसी को और भी बढा देता था। पैरो मे पीछे हटने की ताकत न थी, मगर भीतर की तरफ कूद पडने मे किसी तरह का हर्ज भी नही मालूम पडता था क्योकि जमीन ज्यादा नी। न थी, और इसके अतिरिक्त किशोरी को बचाना भी बहुत ही जरूरी था, अत. मैं अन्दर की तरफ कूद पडा, बल्कि यो कहो कि ढुलक पडा और उसके बाद तन-बदन की सुध न रही। मैं नही जानता कि उसके बाद क्या हुआ और क्योकर हुआ। हाँ जब मैं होश मे आया तो अपने को कैदखाने मे पाया।

भूतनाथ—अच्छा तो इससे तुमने क्या नतीजा निकाला ?

देवीसिंह—कुछ भी नही, मैंने केवल इतना ही खयाल किया कि किसी दवा के नशे से दिमाग खराब हो जाता है।

भूतनाथ—केवल इतना ही नही है, मैंने इससे कुछ ज्यादा खयाल किया है, खैर कोई चिन्ता नही कल देखा जायेगा, सौ मे नब्बे दर्जे तो मैं जरूर बाहरी रास्ते ही से लौट आऊँगा। यहाँ उस तिलिस्मी मकान के अन्दर लोगो ने जो कुछ देखा है वह भी करीब-करीब वैसा ही है जैसा तुमने देखा था। तुमने किशोरी को देखा और इन लोगो ने किसी दूसरी औरत को देखा, बात एक ही है।

इसी तरह की बाते करते हुए दोनो ऐयार कुछ देर तक सुबह की हवा खाते रहे, और इसके बाद मकान की तरफ लौटे। जब महाराज के पास गये तो पुन सुनने मे आया कि ऐयारो को तिलिस्मी मकान पर चढने की आज्ञा हुई है।

7

दिन अनुमान दो घटे के चढ चुका है। महाराज सुरेन्द्रसिंह, राजा वीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह वगैरह खिडकियो मे बैठे उस तिलिस्मी मकान की तरफ देख रहे है, जिसके अन्दर लोग हँसते-हँसते कूद पडते है। उस मकान के नीचे बहुत-सी कुर्सियाँ रखी हुई हैं जिन पर हमारे ऐयार तथा और भी कई प्रतिष्ठित आदमी बैठे हुए हैं और सब लोग इस बात का इन्तजार कर रहे हैं कि इस मकान पर बारी-बारी से ऐयार लोग चढे और अपनी अक्ल का नमूना दिखावें।

और ऐयारो की पोशाक तो मामूली ढग की है, मगर भूतनाथ उस समय कुछ अजब ढग की पोशाक पहने हुए है। सिवाय चेहरे के उनका कोई अग खुला हुआ नही है। ढीला-ढीला मोटा पायजामा और गँवारू रूईदार चपकन के अतिरिक्त बहुत बड़ा काला मुँडासा बाँधे हुए है, जिसका पिछला सिरा पीठ पर से होता हुआ जमीन तक लटक

रहा है। दोनो हाथ वल्कि नाखून तक चपकन की आस्तीन मे घुसा हुआ है और पैर के जूते की भी विचित्र सूरत हो रही है। भूतनाथ का मतलब चाहे कुछ भी क्यो न हो, मगर लोग इसे केवल मसखरापन ही समझ रहे है।

सवके पहले पन्नालाल उस मकान की दीवार पर चढ गये और अन्दर की तरफ झाँककर देखने लगे, मगर पाँच-सात पल से ज्यादा अपने को न वचा सके और हँसते हुए अन्दर की तरफ कूद पडे।

इसके वाद पडित वद्रीनाथ, रामनारायण और चुन्नीलाल ने कोशिश की, मगर ये तीनो भी लौटकर न आ सके और पन्नालाल की तरह हँसते हुए अन्दर कूद पडे।

इसके वाद और ऐयारो ने भी उद्योग किया, मगर कोई सफल-मनोरथ न हुआ। यहाँ तक कि जीतसिंह, तेजसिंह, भैरोसिंह और तारासिंह को छोडकर सभी ग्यारह वारी-वारी से जाकर मकान के अन्दर कूद पडे, केवल भूतनाथ रह गया जिसने सवके आखीर में चढने का इरादा कर लिया था।

भूतनाथ मस्तानी चाल से चलता हुआ सीढी के पास गया और धीरे-धीरे ऊपर चढने लगा। देखते ही देखते वह दीवार के ऊपर जा पहुँचा। उस पर खडे होकर एक दफे चारो ओर मैदान की तरफ देखा और इसके वाद मकान के अन्दर की तरफ झांका। यहाँ जो कुछ था उसे देखने के वाद उसने अपना चेहरा उस तरफ किया, जिधर खिडकियो मे वैठे हुए महाराज और राजा वीरेन्द्रसिंह वगैरह वडे शौक से उसकी कैफियत देख रहे थे। भूतनाथ ने हाथ उठाकर तीन दफे महाराज को सलाम किया और जोर से पुकार कर कहा, "मैं इसके अन्दर झांक कर देख चुका और वडी देर तक दीवार पर खडा भी रहा, अव हुक्म हो तो नीचे उतर जाऊँ।"

महाराज ने नीचे उतर आने का इशारा किया और भूतनाथ मुस्कुराता हुआ, मकान के नीचे उतर आया, इस वीच मे और ऐयार लोग भी जो भूतनाथ के पहले मकान के अन्दर कूद चुके थे, घूमते हुए वडे तिलिस्सी मकान के अन्दर से आ पहुँचे और भूतनाथ की कैफियत देख-सुनकर ताज्जुव करने लगे।

भूतनाथ के उतर आने के वाद सव ऐयार मिल-जुलकर महाराज के पास गये और महाराज ने प्रसन्न होकर भूतनाथ को दो लाख रुपए इनाम देने का हुक्म दिया। सभी ऐयारो को इस वात का ताज्जुव था कि उस तिलिस्म का असर भूतनाथ पर क्यो नही हुआ और वह कैसे सभी को वेवकूफ बनाकर आप बुद्धिमान वन वैठा और दो लाख का इनाम भी पा गया।

जीतसिंह—भूतनाथ, यह तुमने क्या किया कौन-सी तरकीव निकाली जिससे इस तिलिस्मी हवा का तुम पर कुछ भी असर न हुआ?

भूतनाथ—वात मामूली है, जव तक मैं नही कहता तभी तक आश्चर्य मालूम पडता है।

तेजसिंह—आखिर कुछ कहो भी तो सही।

भूतनाथ—मेरे दिल को इस वात का निश्चय हो गया था कि इस मकान के अन्दर से किसी तरह की हवा, भाफ या धुआँ ऊपर की तरफ जरूर उठता है जो झांकदर देखने

पडे, तो कुछ परवाह नहीं, परन्तु साधारण विषयों की भाषा के लिए भी कोषों की खोज करनी पड़े तो निःसन्देह दोष की बात है। मेरी हिन्दी किस श्रेणी की हिन्दी है इसका निर्धारण मैं नहीं करता परन्तु मैं यह जानता हूँ कि इसके पढ़ने के लिए कोष की तलाश नहीं करनी पड़ती। चन्द्रकान्ता के आरम्भ के समय मुझे यह विश्वास न था कि इसका इतना अधिक प्रचार होगा, यह मनोविनोद के लिए लिखी गई थी, पर पीछे लोगों का अनुराग देखकर मेरा भी अनुराग हो गया और मैंने अपने उन विचारों को जिनको मैं अभी तक प्रकाश नहीं कर सका था, फैलाने के लिए इस पुस्तक को द्वार बनाया और सरल भाषा में उन्हीं मामूली बातों को लिखा जिससे मैं उन होनहार नवयुवकों का प्रियपात्र बन जाऊँ, जिसके हाथ में भारत का भविष्य सौंपकर हमें इस असार संसार से विदा होना है। मुझे इस बात से बड़ा हर्ष है कि मैं इस विषय में सफल हुआ और मुझे पाठकों की अच्छी श्रेणी मिल गई। यह बात बहुत से सज्जनों पर प्रकट है कि 'चन्द्रकान्ता' पढ़ने के लिए बहुत से पुरुष नागरी की वर्णमाला सीखते हैं और जिनको कभी हिन्दी सीखना न था उन लोगों ने भी इसके लिए सीखी।

हिन्दी के हितैषियों में दो प्रकार के सज्जन हैं: एक तो वे जिनका विचार यह है कि चाहे अक्षर फारसी क्यों न हों पर भाषा विशुद्ध संस्कृत मिश्रित होनी चाहिए और दूसरे वे जो यह चाहते हैं कि चाहे भाषा में फारसी के शब्द मिले भी हों पर अक्षर नागरी होने चाहिए। पहले मैं पंजाब के आर्यसमाजियों और धर्मसभा वालों को मान लेता हूँ, जिनके लेखों में वर्णमाला के सिवाय फारसी, अरबी को कुछ भी सहारा नहीं, सब-कुछ संस्कृत का है, और दूसरे पक्ष में मैं अपने को ठहरा लेता हूँ, जो इनके विपरीत है। मैं इस बात को भी स्वीकार करता हूँ कि जिस प्रकार फारसी वर्णमाला उर्दू का शरीर और अरबी, फारसी के उपयुक्त शब्द उसके जीवन हैं, ठीक उसी प्रकार नागरी वर्णमाला हिन्दी का शरीर और संस्कृत के उपयुक्त शब्द उसके प्राण कहे जा सकते हैं। यदि यह देश यवनों के अधिकार में न हुआ होता, और यदि कायस्थादि हिन्दू जातियों में उर्दू भाषा का प्रेम अस्थिमज्जागत न हो गया होता तो हिन्दी का शरीर और जीवन पृथक दिखलाई देता। उसी प्रकार हमारे ग्रंथों की सजीव उत्पत्ति होती जिस प्रकार हिज्र शायरों की होती है। शरीर में यदि आत्मा न हो तो वह बेकार है और यदि आत्मा को उपयुक्त शरीर न मिल कर पशु पक्षी आदि शरीर मिल जावें, तो भी वह निरर्थक ही है, इसलिए शरीर बनाकर फिर उसमें आत्मदेव की स्थापना करना ही न्याययुक्त और लाभप्रद है। 'चन्द्रकान्ता' और 'सन्तति' में यद्यपि इस बात का पता नहीं लगेगा कि कब और कहाँ भाषा का परिवर्तन हो गया, परन्तु उसके आरम्भ और अन्त में आप ठीक वैसा ही परिवर्तन पावेंगे, जैसा बालक और वृद्ध में। एक दम से बहुत से शब्दों का प्रचार [illegible]
था कि उसमें मामूली शब्द हम उन [illegible] लोगों को याद [illegible]
[illegible] भी है [illegible] था। मैंने इस [illegible]
भी बोलचाल उर्दू के शब्दों को अपनी विशुद्ध हिन्दी में [illegible]
[illegible] । इस प्रकार [illegible] प्रचार से
[illegible] मनुष्य [illegible]

नही है। जो हो भाषा के विषय मे हमारा वक्तव्य यही है कि वह सरल हो और नागरी वाणी मे हो क्योकि जिस भाषा के अक्षर होते है, उनका खिचाव उन्ही मूल भाषाओ की ओर होता है जिससे उनकी उत्पत्ति हुई है।

भाषा के सिवाय दूसरी बात मुझे भाव के विषय मे कहनी है। मेरे कई मित्र आक्षेप करते है कि मुझे देश-हितपूर्ण और धर्मभावमय कोई ग्रन्थ लिखना उचित था, जिससे मेरी प्रसरणशील पुस्तको के कारण समाज का बहुत-कुछ उपकार व सुधार हो जाता। बात बहुत ठीक है, परन्तु एक अप्रसिद्ध ग्रथकार की पुस्तक को कौन पढता ? यदि मैं चन्द्रकान्ता और सन्तति को न लिखकर अपने मित्रो से भी दो-चार बातें हिन्दी के विषय मे कहना चाहता तो कदाचित् वे भी सुनना पसन्द नही करते। गम्भीर विषय के लिए जैसे एक विशेष भाषा का प्रयोजन होता है वैसे ही विशेष पुरुष का भी। भारतवर्ष मे विशेषता की अधिकता न देखकर मैंने साधारण भाषा मे साधारण बाते लिखना ही आवश्यक समझा। ससार मे ऐसे भी लोग हुए होगे जिन्होने सरल और भावमय एक ही पुस्तक लिखकर लोगो का चित्त अपनी ओर खीच लिया हो पर वैसा कठिन काम मेरे ऐसे के करने के योग्य न था। तथापि पात्रो की चाल-चलन दिखाने मे जहाँ तक हो सका इसका ध्यान रखा गया है। सब पात्र यथासमय सन्ध्या-तर्पण करते है और अवसर पडने पर पूजा प्रकार भी वीरेन्द्रसिह आदि के वर्णन में जगह-जगह दिखाई देता है।

कुछ दिनो की बात है कि मेरे कई मित्रो ने सवाद-पत्रो मे इस विषय का आदोलन उठाया था कि इनके कथानक सम्भव है या असम्भव। मैं नही समझता कि यह बात क्यो बनाई और बढाई गई ! जिस प्रकार पचतन्त्र-हितोपदेश आदि ग्रन्थ बालको की शिक्षा के लिए लिखे गये, उसी प्रकार यह लोगो के मनोविनोद के लिए। पर यह सम्भव है या असम्भव इस विषय मे कोई यह समझे कि 'चन्द्रकान्ता' और 'वीरेन्द्रसिंह' इत्यादि पात्र और उनके विचित्र स्थानादि सब ऐतिहासिक है तो बडी भारी भूल है। कल्पना का मैदान विस्तृत है और उसका यह एक छोटा-सा नमूना है। रही सम्भव असभव की बात अर्थात् कौन-सी बात हो सकती है और कौन नही हो सकती ! इसका विचार प्रत्येक मनुष्य की योग्यता और देश काल पात्र से सम्बन्ध रखता है। कभी ऐसा समय था कि यहाँ के आकाश मे विमान उडते थे, एक एक वीर पुरुष के तीरो मे यह सामर्थ्य थी कि क्षणमात्र मे सहस्रो मनुष्यो का सहार हो जाता था, पर अब वह बातें खाली पौराणिक कथा समझी जाती है पर दो सौ वर्ष पहले जो बाते असम्भव थी आजकल विज्ञान के सहारे वे सब सम्भव हो रही हैं। रेल, तार, बिजली आदि के कार्यो को पहले कौन मान सकता था ? और फिर यह भी है कि साधारण लोगो की दृष्टि मे जो असम्भव है कवियो की दृष्टि मे भी वह [illegible] कोई नियम की बात नहीं है। सस्कृत साहित्य के सर्वोत्तम उपन्यास

भूतनाथ—[illegible] युवती की युवती ही रही पर उसके नायक के तीन जन्म हो गये

पढता है। प इसको दोपावह न समझकर गुणधायक ही समझेगा। चन्द

तेजसिह—आ[illegible] लिखी गई है, वे इसलिए नही कि लोग उनकी सचाई-झूट

भूतनाथ—मेरे [illegible] कि उसका पाठ कुतूहल वर्द्धक हो।

ने [illegible] तरह की रचा, [illegible] 'सिंहासन' 'बत्तीसी' 'वैतालपचीसी' आदि कहानियां

विश्राम काल मे रुचि से पढते थे फिर 'चहारदरवेश' और 'अलिफलैला' के किस्सो का समय आया, अब इस ढग के उपन्यासो का समय है। अब भी वह समय दूर है, जब लोग विना किसी प्रकार की न्यूनाधिकता के ऐतिहासिक पुस्तको को रुचि से पढेंगे। जब वह समय आवेगा उस समय 'कथासरित्सागर' के समान 'चन्द्रकान्ता' बतलावेगी कि एक वह भी समय था, जब इसी प्रकार के ग्रन्थो से ही वीर प्रसू भारत भूमि की सन्तान का मनोविनोद होता था। भगवान उस समय को शीघ्र लावे।